CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

9.1

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओ३म्

वेद-विशेषांक

भारतोदयः संस्कृत मासिक पत्र, दिसम्बर, १९८९

[शिक्षा-मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से प्रकाशित]

सम्पादक

डॉ० हरिगोपाल शास्त्री, प्राचार्य

सह-सम्पादक

केशवप्रसाद उपाध्याय, साहित्याचार्य

गुरुकुल महाविद्यालय

ज्वालापुर (हरिद्वार)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

VEDA VISHESHANKA

(Special Veda Issue of BHARATODAYA)

सन् १९८६ ई०

प्रकाशक–
गुरुकुल महाविद्यालय,
ज्वालापुर (हरिद्वार)

मुद्रक:–
प्रीतम प्रिन्टिग प्रेस,
ज्वालापुर फोनः नं. 99
(हरिद्वार)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थापित १९०८ ॥ ओ३म् ॥ तार–सार्वदेशिक (Sarvdeshik)
रजिस्टर्ड १९१४ फोन : 274771

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA
(*International Aryan League*)

महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान
नई दिल्ली–११०००२

संख्या .... दिनांक 19-11-86

प्रिय श्री हरिगोपाल जी शास्त्री,
सप्रेम नमस्ते ।

आपके पत्र से यह जानकर प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल महाविद्यालय की प्रमुख संस्कृत पत्रिका भारतोदय का आगामी दिसम्बर का अंक वेद विशेषांक के रूप में प्रकाशित करने का आयोजन किया जा रहा है।

वर्तमान भौतिक युग में मानव जाति वेद प्रतिपादित ज्ञान के आलोक से अनभिज्ञ होती जा रही है और देश में तुष्टीकरण की राजनीति हमारी प्राचीनतम संस्कृति के इस आधार स्तम्भ संस्कृत भाषा को उचित सम्मान और स्थान देने में बाधा उपस्थित कर रही है।

ऐसे अवसर पर हमें संस्कृत के प्रचार प्रसार की बहुत बड़ी आवश्यकता है। मुझे आशा है आर्य जगत् की यह प्रमुख संस्कृत पत्रिका इस उद्देश्य की सफलता में सहायक होगी।

मैं भारतोदय के वेद विशेषांक के प्रकाशन की सफलता की कामना करता हूँ।

भवदीय :

(स्वामी आनन्दबोध सरस्वती)
प्रधान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वीर बहादुर सिंह

मुख्यमन्त्री, उत्तर प्रदेश
सचिवालय-एनेक्सी, लखनऊ

दिनांकः ६ दिसम्बर, ८६

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के मुखपत्रम् 'भारतोदयः" का वेद विशेषांक प्रकाशित होने जा रहा है।

वेदों को देव वाणी कहा गया है और इनमें सभी प्रकार के सांसारिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान का अक्षय भण्डार है। मुझे आशा है इस विशेषांक के प्रकाशन से पाठकों को ज्ञान का आलोक मिलेगा तथा उनमें आध्यात्मिक चेतना का भी विकास होगा।

विशेषांक की सफलता के लिये मेरी शुभकामनाएं।

(वीर बहादुर सिंह)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्य मंत्री
जल, भूतल परिवहन
परिवहन मंत्रालय, भारत
नई दिल्ली
MINISTER OF STATE
FOR SURFACE TRANSPORT
MINISTRY OF TRANSPORT INDIA
NEW DELHI

सं०-एम.एस.टी/आर/१२/१९८९

९ दिसम्बर, १९८९

प्रिय डा० हरिगोपाल जी,

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि प्रसिद्ध मासिक पत्र "भारतोदय" दिसम्बर में वेद विशेषांक प्रकाशित करने जा रहा है। वास्तव में हमारी संस्कृति तभी पूर्ण है जब हम अपने वेदों में दी हुई शिक्षाओं को प्राप्त करें तथा उनका अनुसरण भी करें। इस विशेषांक की सफलता के लिए मेरी शुभकामनाएं ग्रहण करने का कष्ट करें।

सादर,

आपका,

(राजेश पायलट)

डा० हरिगोपाल शास्त्री,
प्रधान सम्पादक,
प्रधानाचार्य गुरुकुल महाविद्यालय,
ज्वालापुर, सहारनपुर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

D.O. No.....................

श्रीमती प्रसन्नी देवी

कृषि मन्त्री
हरियाणा सरकार
सचिवालय, चण्डीगढ
दिनांक १८-१२-८६

सन्देश

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ है कि "भारतोदय" मासिक पत्रिका का इस मास 'वेद-विशेषांक' निकाला जा रहा है।

यह पत्र पिछले लगभग ७० वर्षों से लोगों को आध्यात्मिक शिक्षा देकर एक उपयोगी कार्य कर रहा है। आज के युग में ऐसे समाचार पत्रों की अत्यन्त आवश्यकता है। मुझे आशा है कि इस विशेषांक में उच्च कोटि के लेखकों के लेख छाप कर जनता तक पहुंचाए जाएंगे जो उनके लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होंगे।

मैं विशेषांक की सफलता के लिए शुभकामनाएं भेजती हूँ।

(प्रसन्नी देवी)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थापित १६०८ ॥ ओ३म् ॥ तार-सार्वदेशिक (Sarvdeshik)
रजिस्टर्ड १६१४ फोन : 274771

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA

(*International Aryan League*)

महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान
नई दिल्ली-११०००२

संख्या............ दिनांक 19-11-86

डा० हरिगोपाल जी शास्त्री
प्रधान संपादक-भारतोदयः
गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

सप्रेम नमस्ते ।

आपका पत्र प्राप्त हुआ । यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल महाविद्यालय की प्रमुख मासिक संस्कृत पत्रिका भारतोदय का दिसम्बर मास का अंक वेद विशेषांक के रूप में प्रकाशित हो रहा है ।

मैं उक्त विशेषांक के प्रकाशन की सफलता की कामना करता हूँ ।

भवदीय

(सच्चिदानन्द शास्त्री)
मंत्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्ररोचना

–डॉ० गौरीशङ्कर आचार्य
प्रधान-सभा गु० म० वि०, ज्वालापुर
एवं भूतपूर्व शिक्षामन्त्री–राजस्थान

'भारतोदय' संस्कृत मासिक पत्र के वेद–विशेषाङ्क के प्रकाशनावसर पर गुरुकुल ज्वालापुर बड़े आनन्द का अनुभव कर रहा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्ष वैदिक परम्परा को अक्षुण्ण रखने के लिए गुरुकुलों की परिकल्पना की थी। वेदों का पवित्रघोष जगतीतल को पवित्र करके उसे प्राचीन गौरवमय स्थान दिला सके इसी लक्ष्य को समक्ष रखकर इनकी परम्परा सुरक्षित रखी गई।

स्वनामधन्य तपोनिष्ठ स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती ने इस भावना से अनुप्राणित होकर १९०८ ई० में वैशाख, अक्षय तृतीया संवत् १९६४ वि० को गुरुकुल ज्वालापुर की स्थापना की। स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती वेदवेत्ता, सर्वदर्शनसूरि, शास्त्रार्थ-महारथी, वेदवित् और वाग्मी संन्यासी थे। महर्षि दयानन्द की आत्मा उनके हृदय में अधिष्ठित थी। वे निःशुल्क शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। प्राचीन परम्परा के अनुकूल वे छात्रों से शुल्क लेना अनैतिकता समझते थे। उन्होंने मीमांसा-दर्शन को छोड़कर भारतीय दर्शनों पर भाष्य लिखा और आर्य-सिद्धान्तों के प्रचारार्थ २०० से अधिक ट्रैक्ट लिखे।

दानवीर कर्मयोगी स्वामी जी के संकल्प को पूर्ण करने के लिए श्री बाबू सीताराम जी रईस ज्वालापुर ने ईश्वरीय प्रेरणा से प्रेरित होकर अपनी समस्त भूमि व चल सम्पत्ति गुरुकुल के लिए दे दी।

स्वामी दर्शनानन्द जी की तपस्या के फलस्वरूप संस्था को व्याकरण के सूर्य श्री शुद्धबोध तीर्थ जैसे आचार्य मिले और उनके सहयोगी के रूप में वेद, साहित्य और दर्शनों के दिग्गज विद्वान् श्री पं० भीमसेन शर्मा (आगरा) श्री पं० पद्मसिंह शर्मा (हिन्दी–समालोचक), श्री पं० काशीनाथ शास्त्री (वाराणसी) श्री पं० दिलीपदत्त उपाध्याय और आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ मिले। इन तपस्वियों से परिपूत और उनके श्रम–सीकर से सिक्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह तपोभूमि सहस्रों विद्वानों को जन्म देने में समर्थ हुई।

आज इस गुरुकुल की सम्पत्ति लगभग २ करोड़ रुपये की है। संस्था के पास ३०० बीघा भूमि है। पुस्तकालय में लगभग २ लाख रुपये की पुस्तकें हैं। इसका वार्षिक आय-व्यय लगभग ६ लाख रुपये है। इस व्यय के लिए आय के मुख्य स्रोत हैं—जनता से दान, केन्द्रीय एवं प्रादेशिक सरकारों से अनुदान, कृषि-कार्य, उद्यान, प्रचार-कार्य।

यह गुरुकुल प्राचीन गुरुकुलीय पद्धति पर चल रहा है, यहाँ शिक्षा पूर्णतया निःशुल्क है। प्राकृतिक सुषमा और गंगा नहर इसको नैसर्गिक शोभा प्रदान करती है। यहाँ वेद, व्याकरण, दर्शन और साहित्य विषयों की उच्चतम शिक्षा प्रदान की जाती है। अन्य विषयों के साथ ही अंग्रेजी और विज्ञान आदि आधुनिक विषयों की भी शिक्षा का प्रबन्ध है। शास्त्री, आचार्य और एम॰ ए. (संस्कृत–हिन्दी) तक की तथा आयुर्वेद-विषयक शिक्षा की भी समुचित व्यवस्था है। भारतीय व्यायाम, योगासन आदि प्रचलित खेलों के प्रशिक्षण की यहाँ सुव्यवस्था है। गुरुकुल की विभिन्न परीक्षाएं अनेक संस्थाओं से मान्यता प्राप्त हैं। यहाँ की 'विद्याभास्कर' परीक्षा आगरा, मेरठ, कानपुर, पंजाब, जम्मू, हिमाचल प्रदेश, कांगड़ी आदि विश्व-विद्यालयों से बी॰ ए॰ के समकक्ष मान्यता प्राप्त है।

यहाँ की विद्यारत्न परीक्षा (कक्षा–१०) यू॰ पी॰ बोर्ड, इलाहाबाद से हाई स्कूल व पंजाब एजूकेशन बोर्ड चण्डीगढ़ से मैट्रीकुलेशन परीक्षा के समकक्ष मान्य है। इसे मान्य कराने में उपसचिव (शिक्षा) उत्तर प्रदेश शासन श्री रामलाल शर्मा का बहुत बड़ा योगदान है। हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं।

गुरुकुल के वर्तमान अधिकारी

कुलपति–संस्था के कुलपति डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी हैं। आप वेद और व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त आपने अन्य भाषाओं में भी विशेष योग्यता प्राप्त की है।

आचार्य–गुरुकुल को सौभाग्य से वर्तमान में डॉ॰ हरिगोपाल शास्त्री जैसे विद्याविनयसम्पन्न, निःस्वार्थ कर्मयोगी प्राचार्य प्राप्त हैं। संस्था को विपन्नावस्था से उभारकर पुनः प्रगति के मार्ग में ले जाने का श्रेय इन्हें ही जाता है। प्रकाश्यमान वेद-विशेषाङ्क डॉ॰ शास्त्री की यथासमय-समारब्ध नीति-निपुणता के फलों में से एक है।

मंत्री–गुरुकुलके मन्त्री श्री विक्रमसिंह जी उत्साही एवं कर्मठ व्यक्ति हैं। आप किसान इन्टर कालेज, लक्सर में हिन्दी-प्राध्यापक पद को अलंकृत कर रहे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुख्याधिष्ठाता–वर्तमान मुख्याधिष्ठाता श्री अशोक कुमार शास्त्री एक निर्भीक एवं दृढ़ प्रतिज्ञ कार्यकर्ता हैं। आपने संस्था की सर्वतोभावेन उन्नति के लिए अनेक कठिन कार्य किए हैं। व्यवस्था के संचालन में आप अत्यन्त दक्ष हैं। अन्य पदाधिकारियों एवं अन्तरङ्ग सदस्यों का भी सहयोग संस्था को यथा-समय मिलता रहता है। तदर्थ वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

कोषाध्यक्ष-श्रीवैद्य विष्णुदत्त शर्मा संस्था के कोषाध्यक्ष हैं। आयुर्वेद के साथ ही साहित्य में भी आपकी पैठ है। आप आरम्भसे ही संस्थासे सम्बद्ध रहे हैं।

गुरुकुल के सहयोगी:-यह संस्था जनता-जनार्दन के सहयोग से आज तकचल रही है। जनता का स्नेह और अनुग्रह इसे सदा प्राप्त है।

शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार का विशेष सहयोग इस संस्था को प्राप्त है। उसके सहयोग से ही गुरुकुल में 'शास्त्रचूड़ामणि' उपाधि के लिए वैदिक शोध-संस्थान चल रहा है। पौरोहित्य-प्रशिक्षण-शिविर, शिक्षा-मंत्रालय के अनुदान से लगाया गया था। वेदविशेषांक शिक्षामंत्रालय के सहयोग से ही प्रकाशित हो रहा है। शिक्षामन्त्रालय अन्य नवीन योजनाओं पर भी गुरुकुल का मुक्तहस्त से सहयोग कर रहा है।

एतदर्थ हम विशेष रूप से श्री टी० एन० धर संयुक्त शिक्षा सलाहकार, डॉ० के० के० मिश्र शिक्षा सलाहकार (संस्कृत). एवं भारतीय संस्कृति तथा संस्कृत के समुपासक, उदारचेता, श्री रामकृष्ण शर्मा सह-शिक्षा सलाह-कार (संस्कृत) के अत्यन्त कृतज्ञ हैं। आशा है, भविष्य में भी वे भारत की सबसे प्राचीन इस संस्कृत-शिक्षण-संस्था पर अपनी कृपादृष्टि रखेंगे और अपने पदार्पण से संस्था को अनुगृहीत करते रहेंगे। यह संस्था आश्वासन देती है कि उनके सत्परामर्शों का सदा क्रियान्वयन होता रहेगा।

गुरुकुल की उपलब्धियाँ–

इस संस्था से संस्कृत-विभाग में लगभग ४ हजार और आयुर्वेद विभाग में लगभग ८ हजार छात्र स्नातक हो चुके हैं। संस्था ने अनेक उच्च-कोटि के साहित्य-सेवी, राष्ट्र-सेवी और वेदों के प्रचारक राष्ट्र को दिए हैं। उनमें से कुछ प्रमुख व्यक्तियों के नाम यहाँ दिए जा रहे हैं:-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साहित्यकार –स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, श्री नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ, पं० पद्मसिंह शर्मा, डॉ० मंगलदेव शास्त्री, डॉ० सूर्यकान्त, डॉ० उदयवीर शास्त्री, डॉ० हरिदत्त शास्त्री, श्री रामावतार शास्त्री, डॉ० गौरी-शंकर आचाय, डॉ० नारायण मुनिश्चतुर्वेदः, डॉ० कपिलदेव द्विवेदी, पद्मश्री डॉ० क्षेमचन्द्र 'सुमन', डॉ० हरिगोपाल शास्त्री, डॉ० सत्यव्रत शर्मा 'अजेय' तथा डॉ० सुरेन्द्रनाथ दीक्षित ।

राष्ट्रसेवी-(क) सांसद् एवं विधायक–आचार्य नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ (विधायक), श्री पं० प्रकाशवीर शास्त्री (सांसद्), श्री शिवकुमार शास्त्री (सांसद्), श्री स्वामी रामानन्द सरस्वती (सांसद्), श्री ठा० यशपाल सिंह (सांसद्) ।

(ख) हैदराबाद आर्य सत्याग्रह में योगदान–गुरुकुल के तीन जत्थों में लगभग१००विद्यार्थी जेल गए। इनमें प्रमुख हैं–स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, स्वामी आनन्दप्रकाश, श्री भूदेवशास्त्री, डॉ० कपिलदेव द्विवेदी, श्री पं० प्रकाशवीर शास्त्री, डॉ० सुदर्शन शास्त्री तथा श्री सत्यनारायण रावत, पं० दयानन्द (जो शहीद हुए) आदि ।

प्रमुखवक्ता–श्री रुद्रदत्त शास्त्री (देहरादून), आचार्य वाचस्पतिशास्त्री, श्री प्रकाशवीर शास्त्री, श्री ओमप्रकाश शास्त्री (खतौली), श्री सच्चिदानन्द शास्त्री (मन्त्री सार्वदेशिक आ०प्र० सभा, दिल्ली), श्री ठा०नरेन्द्रसिंह।

गुरुकुल में पधारने वाले विशिष्ट व्यक्ति–

इस संस्था को सौभाग्य प्राप्त है कि भारतवर्ष के सर्वोच्च विद्वान्, त्यागी, तपस्वी, राष्ट्रनेता, संन्यासी और देशभक्तों ने इस संस्था को अपने पदार्पण से पवित्र किया है। ये यहाँ की उच्च शिक्षा और आदर्श जीवन से अत्यन्त प्रभावित हुए। इनमें विशेष उल्लेखनीय हैं–

सर्वश्रीमहात्मा गांधी (१९१५, १९२०),लाला लाजपतराय (१९२१) डॉ० राजेन्द्र प्रसाद (१९६१), पं० जवाहरलाल नेहरू (१९५९), पं० मोती लाल नेहरू (१९२१), भाई परमानन्द (१९२१), पं० मदनमोहन मालवीय, डॉ० राधाकृष्णन्, महात्मा हंसराज, महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द, आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, डॉ० के० एम०मुंशी, डॉ० सम्पूर्णानन्द, पं० नाथूराम शर्मा 'शंकर', श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित, श्री गोविन्द वल्लभ पन्त, श्री पुरुषोत्तम दास टंडन, एवं श्री राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त आदि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओ३म्

सम्पादकीयम्

—डॉ० हरिगोपाल शास्त्री
एम. ए., पी-एच.डी. व्याकरणाचार्य

'भारतोदय' सचित्र मासिक के इस वेद-विशेषाङ्क को आप तक पहुँचाते हुए मुझे महान् हर्ष हो रहा है। वस्तुतः प्रस्तुत वेद-विशेषाङ्क के प्रकाशन की सत्प्रेरणा मुझे सन् १९८५ में भारत सरकार द्वारा काञ्चीपुरम् (तमिलनाडु) में पूज्यपाद महाराज श्री शङ्कराचार्य जी के सान्निध्य में आयोजित 'अखिल भारतीय वैदिक सम्मेलन' से प्राप्त हुई। इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए मुझे भारत सरकार के मावन-संसाधन-विकास मन्त्रालय (शिक्षा विभाग, दिल्ली) ने आमन्त्रित किया था। यहां भारत के कोने-कोने से समागत प्रतिष्ठित एवं चारों वेदों की विभिन्न शाखाओं में निष्णात, आचार-विचार में परम आस्थावान् वेदपाठी वेद-विद्वानों से साक्षात् सम्पर्क करने का सु-अवसर प्राप्त हुआ। आन्ध्र प्रदेश के कतिपय विशिष्ट वेद-पाठियों का सस्वर वेदपाठ एवं साम-गान मेरे मन-मानस में इतना गहरा पैठ गया कि मैं उस अलौकिक स्वर-विभूति की अनुभूति को शाब्दिक अभिव्यक्ति देने के लिए उद्विग्न सा हो उठा।

जब मेरे भाव कुछ वाग्-वैखरी से व्यक्त होने लगे तो संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति के मर्मज्ञ, विद्वत्-तल्लज श्री रामकृष्ण शर्मा (नौटियाल) सहायक शिक्षा सलाहकार (सं०) भारत सरकार के हृदय तक तरङ्गायित हुए और वे स्वयं बोल उठे कि इस सम्मेलन की उपलब्धि को क्यों न आप 'भारतोदय' के माध्यम से प्रकाशित करें? बस! मेरा मानस-संकल्प वाचिक यात्रा से होता हुआ कर्म रूप में परिणत हो उठा और वही है यह वेद-विशेषाङ्क!

इस विशेषाङ्क में वेद-उपवेद-वेदाङ्ग-वेदभाष्य तथा वेद-सम्बन्धी साहित्य का गवेषणात्मक परिचय देने वाले लेखों का ही संकलन किया गया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। वेदों से सम्बद्ध अनेक मौलिक प्रश्न, उनके समाधान, वेदों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता एवं विश्वव्यवस्था में उपयोगिता के सम्बन्ध में ठोस विचार देने वाले लेखों को ही इसमें प्रधानता दी गई है।

विभिन्न प्रदेशों में वास करने वाले चारों वेदों के भिन्न शाखा के विशिष्ट एव उपलभ्य परिचय, वेद–विद्वानों के छायाचित्र तथा निवास-संकेतों का संकलन किया गया है।

तीन भाषाओं से निर्मित इसके कलेवर में हिन्दी की गंगा, अंग्रेजी की यमुना तथा संस्कृत की सरस्वती का सुखद संगम है। भारत के विभिन्न प्रान्तों में विभिन्न भाषा-भाषी नागरिक रहते हैं, हिन्दी और संस्कृत को सब भागों में नहीं समझा जाता है, इसलिए अंग्रेजी में भी इस विषय के लेखों को स्थान दिया गया है। यह अङ्क अखिल भारत को ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व के रहने वालों को श्रुति–सुधा का पान कराए, इसलिए भी अंग्रेजी के लेख अपेक्षित समझे गये हैं।

वेद जैसे विशाल ज्ञान-सागर की गम्भीरता का पूर्ण आकलन करने की गर्वोक्ति तो मैं कथमपि नहीं कर सकता किन्तु यह निश्चित है कि जो सामग्री इस अंक में संकलित की गई है वह रत्न रूप में हैं। प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि इस विशेषाङ्क द्वारा जन-जन में वेद-प्रचार हो, यह शब्द तो छोटा है पर इसका कार्य महान् है। इस 'वेद' शब्द में अमृत है, अंगारे हैं, क्रान्ति की लपटें हैं और है निर्माण का निमन्त्रण। वेद–विशेषाङ्क है— वैदिक आदर्शों का प्रचार, वेद की सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक–आध्यात्मिक व्यवस्थाओं की स्थापना, अन्धकार का उन्मूलन अन्याय की समाप्ति और आतंकवाद की अन्त्येष्टि।

इस वेद–विशेषाङ्क के माध्यम से भरतवंशियों तथा ऋषि-पुत्रों से हमारा विनम्र अनुरोध है कि वे इस वेद ज्ञान का अवलम्बन लें। ज्योति के प्रहरी! आज निशा की गहन कालिमा से ढकी धरती पर तरस खा। क्रन्दन-रोदन, चीत्कार और अन्याय को देख और जाग! निराशा को छोड़, बढ़ते हुए पाप, अनैतिकता आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर। राम ने रावण पर विजय प्राप्त की। दयानन्द ने अकेले होते हुए भी सारी खल-सेना का सामना किया था, फिर आज किंकर्त्तव्य-विमूढ़ क्यों? समय है अभी चेत! वेद की पताका लिए बढ़ता चल, बढ़ता चल, तुझे विजयश्री मिलेगी ही, विश्वास रख। देश में सर्वत्र मची मार-धाड़ और आतंकवाद को दूर करने में वेद की एक-एक पंक्ति ही पर्याप्त है, यथा—'मित्रस्य त्वा चक्षुषा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समीक्षा महे।' इत्यादि।

अन्त में—वेद ज्ञान की झलक जनता तक पहुंचाने का यह संकल्प प्रयास मात्र है, साधनों के अभाव, समय की तंगी और अनेक बाधाओं के होते हुए भी जो कुछ बन पड़ा 'जन-मन' को भेंट कर रहे हैं। इसमें जो त्रूटियाँ हों उनके लिए हम निजी रूप से क्षमा चाहेंगे, जो भी आपको अच्छा लगे, वह विद्वान् लेखकों के सहयोग का फल है। उनके लिए जिलना भी धन्यवाद दिया जाये, थोड़ा है। साथ ही भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मन्त्रालय (शिक्षा विभाग) संस्कृत–२ द्वारा की गई आर्थिक सहायता के प्रति भी हम कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

साथ ही प्रेस के समस्त कर्मचारियों ने, कार्यालय के कार्यकर्ताओं ने, दिन-रात एक कर जो कार्य किया, वह उनसे ही सम्भव था। इससे हमें हर्ष है। बहुत से मान्य लेखकों के लेख विलम्ब से आने के कारण हम नहीं प्रकाशित कर सके, इसके लिए हमें खेद है।

श्री केशवप्रसाद जी साहित्याचार्य तथा श्री सभाबहादुर सिंह जी एम० ए० ने प्रूफ रीडिंग आदि में जो हाथ बटाया, इसके लिए हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करना हमारा कर्त्तव्य बन गया है।

परमात्मा करे कि हम, जनता और विश्व लुभावनी माया में न फंस, अज्ञान तिमिर को दूर करने हेतु सतत प्रयत्नशील हो ज्ञान-सूर्य के स्वागत की तैयारी आरम्भ कर दें!

युग की अलसायी लतिकाएँ प्रफुल्लित हो जन-मन के आह्लाद का कारण बन निरन्तर विकास पाती रहें, साधना का लम्बा पथ हरा-भरा रहे.........भरा रहे, यही कामना है हमारी और कामना है—

तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्माऽमृतं गमय।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुक्रमाणिका

संस्कृत

क्र०सं०	लेखक	लेख	पृष्ठ सं०
१.	श्री नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ	यज्ञे पशुवधो वेदविरुद्धः	१
२.	डा. कपिलदेव द्विवेदी	वेदमर्मज्ञाः भारतीयाः पाश्चात्त्याश्च विपश्चितः	६
३.	श्री रामदत्त शास्त्री	यस्यच्छायाऽमृतम्	२०
४.	श्री धर्मानन्द शर्मा	धियो यो नः प्रचोदयात्	२२
५.	श्री वासुदेवपाण्डेय आचार्य	वेदस्यास्ति विशेषतत्त्वमहिमा	२५
६.	श्री शिवपूजन शास्त्री	वेदानां वैशिष्ट्यम्	२६
७.	श्री हरि अरविन्दः	दिव्यं महाकाव्यम् वेदः	२७
८.	डा. निगम शर्मा	वेदार्थ–प्रक्रिया	२६
६.	श्री सुरेन्द्रकुमार विद्याभास्कर	तमिलनाडु प्रान्ते वेदसम्मेलनस्य संस्मरणानि	३३
१०.	डा. रूपनारायण पाण्डेय	पाश्चात्य-सिद्धान्ताः पुनश्चिन्तनीयाः	३४

हिन्दी

१.	डा. वासुदेवशरण अग्रवाल	वैदिक ज्योति	३५
२.	डा. सूर्यकान्त	महर्षिदयानन्द और वेदानुसंधान	४१
३.	श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर	वेदमय जीवन	४४
४.	आचार्य उदयवीर शास्त्री	वेदों केपरिप्रेक्ष्य में अव्यक्त से व्यक्त	४६
५.	आचार्य देवदत्त शर्मोपाध्याय	वेदापौरुषेयत्व	५५
६.	डा. सूर्यदेव शर्मा	पाश्चात्य विद्वानोंकी दृष्टि में वैदिक-वाङ्मय	६१
७.	डा. रामनाथ वेदालंकार	वेद में मानव-शरीर का वर्णन	६४
८.	डा. कर्ण सिंह	वेदों की प्रासंगिकता	६८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्र०सं०	लेखक	लेख	पृष्ठ सं०
९.	डा. विष्णुदत्त 'राकेश'	महर्षि दयानन्द की वेदार्थ दृष्टि	७१
१०.	डा. हरिगोपाल शास्त्री	सर्वज्ञानमयो हि सः	८२
११.	डा. सत्यव्रत शर्मा 'अजेय'	आज फिर आवश्यकता है अग्नि-उपासना की	८५
१२.	डा ठाकुरदत्त जोशी	वेदों की सार्वभौमिक महत्ता	८८
१३.	श्री चन्द्रदीप शुक्ल	वैदिक साहित्य	९३
१४.	डा. भारतभूषण विद्यालंकार	वैदिक परिवहन व्यवस्था	९६
१५.	श्री हरिसिंह त्यागी	वेदा का वर्ण्य–विषय	१०१
१६.	श्री केशवप्रसाद उपाध्याय	वैदिक वाङ्मय के प्रसार में गुरुकुल ज्वालापुर का योगदान	१०४
१७:	आचार्य वेदप्रकाश शास्त्री	वेद में नारी के उपमान	१११
१८.	श्री नरेन्द्रकुमार	बौधायन धर्मसूत्र एवं यज्ञ	११५
१९.	श्री सत्यव्रत शास्त्री	वेदों के भाष्यकार	११९
२०.	श्री देव शर्मा	भारतीय परंपरा के वेदज्ञ-विद्वान्	१२१

English

1. Shri Ram Krishana Sharma — The relevance of Vedas to the modern times 130
2. Shri C. Rajagopalachari — The Value of Indian Philosophy in a Modern State 136

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

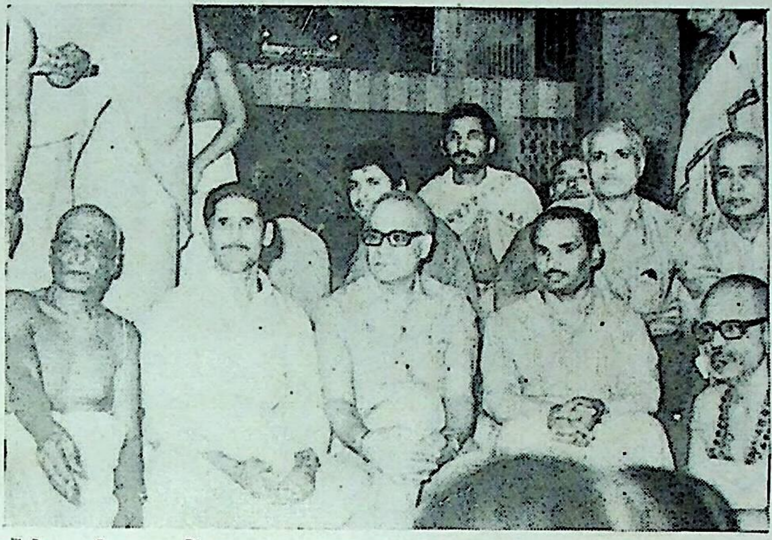

बाएँ से—श्री एस० वेंकटाकृष्णन् (मद्रास), श्री आर० के० शर्मा (शिक्षा-मन्त्रालय), श्री टी० एन० धर (सचिव, शिक्षा मन्त्रालय), डा० हरिगोपाल शास्त्री (आचार्य), पी० ए० श्री शंकराचार्य (कांचीपुरम्) ।

सस्वर वेदपाठ करते हुए विशिष्ट वैदिक विद्वान् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

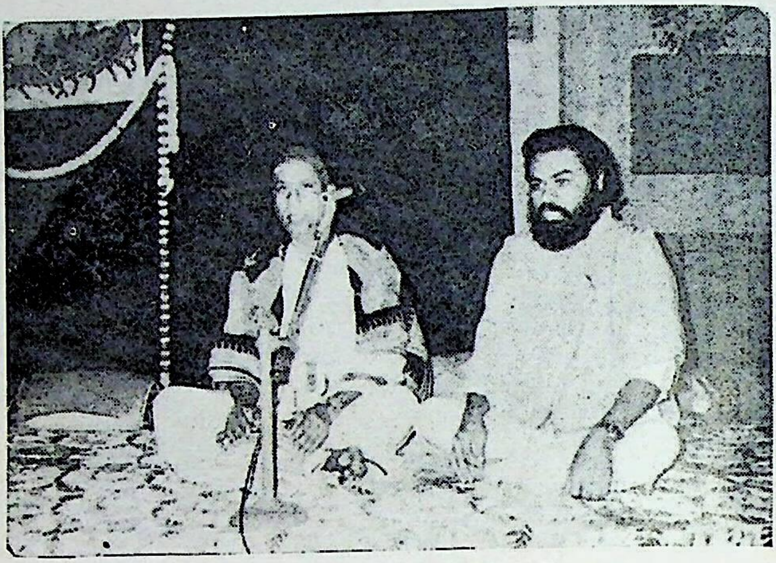

सस्वर वेदपाठ करते हुए विशिष्ट वैदिक विद्वान् ।

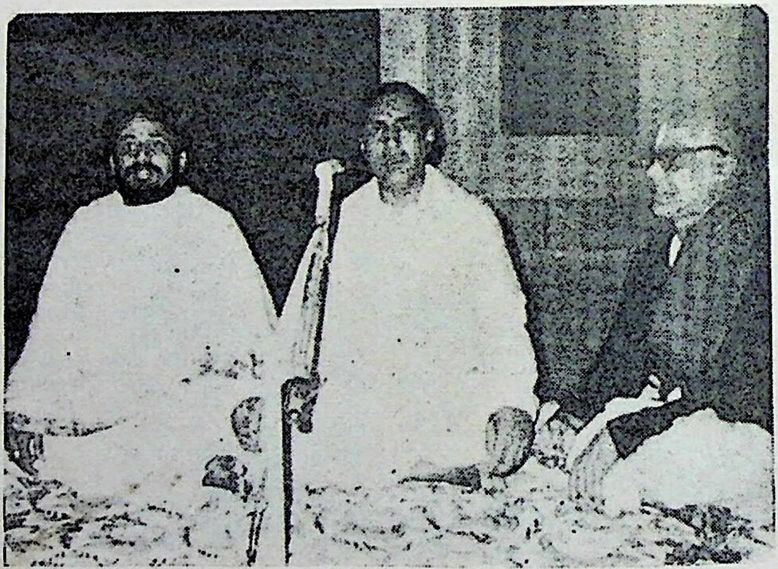

सस्वर वेदपाठ करते हुए विशिष्ट वैदिक विद्वान् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

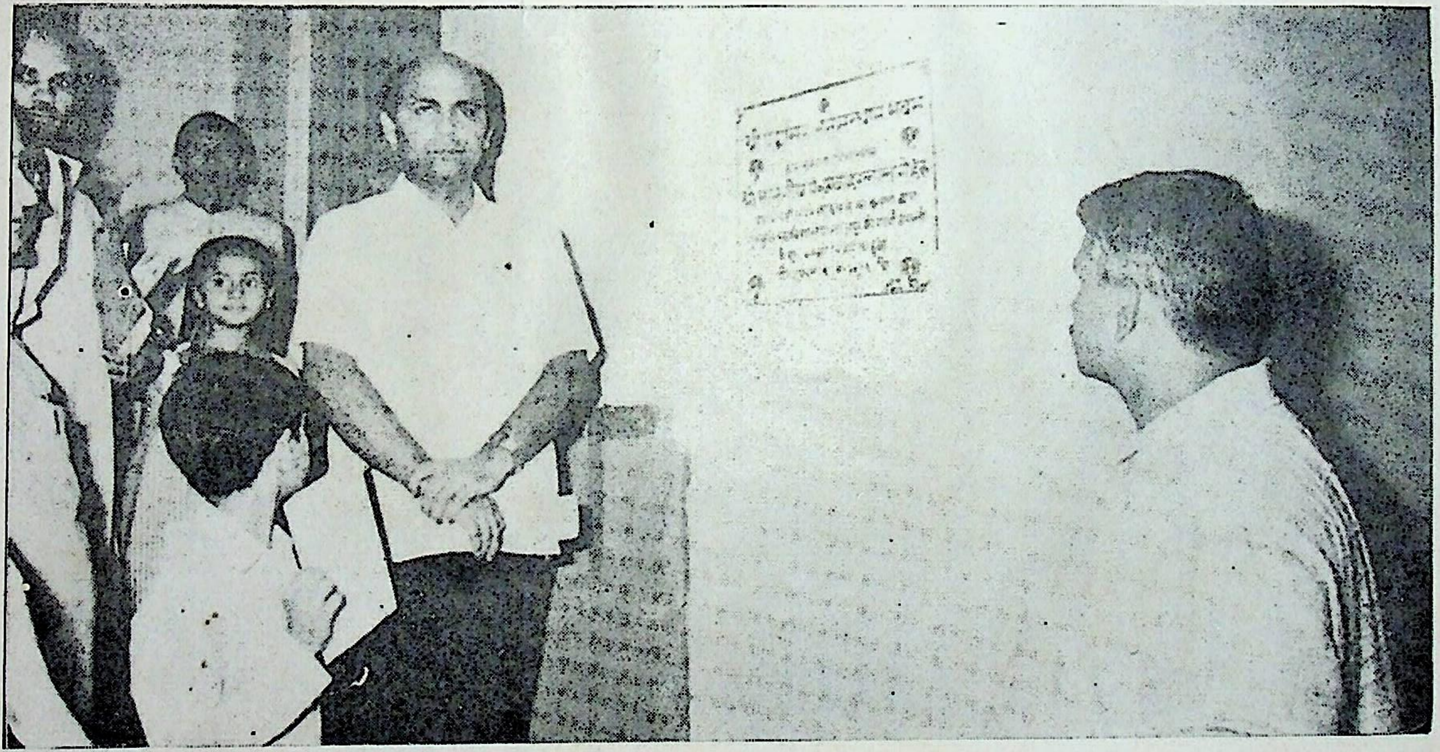

दिनांक—२३-६-८६ को भारत सरकार के अनुदान से निर्मित पद्मसिंह अनुसंधान भवन का निरीक्षण करते हुए शिक्षा सलाहकार डा० के० के० मिश्र। इस भवन का शिलान्यास श्री जवाहरलाल नेहरू ने किया था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

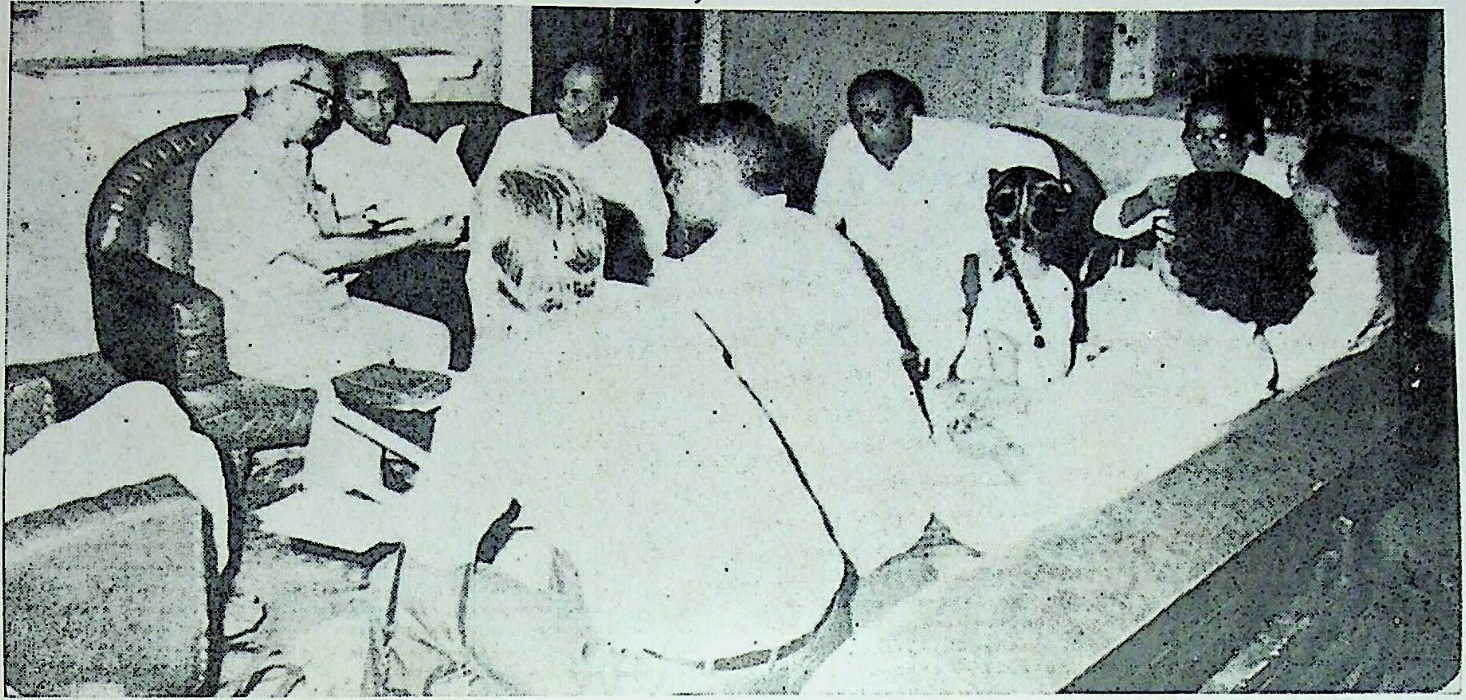

बाएँ से—श्री० डा० गौरीशंकर आचार्य (प्रधान), डा० कपिलदेव द्विवेदी (कुलपति), डा० के० के० मिश्र (शिक्षा सलाहकार), डा० जयन्त मिश्र (कुलपति दरभंगा वि० वि०), श्री विक्रमसिंह (मन्त्री), श्री आर० के० शर्मा (उपशिक्षा सलाहकार), डा० ए० एन० भट्टाचार्य (प्राचार्य), श्री अशोक कुमार शास्त्री (मुख्याधिष्ठाता)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यज्ञे पशुवधो वेदविरुद्धः

आचार्यप्रवरः श्री नरदेवशास्त्रिवेदतीर्थः

[गुरुकुलमहाविद्यालय-ज्वालापुरस्य प्राणभूताः, विद्वत्तल्लजाः, वेद-विद्यानिष्णाताः आचार्यपादाः, भूतपूर्वकुलपतयः श्री नरदेवशास्त्रिवेदतीर्थ-महाभागाः ।]

ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति, ये च भूतेषु जाग्रति ।
पशून् ये सर्वान् रक्षन्ति, ते न आत्मसु जाग्रति, ते नः पशुषु जाग्रति ।।

अथर्व० १९, ४८, ५

अत्र 'पशून् ये सर्वान् रक्षन्ति' इत्यनेनेश्वर आज्ञापयति, मनुष्यैः सर्व एव पशवो रक्षणीया इति ।

यज्ञस्य स्वरूपं किमस्तीत्युच्यते—

द्रव्यं देवता त्यागः ।। का० श्रौ० सू २३

अस्यार्थः— व्रीहियवादि द्रव्यम्, या तेनोच्यते सा देवता मन्त्रार्थः, अग्नावाहुतीनां दानं त्यागः । अग्न्यादिव्यावहारिकेभ्यो देवेभ्यः संस्कृतानां व्रीहियवादीनां द्रव्याणां घृतादीनां वा वेदमन्त्रोच्चारणपूर्वकमग्नावाहुतिदानं यज्ञः ।

हविस्तु क्षाराम्लतिक्तगुणादिरहितं किन्तु सुगन्धिपुष्टमिष्टरोगनाशादि-गुणसहितं चतुर्विधमेव । अत्र प्रमाणम्—

उपावसृज त्मन्या समञ्जन्, देवानां पाथ ऋतुथा हवींषि ।
वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः, स्वदन्तु हव्यं मधुना घृतेन ।।

यजु० २९, ३५ अथर्व० ५, १२, १०

'पाथः' 'हवींषि' घृतेन' सर्वाण्येतानि पदानि चतुर्विधानां द्रव्याणामेव हवनं कर्तुमुपदिशन्ति । अतस्तेषामेव ग्रहणं यज्ञे, न प्राणिवधजन्यमांसस्येति । 'मांसन्त्वशुचिद्रव्यं दुष्टञ्चेति यथा च श्वमांसादीनां स्वत एवाऽशुचित्व-मिति'' वैशेषिकशास्त्रे प्रशस्तपादभाष्यम् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुष्टस्य हविषोऽप्स्वहरणम् ।। का० श्रौ० २५, १५५
अर्थः—होमद्रव्यं दुष्टञ्चेज्जले प्रक्षेपणीयम्, न तद्धोतव्यमित्यर्थः ।

उक्तो वा भस्मनि ।। का० श्रौ० २५, ११६
वा (अथवा) दुष्टं हविर्भस्मनि प्रक्षेप्तव्यम्, न तस्य होमः कार्य इत्यर्थः ।

शिष्टभक्षप्रतिषिद्धं दुष्टम् ।। का० श्रौ० २५, ११७
शिष्टैर्मांसाद्यभक्ष्यं वस्तु दुष्टमुच्यते । मांसभक्षणे प्रायश्चित्तमप्यस्ति, यथा—
जग्ध्वा मांसमभक्ष्यं च, सप्तरात्रान्यवान्पिबेत् । मनु० ११, १५२

अभक्ष्य मांसं भक्षयित्वा सप्तरात्रान् यवान् पिबेदित्यर्थः । अथ चतुर्विधानां द्रव्याणां विषये प्रमाणानि—

१—'घृतं तीव्रं जुहोतन' (यजु० ३, २) अग्नौ सर्वदोषनिवारकं घृतं होतव्यमित्यर्थः ।

२—'घृतेन वर्द्धयामसि' (यजु० ३, ३) । यज्ञसिद्ध्यर्थं घृतेनाग्निं प्रदीप्तं कुरुतेति ।

यज्ञस्य फलम्—'निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु' इति (यजु० २२, २२)

३—'आस्मिन् हव्या जुहोतन' (यजु० ३ १) (आ) समन्तात् (अस्मिन्) अग्नौ (हव्या) दातुमत्तुमादातुमर्हाणि वस्तूनि (जुहोतन) प्रक्षिपत ।

दुग्धघृताद्यर्थमेव पशवो यज्ञेष्वानीयन्ते स्म न च वधार्थमिति, यथोक्तम्–

"आदिकाले खलु यज्ञेषु पशवः समालभनीया बभूवुर्नारम्भाय प्रक्रियन्ते स्म । अतश्च प्रत्यवरकालं पृषध्रेण दीर्घसत्रेण यजमानेन पशूनामलाभाद् गवामालम्भः प्रावर्तितः । तं दृष्ट्वा प्रव्यथिता भूतगणास्तेषाञ्चापयोगादुपकृतानां गवां गौरवाच्चोपहताग्नीनामुपहतमनसामतीसारः पूर्वमुत्पन्नः पृषध्रयज्ञे ।" चरक विमा० १०, ३

अत्र गोमांसभक्षणादेवातीसारोत्पत्तिरुक्ता । मांसन्तु पशुवधमन्तेरण नोपलभते, न च पशुवधः स्वर्ग्यः । यथा—
"नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां, मांसमुत्पद्यते क्वचित् ।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यः, तस्मात् मांसं विवर्जयेत् ।।" मनु० ५, ४८

"अथो भैषज्ययज्ञा वा एते यच्चातुर्मास्यानि तस्मादृतुसन्धिषु प्रयुज्यन्ते । ऋतुसन्धिषुर्वै व्याधिर्जायते ।' (गो० ब्रा० १, १९) भैषज्ययज्ञा इत्यनेनाऽशुचिद्रव्याणां मांसादीनां खण्डनं स्पष्टमेव ।

तथा 'वैश्वदेवो' (का० ४, १३६) चातुर्मास्य-पर्वेषु वैश्वदेवी पयस्या भवति ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'अन्यत्र 'न मांसमश्नीयात्, यन्मांसमश्नीयात्, यन्मिथुनमुपेयादिति नत्वैवेषा दीक्षा।' (श० ६, २)।

अत्र यज्ञे मांसभक्षणस्य निषेध एवेति।

व्रतादौ दुग्धस्यैव सेवनम्। तद्यथा—'क्षीरव्रतौ भवतः। सपत्नीको यजमानो व्रते दुग्धं पिबेत्, यवागू राजन्यस्यामिक्षा वैश्यस्य।' (का० सू० ११३, ११८) व्रते राजन्यः सपत्नीकः क्षत्रियो यवागूं पिबेत्। एवं सपत्नीको वैश्यः आमिक्षा श्रीखण्डं पिबेत्। मांसभक्षको न दीक्षितपदं प्राप्नोति, न व्रती भवति।

पशुवधपक्षपोषकेण सायणाचार्येणापि दुग्धपक्षं मत्वा गवां दोहने क्षीरपाके च मंत्रद्वयं विनियुक्तम्। यथा—

'गां दोग्धुमध्वर्युरयक्ष्मा वः प्रजय इति मंत्रेण वत्सं बन्धनान्मुच्येत्, क्षीरं श्रपयितुं मातरिश्वनो घर्म इति मन्त्रेणोखां गार्हपत्ये स्थापयेत्'।

(कृ० य० तै० सं० १. ६, ६)

आभ्यां मन्त्राभ्यामत्र यज्ञे दुग्धस्यैवोपयोगो भवतीति सायणाचार्यस्याभिप्रायः पशुवधनिषेधे वर्तते।

एवम् 'अन्वारब्धेषु पयो जुहोति द्वे सृती इति' (का० १६.८१) अत्र स्पष्टमेव यज्ञे दुग्धस्योपयोगो न तु मांसस्य। 'शेषं यजमानो भक्षयतीदं हविरिति' (का० १६, ८२)

तथैव याज्ञवल्क्यजनकसंवादेनापि सिद्ध्यति मखे पयादीनामेवोपयोगः। तद्यथा—

"तद्धैतज्जनको वैदेहः याज्ञवल्क्यं पप्रच्छ वेत्थाग्निहोत्रं याज्ञवल्क्या इति। वेद सम्राडिति। किमिति। पय एवेति। यत् पयो न स्यात् केन जुहुया इति। व्रीहियवाभ्यामिति। यद् व्रीहियवौ न स्याताम्, केन जुहुया इति। या अन्या ओषधय इति। यदन्या ओषधयो न स्युः केन जुहुया इति। वानस्पत्येनेति। यद्ध वानस्पत्यो न स्यात् केन जुहुया इति। सहोवाच, नवा इह तर्हि किञ्चनासीदथ तद् हूयतेव सत्यं श्रद्धायामिति, वेत्थाग्निहोत्रं याज्ञवल्क्य इति धेनुशतं ददामि" (श० कां० ११)

संवादेऽस्मिन् हिंसाजन्यं मांसं वपादिकञ्च न क्वापि लिखितमस्ति। तेनापि विज्ञायते न तदानीं यागेषु पशुवधप्रचार आसीत्।

आयुर्वेदेऽपि वपामांसादिहोमविधिर्न, किन्तु गवादीनां दुग्धादुत्पन्नस्य घृतस्यैवेति। तद्यथा—'नाऽशुचिरुत्तमाज्याक्षततिलकुशसर्षपैरग्निं जुहुयात्।' (च० वि० अ० ८, अत्राप्याज्यस्यैव होमविधिर्न वपादेरिति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अजाया दुग्धं सर्वरोगहारकम् । कस्मात् ? 'अजा ह सर्वा ओषधीरत्ति सर्वासामेवैनामेतदोषधीनां रसेनाच्छृणत्ति' (श० पृ० ३४९)

'मधुसर्पिषा त्रिस्त्रिर्जुहुयात्' (च० वि० अ० ८)
'ओषधीनां वा परमो रसो यन्मधु' (श० ११, ५)

एवञ्चतुर्विधानां द्रव्याणामेव सर्वत्र होमविधिर्वेदादिसत्यशास्त्रेष्विति । यथा—'अपामार्गहोमः' (कात्या० १६, २९) । 'अजाक्षीरमेके' (का० १८, १) 'अजाक्षीरेणैके जुह्वति शाखान्तरात्' इति कर्काचार्य्यः । अत्राऽजायाः क्षीरमेव गृहीतं न तन्मांसमिति ।

'घृतेन ह वा एष देवाँस्तर्पयति' (श० ११, २५) घृतमेवात्र यज्ञसाधनमस्ति । 'अग्नये रसवतेऽजक्षीर निर्वपेत्' (कृ० य० तै० सं० २, ४) ।

वेदलिङ्गाच्चापि सिद्धं यज्ञे दुग्धघृतादीनामेवोपयोगः । तद्यथा— "ये देवा दिविषदो अन्तरिक्षसदश्च, ये चेमे भूम्यामधि । तेभ्यस्त्वं धुक्ष्व सर्वदा क्षीरं सर्पिरथो मधु ।' (अथर्व १०, ५, ३) ।

वेदमन्त्रेऽस्मिन् सर्वदापदेन यज्ञादौ सर्वत्र दुग्धं घृतञ्चोपदिश्यते । तत्प्रचारार्थमेव पशुरक्षाविधायको मन्त्रः 'यजमानस्य पशून् पाहि ।' (यजु० १, १) । महीधरभाष्यानुसारिणां तत् सन्तोषार्थं तत्कृतभाष्यमेवात्रोद्ध्रियते— 'यजमानस्य पशून् अरण्ये सञ्चरतश्चोरव्याघ्रादिभयात् पाहि रक्षेति' महीधरेणापि पशुवधो न स्वीकृतः । यथा—'यजमानस्य पशूनित्यग्न्यगारस्यान्यतरस्य पुरस्ताच्छाखामुपगूहति ।' (का० ४, ४०; 'पशूनान्तु क्रत्वङ्गभूतानां पालनमिहेष्यते' इति कर्काचार्य्यः ।

एवमेव 'ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनं हिंसीः ।' (य० ४, १) मन्त्रेणानेन यैर्याज्ञिकैः पशुवधः क्रियते, तैस्स्वभाष्यकारस्य महीधरस्यार्थो विलोकनीयः । यथा—'ओषधे कुशतरुणं देवता । हे ओषधे ! कुशतरुण ! त्वं यजमानं त्रायस्व क्षुराद् रक्ष । स्वधिते क्षुरो देवता । हे स्वधिते क्षुर एन यजमानं मा हिंसीः ।' महीधरेणाप्यत्र रक्षापरत्वमेव भाष्यं कृतं तत्कथं नामाऽयं मन्त्रः साम्प्रतं याज्ञिकैः पशुवधकर्मणि विनियुज्यते ? कात्यायनेन लिखितमिति चेत् तत्कृतविनियोगार्थविरुद्धन्तदिति ।

वेदेऽपि 'ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति ये च भूतेषु जाग्रति । पशून् ये सर्वान् रक्षन्ति, ते न आत्मसु जाग्रति ।' (अ० १९ ४८, ५) । इत्यादिषु मन्त्रेषु सर्वेषां पशूनां रक्षार्थमेवाज्ञास्ति । तेषां महोपकारं विस्मृत्याऽपराधमन्तरेण ये तान् घ्नन्ति यज्ञे ते कृतघ्नाः स्वार्थसाधकाः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कात्यायनसूत्रादावपि पशूनां महिमैव गीयते । यथा— 'महाँस्त्वेव गौर्महिमेत्यध्वर्युः । अध्वर्युर्गां महयति' । (शत० ३, ३, २) "ध्वरा हिंसा तदभावो यत्र" (नि० पू०) ।

अध्वरमिति यज्ञनामसु पठितं निघण्टौ । यज्ञे यजमानस्य प्रतिनिधिरध्वर्युः । अध्वर्युर्गोदुग्धस्य महत्त्वन्तदुपकारं वा वर्णयति । 'महयतीति' मह पूजायाम्, पूजा नाम सत्कारः । अध्वर्युर्गां महयति पूजयति सत्करोति, तद् गुणान् वा गायति ।

अथ छागदुग्धगुणाः—

दीपनं लघु संग्राहि, श्वासकासास्रपित्तनुत् ।
अजानामल्पकायत्वात्, कटुतिक्तनिषेवणात् ।।
नात्यम्बुपानाद् व्यायामात्, सर्वव्याधिहरं पयः ।। (सु०सू अ० ४५)

अजादुग्धं दीपनं, लघु, संग्राहि, श्वास-कासास्र-पित्तनुत् । अजानाम् अल्पकायत्वात्, कटुतिक्तनिषेवणात्, नात्यम्बुपानात्, व्यायामाद्, भ्रमणात् तासां पयः सर्वव्याधिहरम्भवति । अन्यत्राप्युक्तम्—

अजोक्षा चन्दनं वीणा, आदर्शो मधुसर्पिषी ।
विषमौदुम्बरं शङ्खाः स्वर्णनाभोऽथ रोचना ।।
गृहे स्थापयितव्यानि, धन्यानि मनुरब्रवीत् ।
देव ब्राह्मणपूजार्थं, अतिथीनां च भारत ।। (महा० उद्यो०)

यज्ञादिषु देवानां ब्राह्मणानामतिथीनां वा दुग्धद्वारा सत्कारार्थमजादयः पशवः पुराकल्प आसन् । तथैवेदानीमपि सत्कारार्थं रक्षणीयाः ।

दुग्धप्रयोजनाऽभावे भैषज्ययज्ञेष्वजा महौषधी ग्राह्या । यथा—
अजास्तनाभकन्दा तु, सक्षीरा क्षुपरूपिणी ।
अजा महौषधी ज्ञेया, शङ्खकुन्देन्दुपाण्डुरा ।। (सु० चि० अ० ३०)

सायणाचार्यायापि यज्ञे पशुहिंसा न रोचते स्म, इति तल्लेखेन सुतरामनुमीयते ।

यज्ञमंत्रार्थमबुध्वा स्वात्मविरुद्धमपि तेन लिखितमिति । यथा—क्रूरं पशुहिंसादि' (कृ० य० तै० पृ० ६६६) 'क्रूरादिदोषाणां होमेन समाहितत्वात्' (कृ० य० तै० ६, ५, १) । पशुहिंसा क्रूरं कर्मेति मत्वापि पुनः क्रूरादिदोषाणां होमेन समाहितत्वादिति यत्तदयुक्तम् । कुतः ? 'इषे त्वोर्ज्जे त्वेति' यजुर्वेदीयप्रथममन्त्रे श्रेष्ठतमानां कर्मणामाज्ञा । तदिदं क्रूरं पशुहिंसनं निकृष्टतमं वेदबाह्यं कर्म, तस्य होमेन शान्तिः कथमपि न्याय्यं न, हिंसकेन यावन्न तत्फलं भुज्येतेति ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शतपथेऽप्यहिंसेत्यस्य धर्मसाधनस्यैव यज्ञप्रकरणे प्रतिपादनमस्ति। तद्यथा—'सं वां मनांसि संव्रता समुचितान्याकरम्। अग्ने पुरीष्याधिपा भव त्वं न इषमूर्ज्जं यजमानाय धेहीति शान्तिमेवाभ्यामेतद् वदति यजमानस्य प्रजायै पशूनामहिंसायै (य० १२, ५८ तथा श० १३, ४, ८) अत्र 'पशूनामहिंसायै' इति ब्राह्मणस्य तात्पर्यमहिंसापरत्वमेवेति।

यैरुच्यते—अश्वमेधयज्ञेऽश्वस्य हनन क्रियते स्म, तदपि न सत्यमस्ति। यतस्तस्मिन्नेव शतपथे 'इदं मा हिंसीरेकशफं पशुमित्येकशफो वा एष पशुर्यदश्वस्तं मा हिंसीरिति' (श० पृ० ६६८)।

सत्यां हिंसायां यजमानस्य तपो विनष्टं भवति। तद्यथा—

"तस्य तेनानुभावेन, मृगहिंसात्मनस्तदा।
तपो महत् समुच्छिन्नं, तस्माद्धिंसा न यज्ञिया॥
अहिंसा सकलो धर्मोऽहिंसा धर्मस्तथाविधः।
सत्यन्तेऽहं प्रवक्ष्यामि, यो धर्मः सत्यवादिनाम्"॥

(महा० शा० अ० २७२)

यज्ञप्रकरणेऽत्र छागपदेन छागदुग्धस्यैव ग्रहणम्। कथम्? छाग्या इदं छागं पयः। 'तस्येदमित्यण्' (पा० ४, ३, १२)। छागदुग्धविषये प्रमाणम्। यथा—

छागं कषायमधुरं, शीतं ग्राहि पयो लघु।
रक्तपित्तातिसारघ्नं, क्षयकासज्वरापहम्॥ (च० सं० अ० २४)

वपामेदादिशब्दानां मन्त्रोक्तानामयमथः—धारोष्णदुग्धे स्निग्धभागस्यैव वपासञ्ज्ञा। न तु पशुं हत्वा तस्य नाभिस्थानीयस्य वपाया अत्र ग्रहणम्। तस्या हिंसाजन्यत्वात्, वेदविरुद्धत्वाच्चेति।

एवं वपाशब्दार्थो ज्ञेयः। 'रन्ध्रं श्वभ्रं वपो शुषिः' इति त्रिकाण्डी। दुग्धस्थानमूधस्तत्र स्थितं पयो वपा। गवादीनामूधसि स्थित धारोष्णं दुग्धमेव वपासञ्ज्ञकमित्यर्थः। यतो वपाशब्दः शुभ्रार्थे वर्तते, ततो न यज्ञे सवनीयपशोर्वपा ग्राह्या, हिंसाजन्यत्वात्, रोगोत्पादकत्वात्, वेदविरुद्धत्वाच्चेति। दुग्धस्यैवावस्थान्तररूपा वपा। 'प्रेष्यब्रुवोर्हविषो देवता सम्प्रदाने'। (पा० २, ३, ६१) अत्रोदाहरणम्—'अग्नये छागस्य हविषो वपाया मेदसोऽनुब्रू३हि' इत्यादावपि 'छागस्य' इत्यनेन छाग्या दुग्धस्यैव ग्रहणम्। दुग्धस्य धारोष्णस्यैव 'वपा' सञ्ज्ञा, उक्तं मनुना—

समुत्पत्तिं च मांसस्य, वधबन्धौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निवर्तेत, सर्वमांसस्य भक्षणात्॥ (मनु० ५, ४६)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'सर्वमांसस्य भक्षणात्' इत्यनेन न कस्यापि जीवस्य मांसं भक्षणीयमिति स्पष्टमेव।

निवृत्तामिषमद्यो यो, हिताशी प्रयतः शुचिः।
निजागन्तुकरुन्मादैः सत्ववान् न स युज्यते॥ (च०चि०अ० १४)

अभक्ष्याणां मांसवपादीनां भक्षणेनोन्मादादयो रोगा उत्पद्यन्ते, तथैवाग्नौ मांसवपादिप्रक्षेपणेन तज्जन्यधूम्रादिना जलवाय्वादयो दुष्यन्ति, ततो न यज्ञे तेषामुपादानमिति।

मांसभक्षणस्य तद्धोमस्य च सर्वकालनिषेधविधायकावन्यावपि मन्त्रौ। यथा—

य आमं मांसमदन्ति पौरुषेयञ्च ये क्रविः।
गर्भान् खादन्ति केशवास्तानितो नाशयामसि॥ (अथर्व०)

(ये) (केशवाः) कामिनः, क्लेशाः सन्ति येषान्ते 'केशाद्वोऽन्यतरस्याम्' (अष्टा०) आमम्) अपरिपक्वम् (मांसम्) खादन्ति (च) (पौरुषेयम्) पुरुषसम्पादितं परिपक्व मांस (गर्भान्, अण्डानि (खादन्ति) भक्षयन्ति (तान्) तान् सर्वान् (इतः) वर्तमानशरीरात् (नाशयामसि)। सार्वकालिकोऽत्र मांसभक्षण-निषेधः।

तदस्य रूपममृतं शचीभिस्तिस्रो दधुर्देवताः संरराणा।
लोमानि शष्पैर्बहुधा न तोक्मभिस्त्वगस्य मांसमभवन्न लाजाः॥
(य० १६, ८१)

भावार्थः—'ये दीर्घसमयावधि जटिला ब्रह्मचारिणो वा पूर्णविद्याजितेन्द्रिया भद्रा जनाः सन्ति त एव यजधातोरर्थं ज्ञातुमर्हन्ति, न बाला अविद्वांसो वा। स होमाख्यो यज्ञो यत्र मांसक्षाराम्लतिक्तगुणादिरहितं किन्तु सुगन्धिपुष्टमिष्टं रोगनाशकादिगुणसहितं हविः स्यात् तदेव होतव्यं च स्यादिति'—

—आचार्यदयानन्दः।

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥ (मनु०)

अथ शतपथकारः स्वयमेव मांसशब्दार्थमाह—'एतद् ह वै परममन्नाद्यं यन्मांसं स परमस्यैवान्नाद्यस्यात्ता भवति।' (श० ११, ७)

अयमभिप्रायः–यज्ञप्रकरणे मांसशब्देन परमान्नस्य पायसस्यैव ग्रहणम्। न च शतपथकारेण मांसपदेन पशुवधमांसं गृहीतम्। अतो यत्र कुत्रापि तत्र पशुवधलेखोऽस्ति, न स शतपथकारस्य, प्रक्षिप्तत्वात् तस्येति। 'स परमस्यै-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वान्नाद्यस्यात्ता भवति' इति कथनादपि पशुवधमांसनिषेधः। स यजमानः परममन्नं पायसादिकमेवाऽतु नाऽभक्ष्यं दुष्टं मांसादिकम्।

शतपथे मांसखण्डनम्

'पचन्ति वा अन्येषु अग्निषु वृथा मांसमथैतेषां नातोऽन्या मांसाशा विद्यते यस्याचैते भवन्ति' (श० ११, ७)
अस्यार्थः-(वा) अन्येषु (गार्हपत्यादिभिन्नेष्वग्निषु) (मांसम्) (वृथा निष्फलम्) (पचन्ति) अथ (अनन्तरम्) एतेषाम् (गार्हपत्याद्यग्नित्रयाणाम्) अतः (पायसादेः) अन्या (भिन्ना) मांसाशा (पशुवधमांसभक्षणम्) (न) विद्यते (नास्ति) (यस्य) यस्याग्निहोत्रिणः (उ) इति वितर्के (एते) अग्नयः (भवन्ति)।

अर्थात्, पशोर्वपामांसादिकमग्नौ गार्हपत्याद्यग्नित्रयसेविभिराहिताग्निभिर्न कदापि होतव्यं न केनापि भक्षणीयं वा, यतः प्राणिवधप्राप्तं हिंसात्मकं वपादिकं यज्ञे न क्वापि वेदानुकूलमिति।

'यदिमा आप एतानि मांसानि' (श० ७, ४, २)। अत्र जलं मांसमुच्यते।

'त्वक् तोक्मानि मांसम्' [श० अ० ८, ३]।
कात्यायनश्रौतसूत्रे सौत्रामणिनिरूपणेऽष्टादशसूत्रस्योपरि कर्काचार्यभाष्यम्-'तोक्मशब्देन यवा विरूढा उच्यन्ते'। अत्र हरितानां यवानां मांससञ्ज्ञास्ति।

आम्रस्यानुफले भवन्ति, युगपन्माँसास्थिमज्जादयो।
लक्ष्यन्ते न पृथक् त्वणुतया, पुष्टास्त एव स्फुटाः॥ (बृहन्निघ०)

आम्रस्य अनुफले युगपन्माँसास्थिमज्जादयो भवन्ति तु पृथक् अणुतया न लक्ष्यन्ते, पुष्टाः त एव स्फुटीभवन्ति। एवम् तिलचूर्णस्यापि मांससञ्ज्ञा। श्राद्धादौ फलैरहरहः श्राद्ध कुर्यान्न तु मांसेनाऽभक्ष्येणेति। जीवतामेव पितॄणां तत्। कुत्रापि मांसशब्देन 'जटामाँसी' गृह्यते। एवम् 'मांसरोहिणी' इत्यपि मांसपदेन गृह्यते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदमर्मज्ञाः भारतीयाः पाश्चात्याश्च विपश्चितः

–डॉ० कपिलदेवद्विवेदी, कुलपतिः
गुरुकुलमहाविद्यालय–ज्वालापुरम् (हरिद्वारम्)

(क) वेदज्ञाः भारतीयाः विद्वांसः

वेदाः विज्ञाननिधयः सर्वज्ञानमयाश्च । चतुर्वर्ग-प्राप्तेः, तन्मार्गदर्शनस्य चाधारभूता इमे । वेदानां महत्त्वं न केवलं भारतीयैरपि तु पाश्चात्त्यैरपि विद्वद्भिः सर्वतोभावेन उररीकृतम् । वैदिक-वाङ्मयस्य समुद्धारे राजा–राममोहनराय–संस्थापितेन ब्राह्मसमाजेन, महर्षि–दयानन्द–स्थापितेन आर्य-समाजेन च बहु प्रयतितम् । ब्राह्मसमाजेन भारतीय-संस्कृति–संपोषणार्थम् उपनिषत्सु, आर्यसमाजेन च वेदेषु विशेषतो ध्यानं दत्तम् । यद्यपि वेद-विदुषां महती परम्परा । तदिह समास–सरणिम् अनुसृत्य दिङ्मात्रमेव प्रस्तूयते ।

(१) ऋग्वेद–संहिता

(क) ऋग्वेद–संहिता–(१) **आचार्य–सायणः** समग्रस्य ऋग्वेदस्य परम्परागतां सरणिम् अनुसृत्य भाष्यं व्यदधात् । सायण एव वेदार्थविबोधाय पाश्चात्त्य-विदुषाम् आधाररूपोऽभवत् । सायणेन ५ वैदिक–संहिताः, ११ ब्राह्मणग्रन्थाः, २ आरण्यकग्रन्थाश्च स्वीयेन पाण्डित्यपूर्णेन भाष्येण सभाजिताः ।(२)**वेंकटमाधवः**-वेंकटमाधव-कृतम् ऋग्वेद–भाष्यं डा० लक्ष्मणसरूपेण सपाद्य चतुर्षु भागेषु प्रकाशितम् । वेंकटमाधवो व्याससरणिं विहाय समाससरणिम् अनुसरति । (३) **स्वामी दयानन्दः**—नैरुक्तप्रक्रियाम् अवलम्ब्य आध्यात्मिक-आधिदैविक–व्याख्या-पुरःसरम् ऋग्वेदभाष्यं (मंडल ७, सूक्त ८० पर्यन्तम्) संस्कृतार्य-भाषा–समन्वितं प्राकाशयत् । नात्र केवला यज्ञिया कर्मकाण्डपद्धतिराश्रिता । अकालमृत्युयोगात् कार्यमिदम् अपूर्णमेवावशिष्टम् ।(४)**पं० आर्यमुनिः** अवशिष्टं भागम् अनूदितवान् । (५) **आचार्यो विश्वबन्धुः** भाष्य-चतुष्टय-समन्वितं ऋग्वेदम् अष्टसु भागेषु प्राकाशयत् । (६) **श्रीपाद दामोदर सातवलेकरः**—ऋग्वेद–संहितायाः समीचीनं संस्करणं भूमिका-परिशिष्टादि-समन्वितं प्राकाशयत् ।

कतिपयैः विद्वद्भिः भारतीय-भाषास्वपि ऋग्वेद-संहितानुवादः प्रकाशितः—(१) **रमेशचन्द्र–दत्तः** बंगभाषायाम्, (२) **रामगोविन्दः त्रिवेदी** हिन्दी–भाषायाम्, (३) **कोल्हट–पटवर्धनौ** मराठी–भाषायाम्, अष्टसु भागेषु प्राकाशयताम् । (४) **श्री सातवलेकरः** भागचतुष्टये—'ऋग्वेद का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुबोध भाष्य'नाम्ना हिन्दीभाषानुवादं प्राकाशयत् । अयमेव देवानुसारं 'दैवतसंहितां भागत्रयेण प्राकाशयत् । अत्र देवतानुसारं मन्त्राणां संकलनम् ऋग्वेदमनरुध्य वर्तते । (५) **सिद्धेश्वर शास्त्री चित्रावः**—मराठी-भाषायाम्, (६) **जयदेव विद्यालंकारः**— हिन्दीभाषायाम् अनुवादं व्यदधात् । (७) **स्वामी डा० सत्यप्रकाशः सरस्वती**— आंग्लभाषायाम् अनुवादम् अकरोत् ।

[ख] **ऋग्वेद-विषयका ग्रन्थाः**— (१) सायणः ऐतरेयब्राह्मणस्य ऐतरेयारण्यकस्य च भाष्यम् अकरोत् । ऋग्वेद-भाष्य-भूमिका-ग्रन्थं चालिखत् । (२) **सत्यव्रतः सामश्रमी**–ऐतरेयब्राह्मणम् ऐतरेयारण्यकं च सायणभाष्य-युक्तं समपादयत्, ऐतरेयालोचनं ग्रन्थं च प्रणिनाय । (३) डा० **मंगलदेवः शास्त्री**–ऋग्वेद–प्रातिशाख्यं समपादयत्, आंग्लभाषायां भूमिकां चालिखत् । (४) **गोबिन्दः अनृतश्च**––शांखायन–श्रौतसूत्रस्य टीकाम् अलिखताम् । (५) **राजेन्द्रलाल मित्रः** — आश्वलायन-श्रौतसूत्रस्य सम्पादनं चकार । (६) **अविनाशचन्द्रदासः** —'ऋग्वेदिक इन्डिया' ग्रन्थम् आंग्लभाषायाम् अलिखत् । (७) **महेशचन्द्र राय तत्त्वनिधिः**– 'ऋग्वेदेर समालोचना' ग्रन्थं बंगभाषायाम् अलिखत् । (८ **नरदेव शास्त्री वेदतीर्थः** –– ऋग्वेदसमीक्षारूपेण 'ऋग्वेदालोचन'—ग्रन्थं प्रणिनाय । (९) **कपालिशास्त्री** ऋग्वेदं 'सिद्धांजन' भाष्य-युक्तं भागद्वये प्राकाशयत् । (१०) **स्वामी दयानन्दः** 'ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका' ग्रन्थं संस्कृत–हिन्दी–भाषायुतं प्रणिनाय । ऋग्वेद–विषय –विवेचनात्मकोऽयं ग्रन्थो महत्त्वं भजते । (११) **स्वामी विश्वेश्वरानन्दः** चतुर्वेद-पद सूची-ग्रन्थान् लवपुरतः प्राकाशयत् ।

(१२) **ला–महोदयः** (N.N. Law),-Age of the Rigveda ग्रन्थम् अरचयत् (१३) **श्रीरामशर्मा**—ऋग्वेदस्य हिन्दी–भाषानुवादं व्यरचयत् ।

(२)–यजुर्वेदः,शुक्लः कृष्णश्च–

(क) **यजुर्वेद-संहिता** (१) **उव्वटो महीधरश्च**-शुक्लयजुर्वेदस्य भाष्यं चक्रतुः । प्रसिद्धमिदं भाष्यम् । (२) **सायणः** काण्वसंहितायाः (२० अध्यायं यावत्), तैत्तिरीय–संहितायाश्च भाष्यं चक्रे । (३) **दुर्गादास लाहिड़ी**–शुक्लयजुर्वेदं (महीधर–भाष्य–युक्तम्) कृष्णयजुर्वेदीयां तैत्तिरीय-संहितां च प्राकाशयत् । (४) **सातवलेकरः**–शुक्लयजुर्वेदीयां वाजसनेयि-संहितां काण्वसंहितां च, कृष्णयजुर्वेदीयां तैत्तिरीयसंहितां, मैत्रायणी संहितां काठकसंहितां च महता श्रमेण प्राकाशयत् । यजुर्वेदस्य पञ्चाध्यायानां (अ० १,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३१, ३२, ३६, ४०) 'सुबोधभाष्यम्' व्यलिखत् । (५) **स्वामी दयानन्दः**-नैरुक्त-प्रक्रियाम् आश्रित्य समग्रस्य यजुर्वेदस्य संस्कृतार्यभाषायुतं भाष्यं चकार । प्रामाणिकं चैतद् भाष्यम् । (६) **जयदेव विद्यालंकारः**–यजुर्वेदस्य हिन्दी–भाषायां भाष्यं लिलेख । (७) **श्रीरामशर्मा**—शुक्लयजुर्वेदस्य हिन्दी—भाषानुवादं व्यदधात् । (८) **श्रीधरपाठकः**—शुक्लयजुर्वेदस्य मराठी–भाषायाम् अनुवादं चक्रे । (९) सत्यव्रतः सामश्रमी–शुक्लयजुर्वेदस्य बंग–भाषायाम् अनुवादं विदधौ । (१०) **ज्वालाप्रसादमिश्रः**–शुक्लयजुर्वेदस्य हिन्दी–भाषानुवादं चकार ।

(ख) यजुर्वेद–संबद्धा अन्ये ग्रन्थाः — (१) **आचार्य सायणः** — तैत्तिरीयब्राह्मणस्य तैत्तिरीयारण्यकस्य प्रशंसनीयं भाष्यं चकार (२) **भट्ट–भास्करः**-तैत्तिरीयब्राह्मणस्य भाष्यम् अकरोत् । (३) **सत्यव्रतः सामश्रमी**–शतपथब्राह्मणं सायण–भाष्य–सहितं प्राकाशयत् ४) **गङ्गाप्रसादः उपाध्यायः** समग्रस्य शतपथब्राह्मणस्य हिन्दीभाषायां भाष्यं चकार । तत्पुत्रः स्वामी डा. सत्यप्रकाशः आंग्लभाषा–भूमिका–युक्तं कृत्वा तत् प्राकाशयत् ।

(५) **उव्वटः** -कात्यायनकृते शुक्लयजुःप्रातिशाख्ये भाष्यम् अलिखत् । (६) **कर्कः, जयरामः, हरिहरः, विश्वनाथः**—एभिः स्वतन्त्रः–रूपेण पारस्करगृह्यसूत्रे भाष्याणि लिखितानि ।

(३) सामवेदः

(क) सामवेदसंहिता—(१) **सायणः**–समग्रस्य सामवेदस्य भाष्यं कृतवान् । (२) **सातवलेकरः** –सामवेदसंहितायाः परिष्कृतं संस्करणं भूमिकादियुतं प्राकाशयत् । अयं सामवेदस्य अथ–भावार्थ-युतं संस्करणमपि प्राकाशयत् । (३) **दुर्गादासः लाहिड़ी** :-सामवेदस्य सायण–भाष्यसहितं संस्करणं प्राका–शयत् । (४) सामवेद–भाष्यरूपेण एते ग्रन्थाः प्राप्यन्ते :—

(क) **सत्यव्रतः सामश्रमी**-बंग–भाषानुवादः,(ख) **तुलसीरामः स्वामी**-स्वामिदयानन्दपद्धतिम् अनुसृत्य हिन्दी–भाष्यम्, (ग) **जयदेव विद्यालंकारः**-हिन्दी–भाष्यम्, (घ) **श्रीरामशर्मा**–हिन्दी–भाष्यम्, (ङ) **वीरेन्द्र शास्त्री**-हिन्दी–भाषानुवादः।

(ख) सामवेद–संबद्धा अन्ये ग्रन्थाः— (१) **सायणः**–सामवेदीयानाम् एतेषां ब्राह्मणानां भाष्यम् अकरोत्–ताण्ड्य ब्रा०(पंचविंशब्रा०,) षड्विंशब्रा०, सामविधान ब्रा०, आर्षेय ब्रा०, देवताध्याय ब्रा०,उपनिषद् ब्रा०,संहितोपनिषद् ब्रा०, वंशब्राह्मणं च । (२) **सत्यव्रतः सामश्रमी**– एतेषां ग्रन्थानां संपादनं बंगभाषानुवादं च व्यदधात्–वंशब्राह्मणम्, देवताध्याय–ब्राह्मणम्, मन्त्रब्राह्मणम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गोभिलगृह्यसूत्रं च। (३) एभिः विद्वद्भिः एते ग्रन्थाः प्रकाशिताः—

(क) पुष्पर्षि लक्ष्मण शास्त्री द्रविडः –साम-प्रातिशाख्यम् (पुष्पसूत्रम्),

(ख) आनन्दचन्द्र :—अग्निस्वामि-भाष्य–सहितं लाट्यायन श्रौतसूत्रम् (१८७०—७२ ई०), (ग) चन्द्रकान्त तर्कालंकारः गोभिलगृह्यसूत्रम् (१८७१—८०)।

(४) अथर्ववेदः

(क) अथर्ववेद-संहिता (१) दुर्गादास लाहिड़ी- सायण-भाष्यसहिता अथर्ववेद-संहिता ५ भागेषु प्रकाशिता। (२) शंकर पांडुरंग पंडितः सायणभाष्य-साहितं संस्करणं प्राकाशयत्। (३) सातवलेकर :- अथर्ववेदसंहिताम् (शौनकीयाम्) १९४३ ईसवीये प्राकाशयत्। अयम् 'अथर्ववेद का सुबोध भाष्य' ग्रन्थ पञ्च भागेषु प्रकाशितवान्। अत्र मन्त्रार्थेन सहैव विशदा हिन्दी-व्याख्या वर्तते। अथर्ववेदे सर्वोत्तमोऽयं व्याख्याग्रन्थः। एष च श्री सातवलेकरस्य अगाधवैदुष्यं कठिनपरिश्रमं च बोधयति। (४) क्षेमकरण त्रिवेदी - समग्रस्य अथर्ववेदस्य संस्कृत हिन्दी-भाष्यं व्यदधात्। (५) जयदेव विद्यालंकारः - समग्रस्य अथर्ववेदस्य हिन्दी-भाष्यम् अकरोत्। (६) श्रीराम शर्मा - हिन्दी–भाष्यं चकार। (७) विश्वबन्धुः शास्त्री-सायण-भाष्य-सहिताम् अथर्ववेद-सहिताम् ५ भागेषु प्राकाशयत्। (८) डा० रघुवीर :- अथर्ववेदस्य पैप्पलाद–सहितां प्राकाशयत्।

(ख) अथर्ववेद-संबद्धा अन्ये ग्रन्थाः :- एभिः विद्वद्भिः अथर्ववेद-संबद्धा इमे ग्रन्थाः प्रकाशिताः —(१) विश्वबन्धुःअथर्ववेदप्रातिशाख्यम्, अथर्ववेदीय-बृहत्सर्वानुक्रमणीं च, (२) भगवद्दत्तः–अथर्ववेदीय पञ्चपटलिकां, माण्डूकी-शिक्षां च, (३) क्षेमकरणः त्रिवेदी - गोपथब्राह्मणं हिन्दीभाषानुवाद-सहितम्, (४) राजेन्द्रलाल मित्रः - गोपथब्राह्मणम्।

(५) विविधा ग्रन्थाः

वैदिकवाङ्मय-सबद्धा एते ग्रन्थाः विद्वद्भिः प्रकाशिताः प्रणीताश्च।

(१) चतुर्वेद-सहिताः (मूलमात्रम्) - वैदिक यन्त्रालयः, अजमेरस्थः। (२) डा० लक्ष्मणस्वरूपः यास्ककृतनिरुक्तं समपादयत्, आंग्लभाषानुवादं च चक्रे। (३) चन्द्रमणिः विद्यालंकारः - यास्ककृत-निरुक्तस्य हिन्दीभाष्यम्, (४) सत्यव्रत सामश्रमी - निरुक्तम् (४ भागेषु), निरुक्तालोचनम्, त्रयी-चतुष्टयम् (५) डा० चिन्तामणि विनायक वैद्यः - History of Sanskrit Literature (Vedic Period), (६) भगवद्दत्तः - वैदिक वाङ्मय का इतिहास (३ भागेषु), वेद-विद्या-निदर्शन, (७) डा० मंगलदेव शास्त्री-ऋक्प्रातिशाख्यम् (सम्पादितम्), भारतीय संस्कृति का विकास, (८) डा०-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूर्यकान्त :- अथर्वप्रातिशाख्यम् (सपादितम्), वैदिक कोश, वैदिक देवशास्त्र, वैदिक धर्म एवं दर्शन, A Practical Vedic Dictionary, (९) **विश्वबन्धु** :- वैदिक-पदानुक्रम-कोशः (१६ भागेषु), वेदसार, (१०) **लोकमान्य तिलक**:-Arctic Home in the vedas, orien, Vedic chronology and Vedanga Jyotish. (११)**हसराज** :- बैदिक कोश (प्रथमो भागः),- (१२) **डा० सम्पूर्णानन्द** :- आर्यों का आदि देश, व्रात्यकाण्डम्. (१३) **डा० वासुदेवशरण अग्रवाल** :- वेदविद्या, वेदरश्मि, उरु ज्योति, पृथ्वीपुत्र, Vision in long Darkness, Thousand Syllabled Speech, Vedic lectures. (१४) **रामगोविन्दः त्रिवेदी** :- वैदिक साहित्य, गङ्गा (वेदाङ्कः सपादितः), (१५) **बलदेव उपाध्याय** :- वैदिक साहित्य और संस्कृति, सायण और माधव, वेदभाष्य-भूमिका-संग्रह (सपादितः) (१६) **सातवलेकर**:- वैदिक व्याख्यान माला (४८ व्याख्यान ग्रन्थाः, ४ भागेषु), हिन्दी, मराठी, गुजराती, भाषासु), वेदामृत, अथर्ववेद-सुबोध-भाष्य (५ भागेष, हिन्दी-मराठी-गुजराती-भाषासु । उपनिषद्-ग्रन्थमाला (९ उपनिषदां हिन्दी–भाष्यम्),(१७)**मजूमदार** :- Vedic Age, (१८) **स्वामी हरिप्रसादः वैदिकमुनि** :- स्वाध्याय-संहिता (१९) **शिवशंकर काव्यतीर्थ** :- वेदार्थनिर्णय, वैदिक-विज्ञान, (२०)- **पं० भीमसेन शर्मा**—संस्कार-चन्द्रिका, (२१) **स्वामी दर्शनानन्दः**- उपनिषद्-भाष्य, वैदिक-विषयका लघुग्रन्थाः, (२२) **गुरुदत्तः विद्यार्थी** The Terminology of the Vedas, (२३) **प्रियरत्न** आर्षः-यम-पितृ-परिचय, वैदिक मनोविज्ञान, अथर्ववेदीय चिकित्साशास्त्र, (२४) **योगी अरविन्दघोषः** On the Vedas, Secret of fhe Vedas, (२५) **डा० पी०एल०भार्गव** India in the Vedic Age, (२६)**डा०रामगोपालः** India of Vedic Kalpasutras, वैदिक व्याकरण, (२७) **डा. कपिलदेव द्विवेदी**—अथर्ववेद का सांस्कृतिक अध्ययन, वेदामृतम्–ग्रन्थमाला (४० भागेषु), वैदिक मनोविज्ञान, वेदों में नारी, चतुर्वेद-सुभाषितावली (४ भागेषु), (२८) **डा० मुन्शीराम शर्मा**—वैदिक साहित्य और संस्कृति, (२९) **वाचस्पति गैरोला**-वैदिक साहित्य और संस्कृति, (३०) **रामकुमार रायः**-वैदिक माइथोलोजी, वैदिक इन्डेक्स, ओरिजिनल संस्कृत टेक्स्ट्स–ग्रन्थानां हिन्दी–भाषायामनुवादः, (३१) **डा. हरिशङ्कर जोशी**—वैदिक विश्व-दर्शन. (३२) **भारती कृष्णतीर्थः (जगद्गुरुः शंकराचार्यः)**—Vedic Mathematics, (३३) **पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदः** :—वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, (३४)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डा० दांडेकर:-Vedic Bibliography, (३५) डा. स्वामी सत्यप्रकाश: —Founders of sciences in Ancient India, Eng. Tr. of the Rigveda and Yajurveda, Tr. of some Upanisads, Agnihotra, वेदों पर अश्लीलता का व्यर्थ आक्षेप, (३६) पं० जयदेव शर्मा-क्या वेद में इतिहास है ?, (३७) पं० रघुनन्दन शर्मा-वैदिक सम्पत्ति, (३८) पं० वीरसेनः वेदश्रमी वैदिक सम्पदा, (३९) डा० जयदत्त-उप्रेती-वेदों में इन्द्र, (४०) डा० करमबलेकर:-Atharva Veda and the Ayurveda, (४१) डा. भार्गव Rigvedic Geography of India, (४२) लॉ (N. N. Law) Age of the Rigveda,(४३)मेहता Positive Sciences in the Vedas, (४४) रेले (Rele) Vedic Gods, as Figures of Biology.

(ख) वेदज्ञाः पाश्चात्त्या विद्वांसः

भारतीय-विदुषामिव पाश्चात्त्यैरपि विद्वद्भिः वेदानां महत्त्वं स्वीकृतम् । वैदिक-वाङ्मये विविध-विद्याऽन्वेषणाय तत्त्वार्थज्ञानाय च तैरपि भूयान् श्रमो विहितः । वैदिक-वाङ्मयाराधने तैर्यावान् श्रमो व्यधायि, स नूनमेव प्रशंसनमर्हति । तैः वैदिकवाङ्मयस्य प्रायशः सर्वेष्वेव अङ्गेषु घोरः परिश्रमो व्यधायि । तेषां वाङ्मयसेवा विद्वत्-तल्लजानामपि प्रशस्तिमाप । इह दिङ्मात्रं तत् प्रस्तूयते ।

(१) ऋग्वेद-संहिता

(क) ऋग्वेद-संहिता—(१) **फ्रीड्रिश रोजेन**-(Friedrich Rosen)-अयं पाश्चात्त्यदेशेषु सर्वप्रथमम् ऋग्वेद-सम्पादनम् अकरोत् । स ऋग्वेदस्य प्रथमाष्टकस्य मूलपाठं, तस्य च लेटिन-भाषायाम् अनुवादं १८३८ ईसवीये प्रकाशितवान् । असामयिक-देहावसानात् तत् कार्यम् अवरुद्धम् । (२) **मोक्षमूलरः** (Max Mueller)— सर्वप्रथमं सायण-भाष्य-सहितम् ऋग्वेदं समपादयत् । १८४९ ई० प्रारब्ध तत् कार्यं १८७५ ईसवीये पूर्तिम् अगात् । २७ वर्षाणां भूरि श्रमेण इदं कार्यं पूर्तिमाप । ३ सहस्राधिकेषु पृष्ठेषु ग्रन्थोऽयम् । ग्रन्थस्यास्य भूमिका शताधिकेषु पृष्ठेषु वर्तते । द्वितीयं संस्करणं १८९०-१८९२ ई० प्रकाशमाप । एतत् कार्यं मोक्षमूलरस्य कठोरम् अध्यवसायं संसूचयति । (३) **थियोडोर आउफ्रेष्ट** (Theodor Aufrecht)—समग्रम् ऋग्वेदं रोमनलिप्यां १८६१-६३ ई० प्राकाशयत् । द्वितीयं संस्करणं १८७७ ई० प्रकाशमाप । अति प्रचलितम् एतत् संस्करणं पाश्चात्त्यदेशेषु ।

(ख) ऋग्वेदस्य अनुवादा :—(१) **श्री विल्सनः** (H. H. Wilson) प्रथमोऽयम् ऋग्वेदस्याङ्ग्लभाषायाम् अनुवादकः। प्रकाशितोऽनेन ऋग्वेदानुवादः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१८५० ईसवीये। अनुवादोऽयं सायणभाष्यानुसारी। विल्सनः सायणस्य प्रबलः समर्थकोऽभूत्। [२] ग्रासमानः [H. Grassmann] समग्रस्य ऋग्वेदस्य जर्मनभाषायां पद्यानुवादम् अकरोत्। अनुवादोऽयं १८७६-७७ ई० प्रकाशितोऽभूत्। रोठ-महोदयस्य शिष्योऽयं ग्रासमानः। भाषा-वैज्ञानिकीं पद्धतिमाश्रित्य अनुवादम् अकरोत्। सायण-विरोधिष्वस्य गणना। [३] लुडविश (A. Ludwig)—अयं मध्यममार्गम् अव-लम्ब्य षड्भागेषु ऋग्वेदस्य-जर्मन-भाषायाम् अनुवादम् अकरोत्। १८७६-१८८८ ई० ग्रन्थः प्रकाशमाप। [४] ग्रिफिथ [R.T.H. Grifffith]—अयं चतुर्णामपि वेदानाम् आंग्लभाषायां पद्यानुवादकः। सायण-भाष्यं प्रायशः अनुसृत्य ऋग्वेदस्य पद्यानुवादं १८८९-१८९३ यावत् प्राकाशयत्। आवश्यक-टिप्पणी-सहितोऽयं पद्यानुवादः। [५] प्रो० ओल्डेनवर्ग [H. Oldenberg]-समग्रस्य ऋग्वेदस्य जर्मन-भाषायामनुवादम् अकरोत्। १९०९-१९१२ ईसवीये प्रकाशितोऽभूद् ग्रन्थः। अत्र वैदिक-समालोचनायाः पराकाष्ठा प्राप्यते। ऋग्वेदानुवादेषु सर्वोत्कृष्टोऽयं मन्यते। वैदिक-समालोचनायाम् ओल्डेबर्गस्य तदेव स्थानम्, यद् वेदान्ते शंकराचार्यस्य। (६) लांग्ल्वा [Langlois]--अयं समग्रस्य ऋग्वेदस्य चतुर्भागेषु फ्रेंच-भाषायाम् अनुवादम् (१८४८-१८५१ ई०) अकरोत्। महत्त्वपूर्णोऽयम् अनुवादः।

कतिपयैः पाश्चात्यैः विद्वद्भिः ऋग्वेदस्य विशिष्टम् अशमेवावलम्ब्य अनुवादादिकं कृतम्। तेषु विशेषम् उल्लेखम् अर्हन्ति—(१) रुडोल्फ रोठः (Rudolph Roth), गेल्डनर (Karl Geldner) केगी (Adolf Kaegi) च, एतौ ७० सूक्तानाम् अनुवादं कृतवन्तौ, (२) रोअर (Roer), (४) हिलेब्राण्ट (A. Hillebrandt)।

(ग) **ऋग्वेदीयं संकलनम्**—कश्चित् छात्रोपयोगि संकलनमेव ऋग्वेद-सूक्तानां विहितम्। तेषु उल्लेख्यानि सन्ति-(१) **मोक्षमूलरकृतम्** Vedic-Hymns, (२) ओल्डेनबर्गकृतम्-Vedic Hymns, (३) मैकडानल [Macdonell] कृतम्-A Vedic Reader for students, Hy-mns from the Rigveda, [४] थामस [E. C. Thomas] कृतम्-Vedic Hymns, (५) पीटर्सन (Peter Peterson) कृतम् Hymns from the Rigveda.

(घ) **ऋग्वेदीया ब्राह्मणादिग्रन्था**:-(१) **प्रो० हाउगः** [M. Haug] ऐतरेय-ब्राह्मणं समपादयत्। आंग्लभाषानुवादं १८६३ ई० भागद्वये प्राकाशयत्।(२) **आउफ्रेष्टः** ऐतरेयब्राह्मणस्य रोमनाक्षरेषु सायणभाष्य-टिप्पण्यादियुक्तं संस्करणं १८७९ ई० प्राकाशयत्। (३) **प्रो० लिन्डनरः**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(B. Lindner) – कौषीतकि ब्राह्मणं १८८७ ई० संपाद्य प्रकाशितवान् ।(४) डा. कीथः (Keith)ऐतरेय-कौषीतकि--ब्राह्मणयोः आंग्लभाषानुवादम् अकरोत्। (५) स्टेन्त्सलरः (A.F. Stenzler) आश्वलायन-गृह्य-सूत्रं प्राकाशयत्। (६) हिलेब्राण्टः-शांखायन-श्रौतसूत्रं समपादयत् ।

(२) यजुर्वेद–संहिता

(क) शुक्ल–यजुर्वेदः

यजुर्वेदीयाः संहिताः—(१) वेबर : (Albrecht Weber)— शुक्ल-यजुर्वेद संहितायाः महीधरभाष्य-सहितं संस्करणं १८४६–१८५३ ई० प्रकाशितवान् । यजुर्वेदीय–काण्व–शाखायाश्चापि संस्करणं १८५२ ई० प्राकाशयत् । (२) ग्रिफिथः– शुक्लयजुर्वेदस्य १८९९ ई० आंग्लभाषायां पद्यानुवादं व्यधात् ।

यजुर्वेदीया ब्राह्मणग्रन्थाः—(१)वेबरः शतपथब्राह्मणस्य १८५५ ई० आलोचनात्मक संस्करणं प्रकाशितवान् । अत्र सायणादीनां त्रयाणां टीका अपि सन्ति । (२) केलेंडः (W.Caland)-शतपथब्राह्मणस्य, आंग्लभाषायां प्रस्तावनायुक्तं, संस्करणं प्रकाशितवान् । (३) ईग्लिंगः (J. Eggeling)—शतपथब्राह्मणस्य आंग्लभाषायाम् अनुवादं विधाय, बृहतीं भूमिकां च विलिख्य, 'सेक्रेड बुक्स आफ द ईस्ट सीरीज' ग्रन्थमालायां पञ्चसु भागेषु प्राकाशयत् ।

बेबरः कात्यायन-श्रौतसूत्रं १८५९ ईसवीये, **स्टेन्त्सलरः** च पारस्कर-गृह्यसूत्रं संपाद्य प्रकाशितवन्तौ ।

(ख) कृष्ण-यजुर्वेदः

कृष्णयजुर्वेदीयाः सँहिताः—(१) वेबरः —कृष्णयजुर्वेदीयां तैत्तिरीय-संहितां रोमनाक्षरेषु संपाद्य १८७१-७२ ई० प्राकाशयत् । स एव मैत्रायणी-संहितां १८४७ ई० संपाद्य प्रकाशितवान् । (२) श्रेडरः (L V. Schroeder) –मैत्रायणी-संहितां चतुर्भागेषु १८८१–१८८६ ई० प्रकाशितवान् । स एव काठकसंहिताम् अपि १९१० ई० प्राकाशयत् । (३) कीथः (Keith)— तैत्तिरीयसंहितायाः आंग्लभाषायाम् अनुवादं १९१४ ई० प्रकाशितवान् । अत्र २०० पृष्ठानां वैदुष्यपूर्णा भूमिका ।

कृष्ण यजुर्वेदीयाः सूत्रग्रन्थाः —

(१) केलेण्डः(W.Caland)एष एतान् सूत्र-ग्रन्थान् संपाद्य प्रकाशितवान्-बौधायनं श्रौतसूत्रं धर्मसूत्रं गृह्यसूत्रं च, काठक–गृह्यसूत्रम्, बाधूलसूत्रम्, वैखानस-गृह्यसूत्रं च । [२] विन्टरनीत्सः (M. Winternitz)-आपस्तम्बगृह्यसूत्रं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समपादयत् । (३) गार्बे (R.Garbe)आपस्तम्ब-श्रौतसूत्रं १८८१-१६०३ई० प्राकाशयत् । (४) क्नाउएरः (F. Knauer)–मानवश्रौतसूत्रं प्राकाशयत् ।

(३) सामवेद संहिता

सामवेद संहिता—(१) **स्टेवेन्सनः** (J. Stevenson)-सामवेदस्य राणायनीय-शाखायाः सस्करणम् आंग्लभाषानुवाद-सहित समपादयत् । तच्च विल्सनः १८४३ ई० प्रकाशितवान् । (२) बेन्फे [Benfey]–कौथुमशाखायाः सामवेदस्य संस्करणं, जर्मनभाषानुवाद-सहितं, १८४८ ई. प्राकाशयत् ।

(३) **केलेन्डः**–जैमिनीय-शाखायाः सामवेदस्य सस्करण रोमनाक्षरेषु १६०७ ई० प्राकाशयत् । अतिशुद्धम् इदं संस्करणम् । भूमिकायुक्तं चतत् । (४)**ग्रिफिथः**-सामवेदस्य आंग्लभाषायां पद्यानुवादं १८८६ई० वाराणसीतः प्राकाशयत् ।

सामवेदीय-ब्राह्मणग्रन्थाः —[१] वेबर :– अद्भुत-ब्राह्मणम् जर्मन-भाषानुवादसहितं १८५८ ई० प्राकाशयत् । एष वंशब्राह्मणम् अपि समपादयत् ।

(२) बर्नेलः (A.C. Burnell) अनेकसामवेदीयब्राह्मणानां सम्पादनम् अकरोत् । तानि सन्ति—सामविधान-देवताध्याय-वंश-सहितोपनिषद्-आर्षेय-ब्राह्मणानि । (३) **एर्टलः** [H. Oertel]-जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणस्य आंग्लभाषानुवाद-सहितं संस्करणं प्राकाशयत् ।(४)**केलेन्डः**-जैमिनीय-ब्राह्मणस्य जर्मन-भाषायाम् अनुवादं चक्रे । आर्षेय-ब्राह्मणं जैमिनीय-गृह्यसूत्रं च समपादयत् । (५) **स्टेन कोनो** (Sten Konow)सामविधान-ब्राह्मणस्य अनुवादं चकार । (६) **गास्ट्रा** (D. Gaastra)–जैमिनीय-गृह्य-सूत्रस्य डच-भाषायाम् अनुवादं चकार । एष जैमिनीयश्रौतसूत्रम् अपि समपादयत् ।

(४) अथर्ववेद–संहिता

अथर्ववेद संहिता– **रोठः ह्विटनी च** (Rudolph Roth, W D. whitney) अथर्ववेदस्य शौनकीयां शाखां सपाद्य १८५६ ई० प्रकाशितवन्तौ । [२] **ब्लूमफील्डः गार्बे च** [M. Bloomfield, R. Garbe] अथर्ववेदस्य पैप्पलाद–शाखायाः काश्मीरतो जीर्णां प्रति प्राप्य फोटो–पद्धत्या तां प्रकाशितवन्तौ । [३] **केलेन्ड** :– अथर्ववेद–संहिताया आलोचनात्मकं संस्करणं प्राकाशयत् । (४) **ग्रिफिथः**—अथर्ववेदस्य आंग्ल-भाषायां पद्यानुवादं १८६५-१८६८ ई० प्राकाशयत् (५) **ह्विटनीलैनमैनः च** (W. H. Whitney, C. R. Lanman) अथर्ववेदस्य आंग्लभाषायाम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुवादं भूमिका–टिप्पण्यादियुक्तं, १६०५ ई० प्रकाशितवन्तौ (६) **ब्लूमफील्डः**– पैप्पलाद-संहिताया आंग्लभाषानुवादं १६०१ ई० प्रकाशितवान् ।

ब्राह्मणग्रन्थाः (१)गास्ट्रा–गोपथब्राह्मणस्य संस्करणं १६१६ ई० प्रकाशितवान् । (२) **ब्लूमफील्ड** :–अथर्ववेदीयं कौशिकसूत्रं १८६०ई०प्राकाशयत् ।

(५) विविध–ग्रन्थाः

अत्र केचन अति महत्त्वपूर्णा एव ग्रन्था उल्लिख्यन्ते :–

कोशग्रन्थाः-[१] **रोठः बार्टलिकः च** [R. Roth, Otto Bohtlingk] संस्कृत जमन–भाषामयः सप्त–विशालकाय-भागेषु द्वयोरेतयोः महता श्रमेण प्रकाशितोऽभूत् । राठः वैदिकभागं संगृहीतवान् । बार्टलिकः च लौकिक-संस्कृतभागम् । (२)**ग्रासमान** :–ऋग्वेदिक–कोशं प्राकाशयत् । (३)**हिलेब्राण्टः** Vedic Dictionary वैदिक–कोश) ग्रन्थं ३ भागेषु प्राकाशयत् ४] **मैकडानलः कीथः च**-Vedic Index (वैदिक कोश) ग्रन्थं भागद्वये प्रकाशितवन्तौ । एष वेदाध्ययनार्थम् अत्युपयोगी कोशः । वैदिक–संस्कृत्याः संक्षिप्त-विश्वकोश–रूपेणास्ते ।

व्याकरण-ग्रन्थाः- (१) **ह्विटनी** Sanskrit Grammar (संस्कृतव्याकरण)-ग्रन्थम् अलिखत् । अत्र वैदिक-लौकिक-संस्कृतयोः द्वयोरपि व्याकरणं वर्तते । (२) **मैकडानल** : वदिकव्याकरणे ग्रन्थद्वयम् अलिखत् - (क) Vedic Grammar, (ख) Vedic Grammar for Students ग्रन्थम् अरचयत् । स वैदिक-व्याकरणस्य पाणिनिः अस्ति । (३) **वाकरनागेल** : (wackernagel) वैदिकव्याकरणस्य जमनभाषायां प्रौढं व्याकरणम् अरचयत् । सर्वोत्कृष्टोऽयं ग्रन्थो वैदिकव्याकरणस्य ।

छन्दोग्रन्था :- (१) **वेबरः**- 'इन्डिशे स्टुडिएन' - ग्रन्थे वैदिक–छन्दसां विवेचनम् अकरोत् । (२) **आर्नोल्ड** : (E. V. Arnold) वैदिकछन्दो–विषये 'Vedic Metre' ग्रन्थम् अरचयत् ।

सूचीग्रन्थाः - (१) **ब्लूमफील्डः** Vedic concordance (मन्त्र-महासूची) नामकं ११०२पृष्ठेषु विशालकायं ग्रन्थं १६०६ई० प्राकाशयत् । स Rigveda Repetitions (ऋग्वेदे पुनरावृत्तयः) ग्रन्थमपि लिलेख ।
(२) **कर्नल जैकबः** G. A. Jacob) 'उपनिषद्-वाक्य-कोश' ग्रन्थं प्रणिनाय । (३) **लुई रेनू** (Louis Renou) - Bibliographie Vedique (वैदिक वाङ्मय-ग्रन्थसूची, ग्रन्थं फ्रेंचभाषायां ६ भागेषु प्राकाशयत् । अत्र वैदिकसाहित्य-विषयकाः सर्वे प्रकाशिता ग्रन्थाः संगृहीताः सन्ति ।

वैदिक देवता-विज्ञानम्–विषयेऽस्मिन् पाश्चात्त्यैः तुलनात्मकम् ऐतिहासिकं च

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विवेचनं कृतम् । विषयेऽस्मिन् मैक्समूलर - हिलेब्राण्ट - मैकडानल-प्रभृतीनाम् अनेके ग्रन्थाः सन्ति । (१)हिलेब्राण्टः - Vedische Mythologie वैदिक देवशास्त्रम्) ग्रन्थं जर्मन-भाषायां प्रणिनाय । (२) मैकडानलः Vedic Mythology - ग्रन्थं १८९७ ई० प्राकाशयत् । विषय-विवेचन-दृष्ट्या उत्तमोऽस्य ग्रन्थः । (३) कीथः Religion and Philosophy of veda and upanisad ग्रन्थे वैदिकं धर्मं दर्शनं च सम्यग् व्यवेचयत् ।

वैदिक-साहित्येतिहास-ग्रन्थाः - प्रमुखग्रन्थाः सन्ति - (१) मैक्समूलरः- History of the Ancient Sanskrit Literature, (२) वेबरः:- History of Indian Literature (१८८२, (३) मैकडानलः- History of Sanskrit Literature (१९००), (४) विन्टरनीत्सः History of Indian Literature-मूलग्रन्थो भागत्रये जर्मनभाषायाम् आस्ते ।

विविधाः- केचन एवात्र निर्दिश्यन्ते । (१)गोंडः-(J.Gonda' वैदिक-विषये बहुमूल्यग्रन्थान् प्रणिनाय । तद् यथा - Stylistic Repetitions in the Veda (वेदेषु पुनरुक्तयः शैली-विज्ञानदृष्ट्या), Vision of the Vedic Poets (वैदिक-कवि-दर्शनम्), Epithets in Rigveda (ऋग्वेदे विशेषणानि), (२) एलिजारेनकोवा (Elizarenkova) रूसीभाषायां ग्रन्थम् अलिखत्- ऋग्वेदे लुङ्लकार-प्रयोगाः (२) ब्लूमफील्ड :- The Religion of the Veda, (४] लुई रेनूः-फ्रेंच-भाषायां लिखितो ग्रन्थः - वेदेषु परोक्षभूतप्रयोगाः ।

स्तुता मया वरदा वेदमाता,
प्र चोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् ।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं,
द्रविणं ब्रह्मवर्चसम् ।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ॥

अथर्व० १९-७१-१

अर्थः-हे देवो ! मैंने द्विजों को पवित्र करने वाली, वरदा (अभीष्ट-साधक) वेदमाता की स्तुति की है। आप सब मुझे प्रेरणा दें। दीर्घ आयु, जीवन-शक्ति, सुसन्तान, पशुधन, यश, वैभव और ब्रह्मतेज मुझे देकर ब्रह्म-लोक को जाइए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यस्यच्छायाऽमृतम्

–विद्यावाचस्पतिः **श्री रामदत्तशास्त्री**
एम्० ए० (हिन्दी-संस्कृत) साहित्याचार्यः
पक्को सराय, अनूपशहर (बुलन्दशहर)

वैदिकवाङ्मयं हि नाम मानवमात्रस्य कृते सुखशान्तिसमृद्धिपरिपोषकं पुष्टिवर्धनं मनोविकारापहारि सद्विचारासार–समुत्पादनपरं शश्वदात्माभ्युदयकारि जीवनज्योतिरादीप्तिकरम्। वैदिकवाङ्मयतरुर्हि नितरामच्छितो विततोऽहर्निशघनच्छायाप्रदायी मधुरफलवान्, समभ्युपेतपरिश्रान्तजनमानसशंकरोऽविरतविततताापहारी जगज्जीवातुरूपः। सांप्रतम् अस्मद्देशे नवयूनां नवयुवतीनां च करेषु नापतति शर्मशान्तिप्रदं सून्नतविचारवर्धकं तादृशं मङ्गलमयं स्वस्थं सत्साहित्यम्, यदधीत्यनवतरुणा नवतरुण्यश्चाविरतं कलुषितविचारधारानिमग्नाः सततं शृङ्गारभावजागरूकाः कामयमाना अपि सत्पथाध्वनीना न भवन्ति, प्रत्युत कलुषितभावभरितसाहित्याधीतितत्परास्तथाविधाविरतचलचित्रजगद्दर्शनसंदीप्तकामवासनाऽनलास्तथाविधेष्वेवानिशं विचारेषु ब्रुडितमानसा न कथमपि जीवनाभ्युदयाध्वानं लभन्ते।

सत्यस्य पन्था विततो देवयानः

अयि भारतीया भ्रातरः! यदि यूयं वास्तविकं तथ्यं सुखमासादयितुं कामयध्वे तर्हि त्वरया विहाय विविधान् अवद्यानध्वनः कल्मषान्, भूयो वैदिकमार्गानुररीकुरुत। स एव सारभूतः सत्यो देवयानो महान् पन्थाः। इन्द्रियाणां दमनेन साधुना चेतसा चिन्तयत जन्ममरणापवर्गाय जीवनवैशद्याय वैदिकसंस्कृतिसम्पदम् अविरामोन्नतिपरां कापटिकजनजालनिर्मलां गुर्वीम्। एष एव मार्गः सच्चिदानन्दस्वरूपस्य प्रभोः सम्मेलनाय सांसारिककष्टकलापापहाराय परमशान्तेरुपलब्धये च।

पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति

भगवती श्रुतिः स्वयं वैदिकसाहित्यस्य संस्तवं कुरुते। ऋग्यजुस्सामाथर्वरूपं देवस्य परमात्मनः काव्यं कवित्वरूपं सार्वकालिकम्, यत्कदापि न जीर्णं भवति, न च म्रियते। एतत्काव्याध्ययनाध्यापनाभ्यामेव परमां शाश्वतिकीं च शान्तिं यूयं यास्यथ। अयमेव सुखावहो दुःखापहाश्च मार्गः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय

भगवदाराधनं हि जीवनस्य परमं महत्त्वम् । यदि जगति विविधानि अनीकानि विजित्य विविधान्अरीन् समर्घ्यं. धन-धान्य-विविधालंकारसम्भारभूतिं भव्यभावनायोगान्आसाद्य प्रचुरां मेदिनीं च विजित्य तादृशमानन्दम् उपलब्धासि सर्वमिद क्षणिक विनाशि च सुखम् । यद्येषु तथ्यं सुखमभविष्यत् तर्हि कथं धनधान्य-पूर्णजीवना जना आरण्यकाः संजाताः । सकलान् सांसरिकरागान् सांसरिक जनदृष्टौ सुखागारान् विहाय कथ मुनित्वमापन्नाः । कथं जनकादयो–राजर्षयः स्वीयां समृद्धां राज्यसमृद्धि परिहाय विपिनवासिनोऽभूवन् । "नाल्पे सुखमस्ति भूम्नि सुखम्" यो 'व भूमा तत् सुखम्' । भूमा वै परमेश्वरः यजुषि प्रतिपादितम्

"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात् । तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय (१)" यः पुरिआत्मनि शरीरे वा शेते स पुरुषः परमेश्वरः, स महानस्ति, स आदित्यवर्णः अदितेः प्रकृतेरपत्यमादित्यः सूर्यः स हि तमसः विविधादज्ञानात् तमोगुण-गणाच्च परस्ताद् वर्तते । तमेव परमात्मानं विदित्वा मननशीलो जनो मृत्युं निधनम् अत्येति अतिक्रामति । नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय इतोऽपसृत्य प्रभोः प्राप्तये च अन्यो मार्गो न वर्तते । कठोपनिषदि आचार्य यमनचिकेतसोः तवैव वाहास्तव नृत्यगीते" इति, कथावतारेणापि सुस्पष्टमेव मार्गो व्याहृतः । यतो हि अनित्यानि शरीराणि विभवोनैवशाश्वतः नित्यं सन्तिहितोमृत्युः, कतव्यो । धर्मसंग्रहः !!१!!

नित्यसुखं परिहायानित्यानि सुखानि धनधान्यभोगविलासवनितादिसुखं नश्वर को मतिमान् मानवः प्राप्तुं कामयिष्यते

"इह चेद वेदीदथ सत्यमस्ति,

नो चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः,,

उपनिषदा साधु घोषणा विधीयते, यदि पुमानस्मिन् मानवजन्मनि तस्य जगन्निर्मातुः सच्चिदानन्दस्वरूपस्याजस्य जगदीश्वरस्य सत्स्वरुपमस्मिन्न् । मनुष्यजन्मनि जानाति तर्हि सत्यं शोभनम् यतो ह्येदं मानवजन्म परमपुण्यैराऽसाद्यते, मनुजयोनावेव सकलानि सत्कर्माणि संचेतुं जनोऽर्हति, यदि तु नात्र योनावपि स प्रभुं पितरं वेत्तुं नालंकर्मीणोऽभूत् तर्हि जीवनस्यास्यापि महती विनष्टिः विनाशः । अतः प्रभोः शरणमेव जीवनप्रदम् अमृतम् । तस्यैव छाया कृपावाऽभीष्टा वर्तते ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धियो यो नः प्रचोदयात्

—डॉ० धर्मानन्दशर्मा, वैदिकशोधसंस्थानम्,
पंजाबविश्वविद्यालयः, होशियारपुरम् (पंजाब)

पुरावृत्तानुसन्धानपरम्परायां विशिष्यते खलु देवशास्त्रम् । सुकीर्घकालाधिगम्यतेऽविच्छन्नाऽक्षुण्णा चास्य चिन्तनपरम्परा । चाक्षुषपदार्थेषु चैतन्याभिमानं दैवत्वारोपणं चास्य वैशिष्ट्यम् । यः कोऽपि पदार्थः प्रभावयति मानवजीवनं हिता हृतप्रतिविधानेन स स्तूयते गीयते च वैदिकऋर्षिभिः । तेन हि पृथिव्याकाशनदीनदपर्वतादयः सर्वे सर्गपदार्थाः देवत्वमादधाना उपासनायोग्यत्वमगच्छन् । मानवीकरणं चेतनीकरणं वैतदार्याणां वैदिकदेवतावादस्य विशिष्टं लक्षणं मन्यते मनीषी मैकडानलः ।

महीयते खलु वैदिकवाङ्मये सवितुः स्थानम् । सवितादेव एव द्विजैरनुष्ठीयमानेषूपनयनसंस्कारेषु गुरुमन्त्रत्वेनानुश्रूयते । प्रथितोऽद्यापि गायत्रीमंत्रः सर्वकार्येषु सवितारं स्तूयमानः । भौतिकपिण्डोऽयं कालान्तरे धातृनेतृशब्दवद् व्यावहारिकशक्तिरूपेणाभ्युपगच्छन्नवलोक्यते । परम्पराप्रसादात्प्रमादादज्ञानाद्वायं सूर्यस्य पर्यायत्वेन विशेषणत्वेन च प्रयुज्जानो दृश्यते । भ्रान्तिविलसितमिदं सवितासूर्यसमीकरणं नूनं सर्वथा न मर्षणीयम् । न सविता नाम कश्चिद् धर्मो गुणो वा कश्चित्पदार्थविशेषस्य । पदार्थान्तरवत्सविताऽपि स्वतंत्र एवास्ति प्राकृतिकः पिण्डः ।

वस्तुतः कोऽसौ पुनः सविता ? नायं प्रश्नः सर्वथाऽचर्चितपूर्वः । न तथापि चर्चाचरत्वेन याथातथ्येनाधिगतावितथस्वरूपः । प्रायेण भाष्यकाराः सवितारं सूर्यस्य विशेषणत्वेन पर्यायत्वेन चाभ्युपगम्यमाना दृश्यन्ते । परञ्च सविताविषयकान् मंत्रानालोच्य सुव्यक्तं भवति, यन्नायं कथमपि सूर्यः । न ह्यस्य कथमपि सर्वथा संवादः सूर्येण । नूनमस्ति द्वयोः किञ्चिदनतिक्रमणीयं साम्यम् । तदेव साम्यं समीक्ष्य प्राचीनैर्भाष्यकारैस्तेषामेव पन्थानमनुसरद्भिराधुनिकैश्चापि समीक्षकैः सविता-सूर्ययोरभेदः साधितः । प्रकाशकत्वं गतिशीलत्वं चोभयोः समानो गुणः । द्वयोरेव च प्रेरणापणेन जगदिदं प्राणिव्यूहश्चात्रत्यो विविधेषु व्यापारान्तरेषु व्यापृतो भवति । यच्चास्ति द्वयोः प्रकृतिगतं वैषम्यं न तदनल्पम् । सदैव वैषम्यं विभाव्य केचन विद्वान्सो द्वि-त्रा एव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किमपि तर्कयन्ति सर्वथाऽतर्कितपूर्वम् । अनुपेक्षणीयवचनानां तेषामप्रतिहत-वचांसि नून ध्यातव्यानि सानुग्रहधिया धीधनिभिरनुसन्धित्सुभिः। पूर्वापर-मंत्राकलनसाकल्येन परीक्ष्य तत्रत्यं तत्त्वं तन्मत एव बद्धपक्षपातोऽहं तत्पक्षक्षो-दाय मोदाय चाभिनवानुसन्धित्सूणां किमपि प्रमाणत्वेन विनिवेदयामि ।

१—निखिलेऽपि वैदिकवाङ्मये सूर्यस्य दिवाप्रकाशकत्वेन सवितुश्च रात्रिप्रकाशकत्वेन स्तुतयो दृश्यन्ते। (ऋग्वेदे-१-३५-१, १-३५-१०, २-२८-४, इत्यादिमंत्रेषु) तेन च सूर्यो द्युपतिः, सविता च निशापतिः। सवितुश्च कुत्रचिन्न-क्तं दिवप्रकाशोऽपि श्रूयते न पुनः सूर्यस्य क्वचिद्रात्रिप्रकाशत्वमवलोक्यते । अस्तं गतेऽपि सूर्ये न सविताऽस्तमेति स तु सूर्यप्रकाशाभावे मार्गं दिशति प्राणिनः (ऋग्वेदे २-८३-३, १-३५-२, २७-७६-१, ५-८२-८ इत्यादिषु ।

(२) विशिष्यते हि सविता 'अरमति' इति विशेषणविशेषेण । विशेषणे-नानेन सवितुः प्रकाशस्य विश्रान्तिविरहत्वमुपपद्यते न पुनः सूर्यस्य प्रकाशे तत् तथा। न सूर्यप्रकाशो विश्रान्तिरहितः। गुणेनानेन भिद्यते सर्वथा सविता सूर्यात् । अन्तरिक्षवैज्ञानिका अपि समथयन्ति सूर्यप्रकाशस्य विश्रान्तिधर्मत्वम् । अपरत्र च सविता स्तूयते 'अमति' शक्तिमादधानः। शक्तिरेषा विभिन्नकालं सवितुः प्रकाशस्योदयास्तत्वं द्योतयति । क्षणमुदयं क्षणं चास्तं प्रतिदिशन् सविता नूनमद्भुतो बिभर्ति गुणः ।

(३) सूर्यरश्मीनां 'ध्रुवासः' इति विशेषणं सवितुश्च 'गभीरवेपा' इति। 'ध्रुवास' इति विशेषणं तु सूर्यरश्मीनां निष्कम्पकत्वमाख्यापयति । 'गभीर-वेपा' च सवितुः रश्मीनां स्पदनत्वं कम्पनत्वं वा प्रथयति । एकस्मिन् निष्पद-नत्वमपरस्मिन् च सर्वथा निश्चलत्वमिति सुतरां भिद्यते द्वयोर्गुणधर्मः ।

(४) श्रूयन्ते हि सूर्यस्य सप्ताश्वाः (ऋ० ५-४५-९ इत्यादिषु) ये खलु नयन्ति तद्रथमवितरतम् । सवितुश्च द्वावेवाश्वौ प्रायेण सवत्र श्रूयेते। (१-३५-५) तौ च श्वेतचरणैः सावतु द्विरावृत्तं रथं नयतः। सुतरां भिद्यते द्वयोः रथस्य स्वरूपं संख्यां चाश्वानां गतिरध्वानं च ।

(५) 'अष्टौ व्यख्यात्ककुभः' (१-३५-८) इति मंत्रेण ज्ञायते यत् सविता भूभागतोऽत्यन्तं समीपं राजते । त्रियोजनमतिक्रम्य तस्य रश्मयो भुवि पतन्ति। सूर्यस्तु शतयोजनदूरादापतन्ति रश्मयः ।

तदेवं सन्ति शतशः प्रमाणानि । यानि द्वयोः सुतरां साधयन्ति भेदम् । कोऽयं पुनरसौ प्राकृतः पिण्डो यो हि पुण्यश्लोकैरस्माकं पूर्वपुरुषैः ऋषिभिः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साक्षात्कृतः । साक्षात्कृतधर्माणो हि ते क पदार्थं साक्षात्कृत्य स्तुवन्ति स्म । अस्तु, भो ! नाहं किमप्यभिनवमुन्मिषामि । राँथमहोदयेन त्वस्य तुलना ग्रोकस्य 'हर्मेसा' त्कृता यो हि योजयति अहोरात्रसम्बन्धः । न चात्रानुपेक्षणीयवचनः सुव्वैयामहाभागोऽपि यस्तु योजयति सम्बन्धोऽस्य 'अरोरा' उपग्रहविशेषात् । स एव कारणं उत्तरोध्रुवस्य षट्मासदीर्घनिशाव्यापाराणाम् । वचस्त्वत्रावधेयं मनीषिणो बालगंगाधरतिलकस्यापि । तन्मते उत्तरीध्रुवप्रान्तादेवार्याः भारतं सम्प्राताः । तत्रैव साक्षात्कृतोऽयं सवितादेव किं 'अरोरा' एव ? यस्य धनुषाकारः प्रकाशविम्बो घोटकद्वयमिव प्रतिभाति दर्शकाणाम् । अन्यो वा कश्चिदविचारितपूर्वो नूनं विचारार्हो विचारविद्भिः । अन्ते च तत्सवितुः प्रकाशाय 'धियो यो नः प्रचोदयादिति' कामयमानोऽहं सवितास्वरूपानुसन्धानाय सवितरमेव नौमि स्तौमि च ।

देशार्थं प्राणार्पणम्

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा
अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना
वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम ॥

अथर्व० १२-१-६२

अर्थः—हे पृथिवी ! तेरी गोद में रहते हुए हम नीरोग और क्षय आदि रोगों से रहित (स्वस्थ) हों । तेरी सन्तान हमारे लिए हितकर हो । हम दीर्घायु हों । हम जागरूक रहते हुए तेरे लिए बलिदान हों ।

सर्वे सुखिनः सन्तु

मा वो रिषत् खनिता, यस्मै चाहं खनामि वः ।
द्विपाच्चतुष्पादस्माकं, सर्वमस्त्वनातुरम् ॥

ऋग्० १०-९७-२०

अर्थः—हे ओषधियो ! तुम्हें खोदकर निकालने वाला अक्षत रहे और रोगी भी नीरोग हो । सभी मनुष्य और पशु नीरोग रहें ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदस्यास्ति विशेषतत्त्वमहिमा

—श्री वासुदेवपाण्डेयः, व्याकरण-साहित्याचार्यः,
भूतपूर्वप्राचार्यः, संस्कृतमहाविद्यालयः,
भवानी छापर, देवरिया (उ० प्र०)

सम्यग् बुद्धिविवर्द्धनाय जनतासन्मानसे साम्यता,
वादोद्भावनहेतवे च गुरवो वेदाः समेऽनादयः ।
वर्तन्ते भुवि मानवीयजडतातापत्रयोन्मूलने,
दीक्षादाननिमित्ताशासनगुणालङ्कारसभूषिताः ॥१॥

कोटीन्दुश्रितकान्तिमध्यविलसद् यद् ब्रह्मनिष्ठं मह–
ज्जोतिश्चक्रमितश्च सृष्टिविधये जातो विधाता हरिः ।
रक्षार्थञ्च लयस्वभावसमितः श्रीशङ्करश्चोत्तम–
श्चैते ब्रह्मनिविष्टतत्त्वगुणिनो वेदात्मसिद्धेश्वराः ॥२॥

वेदप्रेरणया चराचरगुरुर्निर्माणशक्त्या युतो,
ब्रह्मालोकपितामहोऽपि सतत विष्णुर्जगद्-रक्षकः ।
देवेषूत्तमशङ्करश्च सहसा स्वेच्छालयोद्भावको,
ब्रह्माण्डावन तत्परा हि जगतां मातेश्वरी चाम्बिका ॥३॥

वेदादेव समर्चकं जन-मनः सत्त्वात्मकं सम्भव-
त्सर्वाङ्गीणसुनीतिरीतिविधिना विद्वेषभावं तमः ।
दूरीकृत्य शुभोदयाय जगति प्रोद्भाव्य चैक मतं,
साम्यत्वे सति दिव्यसौख्यमपरं लब्ध्वा चिरं मोदते ॥४॥

वेदेनैव वयं महत्त्वपदवीं लब्ध्वा निरातङ्कता,
वेदे नैव हि यज्ञधूमसहितः पूतः सुगन्धान्वितः ।
वायुर्वाति च वेदमन्त्रसहितैर्यज्ञैः सुवृष्टिप्रदा,
मेघास्तेन हि लब्धजीवनधनानन्देन युक्ता जनाः ॥५॥

उर्ध्वं मूलमधः सुशाखमपरं छन्दांसि पत्राण्यथो,
साश्चर्योत्तमशक्तिनिष्ठमतुलं ससारवृक्षं प्रभुम् ।
तं वेदं भगवन्तमेव नितरां ज्ञात्वा त्रिदेवाः परं
तत्प्रोक्तोक्ति-वचो निशम्य सततं सृष्ट्यादिकार्ये रताः ॥६॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदानां वैशिष्ट्यम्

—श्री शिवपूजनशास्त्री
नई बस्ती, बड़ौत (मेरठ)

(१)

अस्तीश्वरीया कृतिरेष वेद :
न यत्र कश्चिद् विपरीतलेख :।
स्वतः प्रमाणं ह्यत एव वेदान्,
ब्रुवन्ति देवा ऋषयो महर्षयः ॥

(२)

ग्रन्थोऽस्ति नो कश्चिदियत्पुराण :,
समस्तविश्वस्य च पुस्तकालये।
नेदं मतं केवलमस्मदीयम्,
वैदेशिकानामपि बुद्धिरेषा ॥

(३)

अस्यैव वेदस्य च सारभूतः,
मन्त्रोऽस्ति यं गुरुमंत्रं वदन्ति।
एतत्समः क्वापि न कोऽपि मन्त्रः,
इष्टं जनः यस्य जपैरुपैति ॥

(४)

जागर्ति जीवत्यधुनार्यजातिः,
ज्ञानस्य राशीनुपलभ्य वेदान्।
आसीत् कदाचिद् गुरुरेष देशः
वैदिकविचाराश्रयणेन नूनम् ॥

(५)

वेदानुकूला वयं स्याम यावत्,
देशो न नंक्ष्यति भवेन्नो न नाशः।
अतोऽध्यापनं चाध्ययनं श्रुतीनाम्
क्रियतामिदानीमनिवार्यतो हि ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिव्यं महाकाव्यम् : वेदः

—श्री हरिअरविन्दः साहित्य-प्राध्यापकः
श्रीरामशङ्करसाङ्गवेदविद्यापीठस्य,
कोडरा, बस्तीस्थस्य

अथ संस्कृतकाव्यानां महाकाव्यानां नाटकादीनां तदन्तर्वर्तिविषयाणां वा गभीरविचारणप्रसङ्गे तेषां मूलस्रोतः प्रति चित्ताकर्षणं हि स्वभावतो जायत एव कस्यापि सहृदयस्य । अनवद्यानि विश्वप्रसिद्धानि सरसमधुरमधुनिष्यन्दपरिस्पन्दसुन्दराणि सुकुमारमतिभिरपि सानन्दं समास्वादनीयानि कालिदासादिमहाकविनामाकल्पस्थायि यशोराशिपुञ्जीभूतानिव विश्वमखिलमुज्ज्वलयन्ति काव्यरत्नानि यान्यद्य वयं मधु नास्वादित पूर्वमिव, पुष्पमनाघ्रातपूर्वमिव, अनाविद्धं रत्नमिव च लब्ध्वा स्वकीयं सर्वस्वं मन्यामहे, अधीमहे, परमप्रेम्णा चाध्यापयामः ।

तान्येतानि महाकाव्यानि कं ज्ञानराशि, कां परम्परां, कां विचारसरणिं चोपजीवन्ति ? एतेषां जीवातुभूतं किमपि तादृशं वस्तु विद्यते न वेति विचारणायां क्रियमाणायां सत्यामस्माकं पुरस्तात् समुन्मिषन्ति कानिचन भव्यानि भास्वरतररत्नानि निरन्तरतपः संलग्नतया निर्मलशेमुषीसम्पन्नानां पूर्वेषां महर्षीणांसदयहृदयहिमवतः सम्प्राप्त-प्रसराणि भागीरथीसलिलप्रवाहसमानि विश्ववसुन्धरापावनकारणानि समुज्ज्वल प्रकाशविभासिताशेषभूमण्डलानि वेदनामधेयानि स्रोतांसि ।

सोऽयमविद्यान्धकारपटलोत्पाटनपटीयान् दिव्यतमः प्रकाशो वेदनामधेयः । विश्वज्ञान प्रकाशानामादिममूलभूतोऽयं स्वमहिम्नैव भूमण्डले 'भगवान् वेद' इत्याम्नायते । ज्योतिषां ज्योतिर्हि सकल ब्रह्माण्डमण्डलेमण्डलेश्वरो भगवान् । तस्य साक्षात्स्वरूपभूतत्वात् तेन स्वयं कृतत्वाद्वा वेदोऽपि ज्ञानप्रकाशराशिर्भगवानेवेति वेदज्ञा विद्वांसो विश्वसन्ति । प्राणिमात्रस्य योगक्षेमावबोधनाय परमेश्वरो महर्षिहृदयेषु वेदमन्त्रान् समुन्मीलयति यथावस्थान् प्रतिकल्पम् । वेदप्रकाशविधुरं तु सकलमपि जगत् तमोमयमेव सम्भवेत् । शब्दाह्वयं ज्योतिरिति वेदमेव सङ्केतयति नूनमाचार्यदण्डिमहोदयः —

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इदमन्धं तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम् ।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते ॥

एष सकलाऽज्ञानान्धकारसंहारकारी भगवान् वेदो हि सर्वविध-ज्ञानविज्ञानप्रकाशनः परमानन्दसन्दोहप्रदायि भव्यतमं दिव्यं महाकाव्यम् ।

वेदमन्त्रेषु वेदरूपस्यास्य दिव्यमहाकाव्यस्य काव्यत्वमजरामरत्वं च सबलं प्रतिपाद्यते—

'अन्ति सन्ति न जहात्यन्ति सन्तं न पश्यति ।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति[1] ॥

न हि तावद् वेद एव केवल महाकाव्यानामादि महाकाव्यम्, अपितु वेदरचयिता महाकविः परमेश्वरोऽपि कवीनामादिकविः, मनीषिणा-मादिमनीषी चापि—

"कविर्मनोषी परिभूः स्वयम्भूः,
याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः[2] ॥"

सर्वगुणान्वितं महाकाव्यं सर्वज्ञ एव महाकविर्निर्मातुं प्रभवति नान्यः कश्चिदल्पज्ञः—इति प्रतिपादयन्नाह तत्र भवानाचार्यशङ्करः—

"महतः ऋग्वेदादेः शास्त्रस्यानेकविद्यास्थानोपबृंहितस्य प्रदीपवत् सर्वार्थविद्योतिनः सर्वज्ञकल्पस्य योनिः कारणं ब्रह्मस्य न हीदृशस्य शास्त्रस्य ऋग्वेदादिलक्षणस्य सर्वज्ञगुणान्वितस्य सर्वज्ञादन्यतः सम्भवोऽस्ति[3] ।"

अखिलस्यापि भूमण्डलस्य प्रथमा संस्कृतिर्वेदरूपा । सा हि सर्वैरपि जगतीनिवासिभिर्जनैर्वरणीया— **"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा[4] ।"** समस्तानां विज्ञानानां, सकलानां ज्ञानानाम्, अशेषाणां शास्त्राणां विश्वासां भाषाणां, काव्य–महाकाव्य–पुराण–दर्शनादीनां सर्वविधसाहित्यप्रपञ्चानाम् आदिमस्रोतस्त्वेन विभासमानं दिव्यमेतन्महाकाव्यं सर्वेषामपि किलाऽऽर्ष-लौकिकादिमहाकाव्यानामाधारभूतम्, उपजीव्यतमोत्सस्वरूपं चापि ।

अस्मिन् दिव्यमहाकाव्ये धर्म, संस्कृतिः, दर्शनं, ज्ञान, विज्ञानम्, इतिहासः, ज्यौतिषम्, गणितम्, भूगोलप्रभृतयः, साहित्यादयो निखिला अपि विषयाः वर्ण्यविषयभूता विराजन्ते । सर्वविधविषयाणां महानाकरो हि वेदराशिरिति स्वामिदयानन्द-मैक्समूलरप्रभृतयो वेदविदो वदन्ति, वेदस्य सर्वज्ञानमयं स्वरूपं ते स्वीकुर्वन्ति ।

१—अथर्व० १०/८/३२; २—यजुः० ४०/८;
३—"शास्त्रयोनित्वात्"–इति वेदान्तसूत्रभाष्ये । ४—यजुः०७/१४;

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदार्थ-प्रक्रिया

—डॉ० निगमशर्मा
अध्यक्षः, संस्कृत-विभागे
गुरुकुलकांगड़ीविश्वविद्यालयः, हरिद्वारम् (उ० प्र०)

आसादितलोकहृदयाः प्रत्यक्षहेतुप्रसादा वेदाः । पापमूलत्वात् सर्वदुःखानां प्रतिनिभाल्य ते शुभे कर्मणि मानवान् योजयन्ति । वेदगृहे निवास एव स्वर्गे वास इति तेषाममृतमुचां वचांसि । कण्टकसदृशा जनास्ततोऽन्यान् दूरीकुर्वन्ति, अत एव वेदमार्गे प्रवृत्तानां महत् काठिन्यमापतति । बहुरेतस्कः पुरुषो ब्रह्मतेजो हृदि निधाय व्यूढोरस्कस्तेजसा चान्तर्हितार्थां सुवर्णपुष्पां वाचं गन्धाढ्यामासादयति ।

देवा 'अग्निजिह्वाः ऋ० ६-५२-१३ इत्युच्यन्ते । यथाऽङ्गेषु जिह्वा प्रधानतां भजते तदैव देवेष्वग्निः । अग्निप्रधाना देवाः हि 'अग्निजिह्वाः' इत्युच्यन्ते । यजमाना एव 'यजाः' कथ्यन्ते, तेषां त्रातारः खलु 'यजत्राः' इति ज्ञाप्यन्ते । स्वः शब्दः सर्वपर्यायः तर्हि 'स्वर्दृशम्' इत्यस्याभिप्रायः सर्वस्य शुभाशुभस्य द्रष्टारम् । गोः प्राणिषु श्रेष्ठत्वात् किलैका विभूतिः, तर्हि 'गव्यन्तः' ७-३२-२३ इति शब्दस्य कोऽर्थः ? गां च कामयमानाः, महती विभूतिमिच्छन्तः ३.४७.२ मन्त्रे सम्यक् च प्रतिपादितं यल्लोकपालानां व्रतमेतत् किमिति ? दुष्टनिग्रहः शिष्टपरिपालनम् । सूर्याकारो मित्रोऽपि मात्वा=निर्माय निर्माय स्वोदयेन जगत् त्रायते ।

'अग्र' 'वृक्षस्य 'रोहतः' अत्र वृक्षस्य वृक्षजस्य खट्वा–फलकस्य 'यजु. २३-२४; सानसि=सूर्यमण्डलम्. अवः=पालयिता ऋ० ३-५९-६. अवः तेजोऽन्नम्, यक्षः, ज्ञानं वा श्रूयते वेदशिरसि आश्रीयते च योगिभिः, किमु वाऽङ्ग तत् ? एतदादित्यमण्डलम् । द्युम्नम्=अन्नम्, उपायः, यशो वा । चर्षणयो हि मनुष्याः, ते चायन्ति=पश्यन्ति, अथ च ऋषन्ति =गच्छन्ति, पश्यन्ति ते सर्वमप्यागमेन गच्छन्ति च ते पटुसाध्यमुपायेन । उर्वशी=विद्युद् भवति, अश्नुतेऽन्तरिक्षं प्रभया । पुरुरवाश्च मेघः, पुरु रौति ।

एवं मंत्रव्याख्यानपरम्परायां तत्र भवन्त आचार्या ऋषयः षड्विधत्वं च कथयन्ति । भरतो मुनिश्च नाट्यशास्त्रेऽलङ्काराणां षट्त्रिंशद्विधत्वं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राह १६–४)। स्कन्दस्वामी च ऋग्भाष्योपाद्घाते प्रैषाः, करणाः, क्रियमाणानुवादिनः शास्त्राभिष्टवनादिगता जपानुवचनाश्चेति कृत्वा मंत्राणां पंचविधत्वं बोधयति। बृहद्देवतायां च १-३५-३९ षट्त्रिंशद्विधत्वं कथितम्। हरिस्वामी च शतपथविवरणेऽवान्तरभेदानपि पंचचत्वारिंशद् गणयति। उद्व्वटश्च यजुर्वेदभाष्यभूमिकायां मंत्रास्त्रयोदश विधान् प्राह।

तत्र मंत्रा बहुप्रकाराः सन्ति, तद्यथा स्तुतिरूपा—इंद्रं को वीर्यां परः १.८०.१५, हस्तयोर्वज्रमायसम् १.८१.४ ऋचीषमाय १-६१-१, सखे विष्णो वितरं विक्रमस्व ४.१८.११ निन्दा प्रकारा अपि—केवलाघो भवति केवलादी १०-११७-६ किमेता वाचा कृणवा तवाहम् १०-९५-२, अयं ह तुभ्यं वरुणो हृणीते ७-८६-३, पद क्षुभ्यमिव स्फुरत् १-८४-८। आख्यानपरा वाक् च :—इन्द्रो दधीचो अस्यभिः १-८४-१३ ओ चित्सखायम् १०-१०-१ शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत् १०-३४-२, किमिच्छन्ती सरमा प्रेदमानट् १०-१०८-१, क्वचिच्च वस्तुमाहात्म्यम्: :– त्वमस्माकं तव स्मसि ८. ९२. ३२ स्वादिष्ठता मादिष्ठया ९. १.१. यो विश्वा दयते वसु ८. १०३.६ यमस्य दूतौ चरतो जनां अनु १०. १४. १२, मम पुत्राः शत्रु हणः १०-१५९. ३, राजानो न प्रशस्तिभिः ९-१०-३, स्वरूपनिर्धारणमपि देवानामभीष्टम् :–८. २९ मंत्रेषु देवं देवं प्रति वैशिष्ट्यं स्वरूपानुविधायित्वं च लक्ष्यते। आयुध–वेष–आहार क्रियायोगाच्च प्रमुखं देवं देवानां द्रष्टुं च शक्यते।

क्वापि च प्रैषरूपा वाचः :—देवेभिर्याहि यक्षि च १. १४. १. सोमं पिब ऋतुना १. १५ .१ सवेद स चिकित्वान् १.१४५-१ श्रुधी हवमिन्द्र २. ११. १ इन्द्रं गिरो बृहतीरभ्यनूषत ३. ५१. १, आ नो भर प्रमगन्दस्य वेदः ३–५३–१४, महे नो अद्य बोधय ५.७९.१।

परिपालनरूपाः खल्वपि भगवतो वाचः समीक्षाविषयतामवतरन्ति 'यदि मृत्योरन्तिकं नीत एव तमाहरामि निर्ऋतेरूपस्थात् १०–१६१–२। प्रलय-देवताया उत्सङ्गस्थानादपि क्षितायोरानयनमत्र शरणागतवत्सलस्य देवस्य प्रतिवचनम्। एवमेव 'तत्र आवर्तयामह क्षयाय जीवसे' १०. ५७.२ धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चित् ७. ९८. ७। आयने ते परामणे दूर्वा रोहन्तु पुष्पिणीः १०. १४२. ८।

प्रवह्लिकारूपाश्च वाचः, यत्र गूढोऽर्थः प्रश्नार्थरूपेण अथवा रहस्यरूपेण प्रतिपाद्यते–'न वै कुमारी तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे, अथर्व० २०–१३३–१। चक्षोः सूर्योऽअजायत १०. ९०. १३ छन्दांसि जज्ञिरेव तस्मात् १०.९०.९ 'त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरम्' अथर्व २०. ९५. १०, क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ई. वेद सुते सचा । अथर्व २०-५३-१ । क्वचित्परिवादरूपेण च कृत्या-कृत्यज्ञापनं दीयते-'किं ते कृण्वन्ति कीकटेषु गावः' ऋ. ३-५३-१४ अन्येन मदाहनो याहि तूयम्' १०. १०.८, न यत् पुरा चकृमा कद्ध नूनम् १०.१०.४ किं मा निन्दन्ति शत्रवोऽनिन्द्राः १०. ४८. ७ क्वचिदाचिख्यासा-'अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि १०.१२५.१ कामस्तदग्रे समवर्तताधि १०-१२९-४, इमे वयन्ति पितरो य आययुः १०.१३०.१, बभ्रुरेको विषुणः सूनरो युवा ८. २९. १, न हि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः ८. ३०. १ । क्वापि परिदेवना :-अधा शयीत निर्ऋतेरुपस्थे १०. ९५. १४ अमी त्वा जहति पुत्र देवाः ४. १८. ११, मा गामनागामदितिं वधिष्ट, ८. १०१. १५, कदा न्वन्तर्वरुणे भुवानि ७. ८६. २, कुत्रचिद् याचनाः-सं माग्ने वर्चसा सृज, १. २३. २४, विद्वां अदब्धो विममोक्तु पाशान् १. २४. १३ वोचेम ब्रह्म सानसि १-७५-२ इन्द्रायेन्दो परिस्रव ९. ११३.१, मुमुग्ध्यस्मान् निधयेव बद्धान् १०. ७४. ११, आह्वानं च क्वापिः-वायवायाहि १.२. १, शविष्ठ धृष्णवागहि १.८४.१, उपयाहि सोमम् ३.२९.१६, इन्द्रायेन्दो परिस्रव ९. ११२. १ कृषिमित्कृषस्व १०. ३४. १३ मरुद्भिरग्न आगाहि १.१९.१ ।

क्वापि व्याकरणाय प्राणप्रतिष्ठा-अभि त्वा देव १.२४.३ अत्र ईमहे याच्ञाकर्मा, द्विकर्मकोऽत्र याचिः, त्वाम् आयुर्याचामहे । सुमङ्गलीरियं वधू १०. ८५. ३३ 'छन्दसी वनिपौ च वक्तव्यौ' ५. २. १०९ वार्तिकम् । मत्वर्थे ईप्रत्ययः, अतः सोर्लोपाभावः । नमो महद्भ्यः १. २७. १३ नमो योगेऽत्र चतुर्थी । प्रिया प्रियासु ६. ६१. १० निर्धारणे सप्तमी प्रियाणां सर्वासां देवतानां मध्ये इयमेवैका प्रियतमा । उद्वय तमसस्परि १. ५०. १०, तमसः अन्धकारस्य परिवर्जनार्थः । तमः पङ्कं विदार्य पद्ममिवोत्थितम् । दृशे १. ५० .१ दृशे विख्ये च द्रष्टुम्' । विश्वाय=षष्ठी स्थाने चतुर्थी । एकवचनं बहुवचनस्य स्थाने सर्वेषां भूतानां दर्शनाय । त्वामवस्युराचके १. २५. १९ आयुर्याचे त्वाम् । तत्त्वा यामि १.२४.११ आयुर्याचे त्वाम्, प्रकरणान्वितं कर्मपदमध्याहार्यम् । अथवा तनु विस्तारे क्त्वा, 'उदितो वा' ७. २. ५६ इतीड् विकल्पः । तत्त्वा=तनित्वा परिचर्यया याचे । परिचर्यया चाभीष्टा देवता प्रसन्नीभूयाभिलषितं ददाति । अपो याचामि भेषजम् १०. ९. ५ द्विकर्मकत्वं याचे । व्याप्त्या दीप्त्या चोक्तं पश्यदक्षण्वान् न विचेतदन्धः १.१६४.१६, निरुपमं तेजो जगत्कारणम्, इति जगतो व्यापार-कारणम् । तद्रूपाश्रयाणां धातूनामर्थस्य विद्यमानत्वात् । अर्थ नित्यः परीक्षेत यश्चायं पुरुषे यश्चादित्ये स एकः । अस्य ज्ञातारः पण्डिताः परिपक्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञान:' विद्यारूपेण चक्षुषा ते पश्यन्ति । अत एव ते बन्धनान्मुच्यन्ते । शब्दानामर्थावगाहनं च :- अदितये स्याम १–२४–१५, अक्षीयमाणाय स्याम । पृथिव्यै चिर जीवेम । उद्वयम् १—५७—१० । आदित्याख्यं ज्योतिर्द्विधा–बाह्यम्, आभ्यन्तरं च । उद् इत्युपसर्गः, अन्तभूतक्रियावचनः । उदितमित्यर्थः । पश्यन्तः प्रणमन्तः । श्रद्धापुरःसरमाराधयन्तः । उत्तरम् सुप्तानां मृतकल्पानामुत्तारणहेतुम् । शुक्रम् ७-६६- १६, शुक् दीप्तिः, मत्वर्थीयो रः, मधुरमिति यथा । पिशङ्गरातेः ५–३ १–२, पिशङ्गा रातिर्यस्य । पिशङ्गवर्णस्य स्वर्णादेः । धनं ह्यभिजनमापादयति मा विवेनः वेनतिरत्र लम्बनार्थः मा विलम्बिष्ठाः । कान्तिकर्मा वा, विगतकामो विगतेच्छः मा भूः ।नवो नवो भवति १०–८५–१९, नव शब्दोऽत्र प्रियवचनः । प्रियतमः । अभित्त्वा शूर ७–३२–२२, शूरः शवति गच्छति शत्रून् इति शूरः । अदितिः १–८९–१० प्रकृतिरप्यदितिः । मित्रः ३–५९–६, मेदयतेः, उदकेन सर्वं स्नेहयति । मित्र एव वृष्टिप्रदानादिना दाधार धारयति । रजः शब्देम उदकं गृह्यते । सारभूतं वस्तु रजः शब्देन कथ्यते ।

एवं वस्तुमाहात्म्यदृष्ट्या गुणख्यापनमेव मंत्राणामिष्टम् एवं वस्तु सौन्दर्यं वा गुणान् वा सूक्ष्म-निरीक्षणेन प्रकाशनं क्रियते । एतदपीष्टं नः वस्तु वैभवं ब्राह्मण एव विभुत्वप्रख्यापनम् । सुरेश्वराचार्योऽपि प्रचारयति, वररुचिरपि प्रबोधयति–एतद् अस्ति, भाति,प्रीणाति रूपं यद् वस्तुतत्त्वं,सर्वं तद् ब्रह्मैव । तस्यैवाखिलाधारस्य यजन पूजनं वा ।

कस्य नूनम् १२४–१ इति मंत्रे क इति प्रजापतिः सुखरूपत्त्वात् । अमृतानां देवानां निर्धारणे षष्ठी । मनामहे—याचामहे=प्रजापतिमायुर्याचामहे । अर्चयामो वा । अदितये अक्षीणायै पृथिव्यै=पुनर्दात्–स्थापयतु । स्थिरं दृढ़ यशस्विनं मां तेजसे यशसे स्थापयतु ।

एवं यो ब्राह्मणः परिचर्यया श्रद्धयाऽऽश्रितः सन् देवं जलं प्रकृतिं पृथिवीं सूर्यं वपुं मित्रमुषस वाऽवगाहते तेन रसेन पयस्वान् मनीषया निगमागमपायसतीर्थतापसः कर्पूरजल–शीतलं वायुमाचमन् ब्राह्मणतेजसा दीप्तो भवति ।

कं देवमसावाश्रयति, नास्ति प्रश्नः एकस्यैव देवस्य वैभवमेतत्, यदाश्रयणीयं तदेव हृदि निधाय उच्चावचैर्ऋषीणामभिकामान् सादरं निपीय मंत्रार्थदृक् शान्तः प्रसन्नः क्रियार्थवित् वेदरत आत्मरतः स्वभानान् विजित्य साधुकारी कुशलः पूर्णमायुः सेवमान आनन्दैकरसो भवति । ★

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तमिलनाडुप्रान्ते वेद-सम्मेलनस्य संस्मरणानि

—श्री सुरेन्द्रकुमारः विद्याभास्करः

वेदा अस्माकं संस्कृतिसभ्यताया आधारभूतस्तम्भास्सन्ति। वेदानां महत्त्वं प्रतिपादयन् मन्वादिभिर्महर्षिभिः, "वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" 'सर्वज्ञानमयो हि सः' इत्यादीनि वाक्यानि पठितानि। महर्षिदयान्देनापि अस्यामेव परम्परायां आर्यसमाजस्य तृतीये नियमे "वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है" एवमुल्लिखितं विद्यते। परं हन्त ! दुर्भाग्योऽयमस्मत्कृते यद् भौतिकचाकचिक्यप्रभावेण वेदविद्यास्वस्माकं रुचयस्समाप्तप्राया एव। समापन्नेस्मिन् विकटसंकटाच्छिन्नगहनतमसि भारतसर्वकारस्य शिक्षामंत्रालयसाहाय्येनायोजितान्यखिलभारतीयवेदसम्मेलनानि प्रकाशस्तम्भानीवाचरन्तीति महती प्रसन्नताया विषयः।

गतवर्षे (१९८५ ख्रीष्टाब्दे) तमिलनाडुप्रान्तान्तर्गतायां काञ्चीपुर्यामायोजितम् अखिलभारतीयवेदसम्मेलनं द्रष्टुं अस्मदाचार्यपादानां डा० हरिगोपालशास्त्रिणां प्रसादेन मयापि सौभाग्यमयोऽवसरः प्राप्तः। सम्मेलनमिदं दिसम्बरमासस्य चतुर्विंशतितारिकातः सप्तविंशतितारिकापर्यन्तमासीत्। वैदिकसम्मेलनस्योद्घाटनमुच्चन्यायालयस्योच्चन्यायाधिकारिभिर्न्यायमूर्ति श्री भगवतिप्रसादमहाभागैर्कृतम्। शाङ्करमठे भिन्न-भिन्नप्रान्तेभ्यस्समागतैः शिखासूत्रालंकृतैः श्वेताम्बरैः पीताम्बरैश्च वेदपाठिभिः चतुर्णां वेदानां भिन्नभिन्नशाखासरणिमनुसृत्य "जटा–माला शिखा रेखा ध्वजो दण्डो रथो घनः" इत्यष्ट विकृतिपूर्वकं वेदपाठः प्रस्तुतः। मयेदं पूर्वं श्रुतमेवासीद्यद्दक्षिणभारते बहवो वेदपाठिनः श्रुतिपरम्परयाद्यावधिपर्य्यन्तमपि कृतभूरिश्रमा विद्यन्ते तथा तेष्वनेकैः एको द्वौ त्रयश्चत्वारो वा वेदाः कण्ठस्थीकृतास्सन्ति, परमद्य निपीय तेषां वेदवागमृतं धारणेयं दृढाभूत् यद् अद्यापि श्रुतयोऽन्वर्थसंज्ञकाः।

सम्मेलनेऽस्मिन् ऋग्वेदस्य शाकलशाखायाः, कृष्णशाखायाः, शुक्लयजुर्वेदस्य माध्यन्दिनिकाण्व शाखयोः, सामवेदस्य कौथुमिराणायनीशाखयास्तथा अथर्ववेदस्य पिप्पलादशौनकशाखयोर्बहवो वेदपाठिविद्वान्स उपस्थिता आसन्। सम्मेलनस्यास्य अध्यक्षपदं काञ्चीमठाधीशश्रीमज्जगद्गुरु शङ्कराचार्यमहाभागा अलङ्कृतवन्तः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अस्य सम्मेलनस्य सफलता-श्रेयः शिक्षासचिव श्री टी० एन० धर महोदयं, उच्चशिक्षासलाहकार डा० रामकृष्णमहाभागं तथा स्थानीय-आयोजक प्रो० एस० वैंकटाकृष्णन्-प्रवरं प्रत्येव गच्छति, यतस्तैरेव तत्रत्याः सर्वा व्यवस्था व्यवस्थिताः। एते सर्वे महानुभावाः धन्यवादार्हाः।

भारतीयसर्वकारेण प्रतिवर्षं अयोजितानीदृगखिलभारतीयवेद-सम्मेलनानि अस्माकं संस्कृतिसभ्यतां पुनरुद्धरिष्यन्तीति मे मतिः। तदैव नभोमण्डल उड्यमानाः पक्षिणः पुनर्गास्यन्ति यत्—

"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववाराः"।

पाश्चात्य- सिद्धान्ताः पुनश्चिन्तनीयाः ?

—डा. रूपनारायणपाण्डेयः, संस्कृतप्रवक्ता
राजकीय-इन्टरकालेजः, सितारगजः,
नैनीतालम् २६२४०५ (उ० प्र०)

वेदोऽस्माकं संस्कृतेः शेवधिरस्ति। तस्य चिन्तनं मननमध्ययनं च सर्वथा राष्ट्रस्य भारतस्य समग्रलोकस्य च श्रेयसे वर्तते। पाश्चात्यै-र्वेदविद्भिर्भारतीयविद्याविश्लेषण-विचक्षणैश्चान्यैर्विपश्चिद्भिर्वेदान् अधीत्य सम्पाद्य समालोच्य व्याख्याय च संस्थापिताः सिद्धान्ता वस्तुतो भारतीय-संस्कृतिपरम्परया पुनश्चिन्तनीयानि सन्ति। यास्कसायणप्रभृतिभि-र्व्याख्यातानि वेदतत्त्वानि सर्वथा ग्राह्याणि नैव सन्ति। ते वेदरह-स्यमर्थं वा नावगच्छन्तोत तेषां मतिमतां मतिरहङ्कारपूर्णास्ति। आर्याः वेदस्य ऋषयः, शास्त्राणां पुराणादीनां च कर्तारः, मुनयः, चातुर्वर्ण्यसंस्कृति-समुपासकाश्च भारतस्य मूलवासिनो न सन्ति, ते देशान्तरेभ्यः समागताः, आर्यशब्दो जातिवाचकः, न तु श्रेष्ठवाचकः, रामकृष्णादयो महापुरुषाः ऐति-हासिकाः प्राणिनो न सन्ति इत्यादयोऽनेके सिद्धान्ताः पुनर्विचारणीयाः सन्ति। मन्ये वेदाङ्को वैदिकसिद्धातान् प्रतिपादयितुं सर्वथा शक्येत।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदिक ज्योति

–डा० वासुदेवशरण अग्रवाल डी. लिट्.

[डा० वासुदेवशरण अग्रवाल वर्तमान युग के ऋषि और मन्त्रद्रष्टा थे। सूक्ष्मातिसूक्ष्म विषयों का उन्होंने प्रत्यक्षीकरण किया था। वे बहुमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति थे। वेद, पुराण, कला, स्थापत्य, इतिहास, वैदिक दर्शन आदि के उद्भट विद्वान् थे। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में वैदिक वाङ्मय के प्रति निष्ठा के वे प्रेरणास्रोत थे। उनका सूत्रात्मक यह लेख पठनीय और मननीय है। —सम्पादक]

१- एक और बहुधा —

एको वेदो बहुशाखो ह्यनन्तस्वामेवैकं बोधयत्येकरूपम्।

एक वेदतत्त्व है। वही बीज अव्यक्तभाव से व्यक्त सृष्टि के रूप में आता है। एक तत्त्व मूल में बहुधा या अनेक तूल है। उसी एक का विस्तार विश्व है। एक 'तत्' है। बहुधा 'इदं सर्वम्' है। एक अव्यक्त भाव है। उस अदृश्य के लिए वेदों में तत् संकेत है। बहुधा को व्यक्त, स्थूल या दृश्य कहते हैं, जो 'एतत्' या विश्व या भूत है।

'एतद् वै तत्'

२- एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति —

यही सृष्टि का सूत्र है जिसमें सारे भूत और प्रजाएँ ओत-प्रोत हैं। विश्व का मूल एक शक्ति तत्त्व है जो अनेक भूत और प्रजाओं के रूप में दृश्य बन रहा है। भूत और प्रजाएँ एक शक्ति के अनेक या बहुधा रूप हैं। उस एक महासत्तावान् शक्ति की संज्ञा ब्रह्म है। एक और अनेक दोनों ब्रह्म रूप हैं। जो स्वयं अविकारी रहता हुआ इस विकारवान् भूतमय जगत् की सृष्टि करता है वह तत्त्व ब्रह्म है। वह अपने एक अंश से स्वयं ही इस विश्व के रूप में अभिव्यक्त होता है।

'एकं वा इदं वि बभूव सर्वम्'

यही उस ब्रह्मतत्त्व की प्रतिस्विक या निजी शक्ति है। वह एक होते हुए भी बहुधा प्रकट होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'एकं सद् विप्रा बहुधा बदन्ति'.

एक रूप में वह अस्ति या सत्ता है। जैसे ही वह 'भवति' या होता है वह 'बहु' बन जाता है। बहुभाव को ही परोक्षभाषा में भूमाभाव या ब्रह्म कहते हैं।

३- गतितत्त्व :—

विश्व का अव्यक्त मूल स्थिति तत्त्व है उसे ही रस कहा जाता है। रस के धरातल पर बलों का आविर्भाव ही सृष्टि का क्षोभ है। बलों की नाना ग्रन्थियां ही बहुभाव या सृष्टि है। बलतत्त्व ही गति है। गति स्पन्दन है। गति-आगति रूप द्वन्द्व का नाम ही प्राण है। प्राण शक्ति का स्पन्दन है। शतपथ के अनुसार प्राण की वैज्ञानिक परिभाषा यह है :—

प्राणो वै समंचनप्रसारणम्। (शत० ८-१-४-१०)

फैलना और सिकुड़ना, गति और आगति यही प्रजापति का निरुक्त, व्यक्त मूर्त, प्रत्यक्ष, प्रकट रूप है। इसी स्पन्दन को प्रजापति का तेजसरूप कहा जाता है। गति का उत्थान केन्द्र से परिधि की ओर होता है। परिधि तक पहुँच कर वही गति पुनः केन्द्र की ओर लौटती है तब उसे आगति कहते हैं। केन्द्र से परिधि तक प्रसारण और परिधि से केन्द्र तक समंचन- यही गति-आगति का स्वरूप है। इनमें गति या प्रसारण को इन्द्र और आगति या समंचन को विष्णु कहते हैं। इन्द्र और विष्णु की सतत स्पर्धा का भाव ही सृष्टि है :—

उभा जिग्यथुर्न पराजयेथे न पराजिग्ये कतरश्चनैनोः।
इंद्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथान् ॥

(ऋग्वेद ६-६९-८)

प्रत्येक अभिव्यक्त केन्द्र में इन्द्र और विष्णु का यह गति-आगतिरूप या प्रसारण-समंचन रूप द्वन्द्व निरन्तर चलता रहता है। यही प्राणन-अप्राणन क्रियाशक्ति का जागरण या द्विविरुद्धभाव है। विष्णु को इन्द्र का सहयुक्त सखा कहा गया है—'इन्द्रस्य युज्यः सखा'। पौराणिक भाषा में इन्द्र का छोटा भाई विष्णु का यह संवर्ष अर्थात् गति-आगति का स्पन्दन बिना किसी शान्त धरातल के सम्भव नहीं। उसे ही स्थिति तत्त्व या ब्रह्मा कहा जाता है-

"ब्रह्मा वै सर्वस्य प्रतिष्ठा"

४- हृदयविद्या :—

प्रतिष्ठा तत्त्व की संज्ञा ब्रह्मा है। स्थितिभाव से ही गति का जन्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है। स्थिति मानो जल की घनीभूत निश्चेष्ट अवस्था है। उसी का द्रुतिभाव गति है, स्थिति निद्रा है, गति जागरण है। गति-आगति का प्रादुर्भाव केन्द्र में प्रसुप्त शक्ति का जागरण है। ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु के इस समन्वित भाव की संज्ञा हृदय है। स्थिति गति आगति की व्याख्या वेद की हृदयविद्या है। अनिरुक्त अमृत अमूर्त नम्य प्रजापतिरूप को ही हृदय कहा जाता है। केन्द्र की संज्ञा हृदय है। यही हृद्देश है। अभिव्यक्त पदार्थ का अव्यक्त केन्द्र उसका हृदय है। वहीं से देवतत्त्व या शक्ति का विकास होता है।

ब्राह्मणग्रंथों में प्रायः प्रश्न किया जाता है कि हृदय-तत्त्व क्या है? उत्तर में प्रतीक शैली से व्याखया की जाती है कि हृदय में तीन अक्षर हैं हृ-द-य। तीन अक्षर तो प्रकट ही हैं, वस्तुतः ऋषि-की दृष्टि स्थिति-गति-आगति रूप प्राणन या स्पन्दन की ओर है। उसे ही अक्षरतत्त्व कहते हैं। प्राण ही अक्षर शक्ति है। इन तीन अक्षर देवों में 'हृ' आहरण या आगति का, 'द' विकिरण प्रसारण या गति का, और 'य' गति-आगति के नियमन या स्थिति का प्रतीक है। 'हृ' विष्णु, 'द' इन्द्र, 'य' ब्रह्मा या प्रतिष्ठा-तत्त्व का संकेत है। ये ही तीन अक्षर देवता हैं। इन्हीं तीन अक्षर देवों की हलचल प्राणात्मक स्पन्दन से प्रत्येक प्राणी का जन्म, वृद्धि, विकास और ह्रास सम्भव होता है। प्रत्येक बोज या अंकुर में प्रसुप्त प्राणशक्ति जब जागरण भाव में आती है तभी वह बाहर से भूतों को खींच कर अपने केन्द्रों में लाती है और स्वस्वरूप में परिणत कर लेती है। यही प्रक्रिया प्राण, गति, तेजस, अग्नि आदि कितने ही संकेतों या नामों से प्रकट की जाती है।

स्थिति-गति-आगति के त्रिक का वैदिक नाम हृदयविद्या है। हृदय का सामान्य लौकिक अथ वह अवयव है जो रुधिर का अभिसरण करते हुए नित्य स्पन्दित रहता है और जब उसका स्पन्दन है तभी तक आयुष्य है। स्पन्दन ही आयुष्य है, अथवा आयुर्बल ही स्पन्दन है। दोनों एक ही तथ्य हैं। आयुष्य ही अमृत है। अतएव शक्ति का स्पन्दन ही अमृत तत्त्व है। अमृत का ही दूसरा नाम अक्षरतत्त्व या प्राणतत्त्व है। स्थिति-गति-आगति के प्रतीक तीन प्राण देवता क्रमशः ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु वैदिक परिभाषा में अक्षर देवता कहलाते हैं। अक्षर अविनाशी प्राणतत्त्व है। विनाशी भूततत्त्व को क्षर कहा जाता है, जैसा गीता में स्पष्ट कहा गया है —

'क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते,

कूट का अर्थ ढेर है। ढेर, राशि, कूट, स्तोम एक ही अर्थ के वाचक हैं, एक ही बहुभाव में अभिव्यक्त कूट या स्तोम के नियम के अनुसार होती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। नाना कलाओं या संख्याओं की समष्टि से कूट बनता है। प्रत्येक भूत कूट है अर्थात् शक्ति की अनेक कलाओं के राशि–भूत होने से बनता है। जो शक्ति अभिव्यक्त नहीं हुई वह अखण्ड या निष्फल होती है। उसकी अभि-व्यक्ति की एक-एक इकाई जब कूट या समूह बनती है उसे ही भूत या क्षर कहा जाता है। शक्ति अक्षर, अखण्ड, अविनाशी प्राणतत्त्व है। वही भूत या कूट की विधृति है, अतएव अक्षर को गीताकार ने कूटस्थ कहा है। अस्यवामीय सूक्त के अनुसार :—

'ततः क्षरत्यक्षरं ततो विश्वमुपजीवति' (ऋग्वेद १–१६४–४२)

५– वेद और अग्नि सोम —

वैदिक परिभाषाओं में त्रयीविद्या का स्वरूप महत्त्वपूर्ण है। वेद तत्त्व क्या है? ऋक् यजु–साम का क्या स्वरूप है? त्रयीविद्या और चौथे अथर्व-वेद का क्या सम्बन्ध है? इन प्रश्नों को जितना ही स्पष्टता से परिज्ञात किया जायेगा, वेदार्थ के परिचय में उतनी ही सुविधा होगी। अग्नि और सोम के सम्मिलन का नाम सृष्टि है। अग्नि में सोम की आहुति यज्ञ है। समस्त विश्व अग्नीषोमात्मक यज्ञ का परिणाम है। अग्नि अन्नद है, सोम उसका अन्न है। अग्नि मूल तत्त्व है, सोम उसी का सहकारी है। शीत और उष्ण धाराओं की समष्टि ही विश्व है। ये ही शक्ति के ऋण और धन अथवा एक ही मौलिक प्राण के प्राण और अपान नामक दो भेद हैं। हमारे सौर ब्रह्माण्ड में सूर्य और चन्द्र इन्हीं दो धाराओं के प्रतीक हैं। इस ब्रह्माण्ड में कोई भी प्राणी ऐसा नहीं है जो शीत और उष्ण के दस नियमन से बाहर हो। प्राण के स्पन्दन का हेतु शीत और उष्ण का परस्पर में टकराने वाला ही है।

६- सृष्टि का मूल तत्त्व अग्रि या अग्नि :—

सृष्टि का मूल कारण या उपक्रम उसी अग्नितत्त्व या गतितत्त्व से उद्गत होता है। प्राणन क्रिया ही सृष्टि है। प्राणन ही गति है। सृष्टि के प्रारम्भ में अभिव्यक्त होने के कारण इसे 'अग्रि' (यदग्रे आस) कहा जाता है। वही परोक्ष भाषा में 'अग्नि' है। अग्नि शब्द की कई व्युत्पत्तियां ब्राह्मण ग्रन्थों और निरुक्त में मिलती हैं। उनमें से एक यह भी है। विभिन्न दृष्टि-कोणों से वे सभी संगत हैं। अर्वाचीन व्युत्पत्ति शास्त्र या शब्द निरुक्ति की कसौटी इस प्रकार के प्रयत्नों को संदेह की दृष्टि से देखती है किन्तु सृष्टि विज्ञान के तत्त्वात्मक अर्थों की दृष्टि से उनमें भारी सार है। वही उनकी चरितार्थता भी है। दर्शनार्थक उदन्द्र से भी इन्द्र, एवं इन्धनार्थक इन्ध से भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन्द्र दोनों व्युत्पत्तियां अर्थदृष्टया समीचीन है। इसे परोक्ष निर्वचन शैली कहा जाता है, जिसकी संगति ध्वनिमूलक न होकर अर्थमूलक थी। अतएव सृष्टि के अग्रिम गतितत्त्व को अग्रि और प्रतीक भाषा में अग्नि कहा गया है।

७- सूर्य त्रयी विद्या का प्रतीक है —

अग्नि मूर्तिमती त्रयोविद्या है। ऋग्-यजु-साम का त्रिकात्मक संस्थान अग्नि का सम्पूर्ण रूप है। अग्नि का ही विशिष्ट प्रतिनिधि सूर्य है। इस सौर ब्रह्माण्ड में सूर्य ही प्रतिष्ठा और केन्द्र है। सूर्य के लिए कहा गया है —

"सैषा त्रयी विद्या तपति"

त्रयी विद्या के साक्षात् दर्शन करना चाहें तो सूर्य उसकी स्फुट मूर्ति है। उसका अभिप्राय यही है कि त्रिकात्मक स्पन्दन या घर्षण से उत्पन्न जो तप, ऊष्मा या प्राण विश्व में व्याप्त है उसका सब बलिष्ठ ओजिष्ठ महिष्ठ रूप सूर्य है।

'निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च' मर्त्य भूत और अमृत प्राण तत्त्व को देशकाल में निविष्ट करता हुआ सूर्य का हिरण्मय देवरथ सतत गतिशील है। (ऋग्० १-३५-२) उसी की संज्ञा व्यक्त कालात्मक संवत्सर है। केन्द्र-व्यास-परिधि के अर्बुद-खर्बुद उदाहरण हैं। एक-एक परमाणु में यही संस्थान व्याप्त है, किन्तु इस सौर मण्डल में उसका सबसे विशिष्ट रूप सूर्य की रश्मियों में जो गति तत्त्व या तरंगात्मक कम्पन है, उसे ही सहस्र गौओं का ब्रह्माण्ड व्यापी विचरण कहा जाता है। सूर्य रश्मियां आती हैं, सीधे 'ऊर्ध्वस्थिति' या विजडित आकार में नहीं। वे क्रीडा करती हुई, आगे बढ़ती और पीछे हटती हुई, दाएं बाएं झूमती हुई जाती हैं —

"क्रीडन्नो रश्म आभुवः"

८. ऋत-सत्य —

ऊपर जिस त्रयीविद्या का उल्लेख हुआ है वह सृष्टि की आंगिरसी धारा है। यह आग्नेय प्राण तत्त्व है। जिस में केन्द्र हो वह प्राण का आग्नेय रूप है। जिसमें केन्द्र का विकास न हुआ हो वह ऋतात्मा सौम्य रूप होता है। केन्द्र का ही नाम सत्य या हृदय है। स - हृदय स - शरीर तत्त्व सत्य कहा जाता है। अ-हृदय स-शरीर तत्त्व ऋत कहा जाता है। हिम रूप में घनीभूत जल सत्य का रूप है। सत्य का एक देश पकड़ कर खींचा जाय तो सम्पूर्ण पदार्थ खिच जायगा। जल ऋत है उसका नियत केन्द्र नहीं है उसे पकड़ना चाहें तो एक देश से उसका सम्पूर्ण शरीर आकृष्ट नहीं होगा। वृक्ष के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भीतर का रस गति-आगति के आघात-प्रत्याघात से घनीभूत होता हुआ जब काष्ठ बन जाता है. तब सत्यात्मक हो जाता है। इस दृष्टि से सूर्य की मूर्ति है। वह सत्यनारायणदेव हैं। जितने पिण्ड हैं सब सत्य के रूप हैं। वस्तुतः जो अग्नि जल में व्याप्त है वह ऋताग्नि कहलाती है। जल में कम या अधिक जो कुछ तापमान है वह अग्नि का रूप है। वह ऋताग्नि है। जिस के कण बिखरे हुए हैं, वह ऋताग्नि है। वे ही अग्नि-कण जब घनीभूत होकर एक केन्द्र में संचित हो जाते हैं तब ऋताग्नि सत्याग्नि में परिणत हो जाती है और अग्नि-सत्ता का स्पष्ट भान होने लगता है। ऋताग्नि को प्रायः अग्नि कहते हैं, सत्याग्नि को इन्द्र शब्द से अभिहित किया जाता है (अहोरात्र-वाद पृ० २६) सूर्य और इन्द्र किन्हीं अर्थों में पर्यायवाची हैं एवं सूर्य सत्य का रूप है। त्रयीविद्या सत्य और आग्नेय है। उसका पूरक अथर्व ऋत और सौम्य है।

सभी वर्गों के लोग यज्ञ करें

विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भ
आ रोदसी अपृणाज्जायमानः।
वीडुं चिदद्रियभिनत् परायन्,
जना यदग्निमयजन्त पञ्च ॥ ऋग्० १०-४५-६;

अर्थ—जब पांचों प्रकार के व्यक्ति अग्निहोत्र करते हैं, तब संसार का प्रकाशक अग्नि, सभी लोकों का प्राणरूप वायु और उदय होता हुआ सूर्य (अपने प्रकाश से) द्युलोक और पृथिवी को पूरा भर देता है। (वह अग्नि इन्द्र या वज्र के रूप में) दूर से ही कठोर से कठोर पर्वतों को भी तोड़ देता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महर्षि दयानन्द और वेदानुसन्धान

—डा० सूर्यकान्त, डी. फिल्. (आक्सन)

[डा० सूर्यकान्त म० वि० के यशस्वी स्नातक थे। आप अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैदिक विद्वान् थे। अनेक भाषाओं पर आपका समान रूपसे अधिकार था। वैदिककोश आदि ग्रन्थ आपके प्रखर पाण्डित्य के द्योतक हैं। आप अनेक विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध रहे। आपके शिष्यों प्रशिष्यों की संख्या सहस्राधिक है। वेदानुसन्धान के प्रति आप सर्वात्मना समर्पित थे।–संपादक]

महर्षि दयानन्द ने जब अपना प्रचार कार्य प्रारम्भ किया, तब भारत-भूमि नाना प्रकार के मत–मतान्तरों से विप्लवित हुई अपने प्राचीन आर्यत्व को भूल चुकी थी। वर्णव्यवस्था जन्म से मानी जाने के कारण, सभी वर्ण अपने कर्मों की उपेक्षा कर रहे थे। बालविवाह, छूत–छात, सती प्रथा, स्त्री-शिक्षा–विरोध आदि अनेकों कुरीतियाँ धर्म का चोला पहन कर पनप रही थीं। सप्त समुद्रों की यात्रा करने वाले भारतीय सार्थवाहों की सन्तान समुद्र-यात्रा में धर्म के भ्रष्ट होने की कल्पना किए बैठी थी। संकीर्णता जनता के हृदयों पर अधिकार जमाये थी, वेद तो केवल पूजा की वस्तु रह गये थे, जिन्हें पढ़ना मनुष्य की शक्ति के बाहर की वस्तु समझा जाने लगा था। कुछ एक सुधारक-प्रवृत्ति के लोगों ने देश की इस शोचनीय अवस्था को देखकर सुधार करने का प्रयत्न किया था, पर गहरी निद्रा में पड़े इस देश को तो कड़ी चोट की आवश्यकता थी, जो दयानन्द जैसा साहसी पुरुष ही दे सकता था।

वेद को आधारशिला बना कर इस उत्साही ऋषि ने जो क्रान्ति का गान भारतीय–जनता को सुनाया, उसे सुन सभी विस्मयान्वित हो उठे, क्योंकि अंग्रेजी भाषा तथा यूरोपीय-शिक्षा से नितान्त अनभिज्ञ हिन्दू संन्यासी समाज-सुधार- विषयक इतने क्रान्तिकारी विचार रख सकता है, इसकी कल्पना भी किसी ने नहीं की थी।

ऋषि दयानन्द में दृढ़निश्चयात्मक बुद्धि थी। उन्हें वेदाध्ययन के क्षेत्र में तथा समाजसुधार के क्षेत्र में अनेक विरोधी शक्तियों का सामना करना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ा, पर वह तनिक भी नहीं घबराए। वस्तुतः वह उन साधारण अवसरवादी मनुष्यों में से नहीं थे, जो बहते पानी के साथ बह जाते हैं और जैसे कैसे, परिस्थितियों के समक्ष घुटने टेक देते हैं। उन्होंने तो परिस्थितियों को बदलना सीखा था, बहते पानी की धारा को मोड़कर उससे सूखती धरती अभिषिञ्चित करने को ठानी थी। हिमालय की हिमाच्छादित घाटियों के कष्ट उन्हें अपने मार्ग से हटा न सके, ओखीमठ की महन्त पदवी का प्रलोभन, उन्हें अपने ध्येय से विरत न कर सका। जो ठाना था, उसे कार्य रूप में परिणत करके ही उन्होंने चैन लिया। वैदिक मत के प्रचार तथा अवैदिक मतों के खण्डन की भावना जो प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द ने उन्हें चिनगारी के रूप में दी थी, वह प्रज्वलित अग्नि का रूप धारण करके न केवल भ्रान्त विचारधाराओं के विनाश में ही तत्पर हुई, प्रत्युत सदियों से विलुप्तप्राय वैदिक दीपशिखा को भी उसने पुन: प्रदीप्त कर दिया। आर्यसमाज की स्थापना द्वारा उन्होंने अपने कार्य को स्थाई रूप दिया ताकि उनका प्रारम्भ किया कार्य निरन्तर बढ़ता रहे।

इसमें सन्देह नहीं कि ऋषि-संचालित आर्यसमाज ने ऋषि के संकल्प को पूर्ण करने में पर्याप्त प्रयत्न किया तथा सफलता भी प्राप्त की। आर्यसमाज के प्रचार द्वारा स्त्री-शिक्षा, विधवा–विवाह, अछूतोद्धार इत्यादि कार्य इतने लोकप्रिय हो गये कि आज भारत की प्रत्येक विचारशील संस्था ने इन्हें अपना बना लिया है। सनातन-धर्मी भाई जो स्त्रियों को शिक्षा देना पाप समझते थे, आज कन्या-पाठशालाओं तथा महिला कालिजों की स्थापना पर गर्व करते हैं। छूत-छात अब समाप्त प्राय है तथा बाल-विवाह अन्तिम सांस ले रहा है।

इससे क्या समझा जाय कि आर्यसमाज अपना कार्य पूरा कर चुका है? नहीं। समाज-सुधार के साथ–साथ आर्यसमाज की स्थापना का अन्य मुख्य उद्देश्य देश में फैली वेदविषयक भ्रान्तियों को दूर करना था और इस क्षेत्र में अभी पर्याप्त कार्य करना शेष है। ऋषि दयानन्द का ऋग्वेद भाष्य इसी दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रयास था। उनकी इच्छा ऐसे वैदिक विद्यालयों की स्थापना करने की, थी जिनके माध्यम से ग्रन्थों का उच्चकोटि का अनुसन्धानात्मक अध्ययन सम्भव हो। काशी में ऐसे विद्यालय को स्थापित करने की चेष्टा की गई, पर कारणवश सफल न हो पाई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आज आर्य समाज का यह कर्तव्य हो जाता है कि इस क्षेत्र में ऋषि के संकल्पों को पूरा करे। दयानन्दकृत ऋग्वेदभाष्य की महत्ता में सन्देह नहीं किया जा सकता। पर, यह कथन भी अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि आधुनिक वेदार्थ-पद्धतियों में इसे यथोचित सम्मान नहीं मिल पाया। माधव-सायण आदि के भाष्य विश्वविद्यालयों में अधिक प्रचलित हैं तथा पाश्चात्य-विद्वानों द्वारा प्रसारित शैलियां ही अधिक वैज्ञानिक मानी जा रही हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आर्यसमाज के धुरन्धर विद्वान् वेद के कार्य में जुटकर दयानन्द-शैली की वैज्ञानिकता को सिद्ध करें। कहा जाता है कि ऋग्वेद-भाष्य में दयानन्द की निजी कल्पना तथा चातुर्य का मनमाना प्रदर्शन है। उनकी शैली नियमबद्ध न होकर स्वच्छन्द है, अतः समालोचनात्मक दृष्टि से ग्राह्य नहीं। वस्तुतः ऐसा ही आरोप सायण आदि के भाष्यों पर भी तथा आधुनिक पाश्चात्य-विद्वानों के भाष्य पर भी लगाया जा सकता है, जो प्राक्कल्पित पक्षपातों को लेकर ही वेदार्थ बतलाते हैं। आर्यसमाज के विद्वानों का कर्तव्य है कि वह समय की चेतावनी को समझकर इस कार्य को हाथ में लें, अन्यथा उन्हें कुसन्तान बनने का कलंक सहना होगा।

जीवन भर पुरुषार्थी रहें

कुर्वन्नेवेह कर्माणि, जिजीविषेच्छतं᳖ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति, न कर्म लिप्यते नरे॥

यजु० ४०-२

अर्थ—इस संसार में मनुष्य कर्म करता हुआ ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करे। इस प्रकार से तुम्हारी मुक्ति होगी। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार से मुक्ति नहीं होती है। निष्काम भाव से किया हुआ कर्म मनुष्य में लिप्त नहीं होता अर्थात् निष्काम भाव से कर्म मनुष्य में लिप्त नहीं होता है अर्थात् निष्काम भाव से कर्म करने वाला व्यक्ति कर्म बन्धन में नहीं पड़ता।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदमय जीवन

-श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

[श्री सातवलेकर जी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैदिक विद्वान् थे। महर्षि दयानन्द के बाद वेदों पर कार्य करने वालों में वे अग्रगण्य थे, आपने १०० से अधिक ग्रन्थ लिखे हैं। ये हिन्दी, मराठी और गुजराती में हैं, वैदिकवाङ्मय के दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशन का श्रेय आपको है। 'अथर्ववेद का सुबोध भाष्य' आपकी प्रखर प्रतिभा का द्योतक है। एक चित्रकार से वेदज्ञ होकर आपने सूर्यवत् अपनी प्रतिभा का प्रसार किया है। उनसे जीने की कला सीखें।– संपादक]

'यद् देवा अकुर्वन्, तत् करवाणि' (शतपथ ब्राह्मण १।१)

जो देवता करते हैं वैसा मैं करूंगा, यह एक वैदिक नियम है। देवताओं के आचार-व्यवहार के समान मैं अपना आचार–व्यवहार करूंगा और मैं देवतास्वरूप बनूंगा। वैदिकधर्मी लोग ऐसा निश्चय अपने मन में करें और वेद में जो देवताओं के वर्णन हैं वे पढ़ें और उनको अपने जीवन में ढालने का यत्न करें। इससे उनका जीवन देवता के समान हो सकता है। ये देवताएं कहां रहती हैं और क्या करती हैं, यह भी देखना आवश्यक है। इस विषय में निम्न स्थान में लिखे मन्त्रों में मननीय उपदेश दिया है, देखिये–

'यस्य त्रयस्त्रिंशद् देवा अंगे सर्वे समाहिताः' (अथर्व १०।७।१३)

जिसके अंग में सबके सब तैंतीस देव रहते हैं। अर्थात् तैंतीस देव परमात्मा के विश्व शरीर में रहते हैं। और देखिये–

'यस्य त्रयस्त्रिंशद् देवा अंगे गात्रा विभेजिरे।

'तान् वै त्रयस्त्रिंशद्देवान् एके ब्रह्मविदो विदुः ॥' (अथर्व२०।७।२७)

तैंतीस देव जिसके शरीर में गात्र- शरीर के अवयव बन कर रह रहे हैं, उन तैंतीस देव को ब्रह्मज्ञानी ही अकेले जानते हैं अर्थात् परब्रह्म के विश्व शरीर में तैंतीस देव उसके शरीर के अवयव बन कर रहे हैं। उनको ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं। तथा—

'यस्य भूमिः प्रमा, अन्तरिक्षमुतोदरम्

दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः' ॥ (अथर्ववेद १०।७।३२)

(जिसकी भूमि पांव है, अन्तरिक्ष जिसका उदर है, द्युलोक जिसका सिर है, उस ज्येष्ठ ब्रह्म के लिए मैं नमस्कार करता हूँ) और देखिये–

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'यस्य सूर्यश्चक्षुः चन्द्रमाश्च पुनर्णवः ।
अग्निं यश्चक्र आस्यं, तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥
यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरंगिरसोऽभवन् ।
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीः तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः' ॥

अथर्व १०/७/३३-३४

जिसका आँख सूर्य बना है, दूसरा आँख पुनःपुनः नया होने वाला चन्द्रमा बना है, अग्नि जिसका मुख है, वायु जिसका प्राण और अपान है, आंगिरस सूर्य जिसके आँख बने हैं, दिशाओं को जिसने कान बनाया है, उस श्रेष्ठ ब्रह्म के लिए मेरा नमस्कार है ।

परमात्मा अशरीर है, परन्तु अज्ञ लोगों को समझाने के लिए यहां इन मन्त्रों में उसके शरीर होने के समान वर्णन किया है । हम भी उसी भाषा में बोलेंगे और उसका परिणाम क्या होता है, देखेंगे–

१. परब्रह्म के शरीर में तैंतीस देवगण उसके शरीर के अवयव बन कर रहे हैं ।
२. इन तैंतीस देवगणों को, वे परमात्मा के विश्व शरीर के अवयव कैसे बने हैं और हमारा उनके साथ कैसा सम्बन्ध है, यह सब ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं ।
३. परब्रह्म परमात्मा के पांव यह भूमि है, उसका पेट यह अन्तरिक्ष है और द्यु उसका सिर है ।
४. सूर्य उसकी एक आँख है, चन्द्रमा दूसरी आँख है, अग्नि उसका मुख है, वायु उसका प्राण और अपान है, दिशाएँ उसके कान हैं ।

परब्रह्म परमात्मा के विश्व शरीर की कल्पना इस तरह की गई है । इसका अर्थ क्या होता है वह हम व्यवहार की भाषा से देखेंगे ।

हम पृथ्वी पर घूम रहे हैं, समझो हम परमात्मा के पांत में घूम रहे हैं, क्योंकि पृथ्वी उसके पाँव हैं । सूर्य उसकी आँख है और चन्द्रमाँ(प्रभु की) दूसरी आँख है । दिन भर उस प्रभु की सूर्य रूपी आँख हमारा व्यवहार देख रही है । रात्रि के समय उसकी दूसरी आँख निरीक्षण कर रही है । ये उस प्रभु की दोनों आँखें दिन-रात विश्व का निरीक्षण कर रही हैं । हमारा आचरण सदोष हुआ या कुछ दोष हमारे आचरण में हुआ तो ये परमेश्वर की आँखें उसको देखेंगी और हमें उनसे कौन बचा सकता है ? परमेश्वर की आँखें रात-दिन हमारे ऊपर निगरानी कर रही हैं, यह मनुष्य जानें और जहाँ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तक सम्भव हो, वहाँ तक प्रयत्न करके अपना आचरण निर्दोष हो, ऐसा यत्न करें।

अग्नि उस प्रभु का मुख है। उस मुख में हवनीय द्रव्य डालते हैं। वह आग में डाल रहे हैं ऐसा न समझकर हम परमेश्वर के मुख में हवन कर रहे हैं, ऐसा मानें तो जीवित और जागृत परमेश्वर का मुख हमारी आहुतियां ले रहा है, ऐसा प्रतीत होकर साक्षात् परमेश्वर का सम्बन्ध हमसे होगा।

वायु परमात्मा का प्राण और अपान है, उस परमात्मा के प्राण में हम श्वास-उच्छ्वास कर रहे हैं। हम प्राण वायु लेते हैं, उस परमात्मा का प्राण हम अपने अन्दर ले रहे हैं। परमेश्वर का प्राण हमारे अन्दर जाकर हमें जीवित रख रहा है, ऐसा हम मानें तो प्रत्येक श्वास के साथ परमात्मा की जीवनशक्ति हमारे अन्दर जा रही है और हमारे शरीर का जीवन उस परमात्म शक्ति से हो रहा है, यह ध्यान में आकर हमें सर्वत्र परमात्मा का साक्षात्कार होगा।

देवताओं के साथ जीवन

सब देवताएं परमात्मा के विश्व शरीर में रहती हैं, सब विश्व परमात्मा का शरीर है, सर्वत्र परमेश्वर भरा है, कोई स्थान उससे खाली नहीं है। हम इस स्थान में घूम रहे हैं, वे हम सब परमात्मा के उदर में ही घूम रहे हैं। परमात्मा के पेट से हम बाहर नहीं जा सकते।

हम पानी पीकर अपनी तृषा शान्त करते हैं, वह पानी परमपिता परमात्मा का जीवन रस है। जल देवता को ही हम पीते हैं और वह जलदेवता हमारे शरीर का अंग बनकर रहती है। वायु देवता परमात्मा का प्राण और अपान है। श्वास द्वारा परमात्मा के प्राण को ही अपने अन्दर लेते हैं और उससे हम जीवित रहते हैं।

अन्न हम खाते हैं। अन्न देवता है, उस देवता को ही हम खा रहे हैं और अन्न देवता हमारे शरीर में जाकर हमारे शरीर का भार बनती है और हमारे शरीर का बल बढाती है। अग्नि देवता है। वह हमारा अन्न पकाती है और हमारी सहायता हर प्रकार से करती है। औषधि व वनस्पतियां देवता हैं। उनको हम खाते हैं और वे हमारे शरीर के मल को धोकर नष्ट करती हैं, उनके द्वारा हमारा शरीर निर्दोष होता है और आरोग्य सम्पन्न रहने में सहायता करती है।

सूर्य और चन्द्रमा ये देवताएं हैं। ये अपने प्रकाश किरणों से हमें सत्य देती हैं 'सूर्य आत्मा जगतः तस्थुषश्च', सूर्य स्थावर जंगम का आत्मा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। सूर्य से जीवनशक्ति हमें मिलती है और चन्द्रमा से औषधियों की वृद्धि होती है। इन औषधियों को खाकर हम पुष्ट होते हैं।

हमारे चारों ओर पृथ्वी, आप, तेज, वायु और आकाश ये देव हैं और शरीर भी इन देवों का ही बना है। चारों ओर से, हमारी सब ओर से, हमें देवताओं ने घेरा है, हमारे अंदर और बाहर देवताएं भरी हैं। देवता का निवास ऐसा स्थान ही है। अन्दर और बाहर चारों ओर हमारे सब ओर, देवताएं हैं। देवताओं को हम खाते हैं, देवताओं को हम पीते हैं, देवताओं से हम अपना काम लेते हैं और सर्वथा देवताओं को सूंघते हैं। देवताओं से हम अपना काम लेते हैं और सर्वथा देवताओं में विचरते हैं।

ये देवताएं परमात्मा के दूत हैं। सूर्य, चन्द्र, वायु, औषधियां, जल, पृथ्वी दिन-रात हमारी सहायता कर रही हैं। कोई ऐसा क्षण नहीं है कि जिस क्षण में हम इन देवताओं से पृथक् रह सकते हैं।

देवताएं परमात्मशक्तियां हैं—

ये सब देवताएं सम्पूर्ण रूप से परमात्मा की शक्तियां हैं। इसलिये कहा है—

'तद् एव अग्निः, तद् आदित्यः, तद् वायुः, तद् उ चन्द्रमाः'

वा० यजु० ३२।१

वह परब्रह्म ही अग्नि, आदित्य, वायु और चन्द्रमा है। अर्थात् परमात्मा की आग्नेयशक्ति अग्निरूप लेकर विश्व में आई है, परमेश्वर की जीवनशक्ति वायुरूप धारण करके विश्व में आ गई है, परमेश्वर की आदानशक्ति आदित्यरूप से सबको ग्रहण कर रही है। इसी तरह परमात्मा की अन्यान्य शक्तियां अन्यान्य रूप धारण करके अन्यान्य कार्य कर रही है।

इससे यह सिद्ध हुआ कि परमात्मा की आधारशक्ति पृथ्वी के रूप में हमें आधार दे रही है। पृथ्वी को देखकर यह परमात्मा की आधार शक्ति है, ऐसा समझकर हम पृथ्वी में परमात्मा की आधार शक्ति का साक्षात्कार करके, जल में परमात्मा की शान्ति रही है ऐसा अनुभव करके जल में परमात्मा की शान्ति रूपी जीवन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्ति को हम देखें। वायु में प्राणन शक्ति परमात्मा की है, ऐसा देखकर वही परमात्मा की जीवन और प्राणनशक्ति वायु रूप में हमें प्राप्त हो रही है, ऐसा अनुभव करके वायुस्पर्श से हम परमात्मा का साक्षात्कार करें।

इस तरह प्रत्येक देवता में जो-जो विशेष गुण हैं वे सब गुण परमात्मा के उन देवताओं में है, ऐसा समझकर हम सर्वत्र परमात्मा की महाशान्ति को विविध रूपों में अनुभव करें और इस तरह परमपिता परमात्मा अन्दर-बाहर और चारों ओर हमारी सहायता कर रहा है, उसकी परम सहायता से हम जीवित रहते हैं, पुष्ट हो रहे हैं, बढ़ रहे हैं, ऐसा अनुभव करें और जीवित-जागृत परमात्मा को अपने अन्दर-बाहर, नीचे-ऊपर तथा चारों ओर अनुभव करके परमानन्द के भागी बनें।

सदा सर्वदा परमात्मा को चारों ओर देखने का अनुष्ठान इस रीति से हो सकता है और इसमें सफलता प्राप्त हुई तो जो आनन्द मिलता है, वह असीम आनन्द है।

पाठकगण इस असीम आनन्द को प्राप्त करने का यह अनुष्ठान करें और आनन्द-प्रसन्नता का जीवन जीवें और सर्व काल के लिये दुःख को दूर करें।

वेदोक्त कर्म करें

नकिर्देवा मिनीमसि, नकिरा योपयामसि।
मन्त्रश्रुत्यं चरामसि ॥

ऋग्० १०-१३४-७

अर्थ—हे देवो ! हम न कभी नियमों को तोड़ते हैं और न कभी नियमों को नष्ट होने देते हैं। वेद के मन्त्रों के आदेशानुसार आचरण करते हैं।

★★

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदों के परिप्रेक्ष्य में

अव्यक्त से व्यक्त

–आचार्य उदयवीरशास्त्री, विद्यावाचस्पति

[आचार्य उदयवीर शास्त्री म० वि० के सबसे पुराने स्नातक हैं। आप अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के दर्शनशास्त्री हैं। सभी दर्शनों पर आपका समान रूप से अधिकार है। आपके ग्रन्थ अनेक संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत हैं। सुर सरित् के तुल्य निरन्तर गतिशीलता ही आपके चरमोत्कर्ष का रहस्य है। उन्हें अव्यक्त से व्यक्त के रूप में देखें। – संपादक]

आदिकाल –

सर्वप्रथम जब से मानव ने आंखें खोली, अपने सामने उसने विशाल भूमण्डल को फैला पाया। दिन में देदीप्यमान दिवाकर और रात में तारे–भरे नभोमण्डल तथा चाँद की चाँदनी ने उसके मस्तिष्क को चमत्कृत कर दिया। मानव की कल्पना उडान भरने लगी। हरे–भरे जंगल, ऊचीं–नीची पर्वत-श्रेणियाँ, छलछलाते जलस्रोत, निरन्तर प्रवाहित सरिताओं की धारा एवं प्रकृति के विविध वैभव ने मानव के ज्ञानतन्तुओं को उत्तेजित कर दिया। जैसे अचिन्त्यशक्ति भगवान् की अपार कृपा से मानव के अभ्युदय निःश्रेयस्–सिद्धि के लिए ऐश्वर्यसम्पन्न संसार का सृजन हुआ, वैसे ही उसके मानस अथवा बौद्धिक सन्तुलन के लिए ज्ञानमय वेद का उपदेश प्राप्त हुआ। मानव ने तब अपने को सच्ची माता की सुखमय गोद में आसीन पाया, उसकी वृत्ति संयत हो सन्मार्ग पर आरूढ़ हो गई। इसकी शान्त सुखद छाया में उसने विश्व–पहेली को समझाने का प्रयत्न किया।

आदिकाल से विश्व की व्याख्या आज तक की जाती चली आ रही है और आगे भी इस क्रम के रूद्ध हो जाने की कोई आशा नहीं दीखती। साधारण मानव ही नहीं, असाधारण व्यक्तियों के लिए भी यह एक बड़ी समस्यापूर्ण पहेली है। यह जगत् कहाँ से आ जाता है? इस आशंका का समाधान अनेक रूपों में किया गया है, जिसने जिज्ञासु-समुदाय को और उल-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

झन में डाल दिया है। उन विभिन्न विचारधाराओं का कोई एक उद्गम मालूम किया जा सका होता, तो सच्चे लक्ष्य तक पहुँचने में अधिक सुविधा हो गई होती।

व्यक्त से व्यक्त –

गौतम कृत न्यायदर्शन के चौथे अध्याय के पहले आह्निक में जगदुत्पत्ति विषय पर विभिन्न ग्यारह मतों का उल्लेख किया गया है। परन्तु गौतम का अपना सिद्धान्त वहां यही प्रतिपादित है कि इस व्यक्त जगत् की उत्पत्ति व्यक्त-कारण से ही होती है–

"व्यक्ताद् व्यक्तानां प्रत्यक्षप्रामाण्यात्" उस प्रकरण में यह गौतम का सूत्र है। इस पर व्याख्या करते हुये वात्स्यायनमुनि ने लिखा है— भूत कहे जाने वाले व्यक्ति, परम सूक्ष्म पृथिवी आदि से शरीर आदि व्यक्त द्रव्य उत्पन्न होता है। जो इन्द्रियों से जाना जाता है, वह व्यक्त है, उसके समान होने से उसका कारण भी व्यक्त है। दोनों में समानता क्या है ? रूप आदि गुणों का योग। रूप आदि गुणों से युक्त नित्य पृथ्वी आदि से रूपादि-गुणयुक्त शरीरआदि पदार्थ उत्पन्न होते हैं। प्रत्यक्ष प्रमाण से देखा जाता है कि रूपादि-गुणयुक्त जैसी मिट्टी होती है, वैसा ही घडा आदि द्रव्य होता है। इसी के अनुसार न देखे हुए का अनुमान कर लिया जाता है। मूल उपादान और उसके विकार में रूप आदि का अन्वय देखे जाने से अतीन्द्रिय पृथ्वी आदि की कारणता का अनुमान हो जाता है।

वात्स्यायन के इस लेख से स्पष्ट है कि शरीर घट आदि इन्द्रियग्राह्य व्यक्त पदार्थों के मूलकारण नित्य अतीन्द्रिय पृथ्वी आदि (पृथिव्यादि के परमाणु) भी व्यक्त तत्त्व हैं, अव्यक्त नहीं।

अव्यक्त से व्यक्त–

इसके विपरीत दूसरे स्थलों पर हम देखते हैं कि यह सब व्यक्त जगत् अव्यक्त से उत्पन्न होता बताया है। भगवद्गीता के दो श्लोक इस विषय का स्पष्ट शब्दों में कथन करते हैं—

'अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥'

–गीता– २, २८

'अव्यक्ताद् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥'

–गीता ८, १८

हे अर्जुन ! सब भूत, आदि अवस्था में अव्यक्त रहते हैं, इनकी आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दशा अव्यक्त है। परिणत होकर मध्य में व्यक्त हो जाते हैं, नाश होने पर फिर अव्यक्त अवस्था में चले जाते हैं। उत्पत्ति से पूर्व अव्यक्त उत्पन्न होने पर व्यक्त, विनाश होने पर पुनः अव्यक्त, इनकी परिस्थिति ही ऐसी है, इस विषय में चिन्ता क्या करनी ?

जब सर्ग का समय आता है, तब समस्त व्यक्त पदार्थ अव्यक्त तत्त्व से प्रादुर्भूत हो जाते हैं। रात्रि अर्थात् प्रलय काल आने पर उसी अव्यक्त संज्ञक तत्त्व में इन सबका लय हो जाता है।

मनुस्मृति के प्रारम्भिक श्लोकों में भी गीता के समान व्यक्त जगत् का प्रादुर्भाव अव्यक्त से बताया है। इसके अतिरिक्त वेद में भी इस विषय के संकेत मिलते हैं ! ऋग्वेद के दशम मण्डल के १२६ सूक्त की ऋचा है —

'कामस्तदग्रे समवर्त्तताधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
सतो बिन्दुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा' ॥

सर्ग के आदिकाल में अध्यक्ष सर्वनियन्ता का वह संकल्प है, जो मन का पहला बीज होता है। क्रान्तदर्शी ऋषि प्रतिभासम्पन्न बुद्धि द्वारा विचार मस्तिक में व्यक्त के (सतः) सम्बन्ध को (बन्धुं) अव्यक्त (असति) में समझ लेते हैं।

सर्वसाधारण को यह विषय पूर्णरूप से हृदयंगम करना कठिन है, विचारशील विद्वान् इसकी वास्तविकता को जान लेने में समर्थ हो जाते हैं, फिर भी सर्वकल्याण की भावना से प्रयत्न इस ओर होता ही है। अव्यक्त से व्यक्त का प्रादुर्भाव होने का कथन जिज्ञासु को अचम्भे में डाले रखता है और वह अपने विश्वास को एक लक्ष्य में टिका नहीं पाता। इसी कारण विचारधारा अनेक दिशाओं में बहने लगती है, जो अनेक प्रकार के संशयों को दृढ़ बनाने में सहायक हो जाती है। अभी हमने गौतम-न्यायसूत्रों के वर्णन का उल्लेख किया है, पर इस समय हम उसके विस्तार में जाना नहीं चाहते। हमारे सामने दो ही स्थिति हैं–(१) गौतम, कणाद का कहना है, कि व्यक्त जगत् व्यक्त उपादान कारण से बनता है। (२) अन्य ऋषियों तथा स्मृति एवं श्रुति का कहना है कि व्यक्त जगत् का उपादान कारण अव्यक्त है, इस पर हमें विचार करना चाहिए।

व्यक्त का स्वरूप –

इस दिशा में सर्वप्रथम यह जान लेना अपेक्षित है कि 'व्यक्त' का स्वरूप क्या है ? वस्तु की वह कौन सी अवस्था है, जिसे हम व्यक्त कहते हैं?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रायः यह समझा जाता है कि जो वस्तु इन्द्रियों द्वारा ग्रहण की जा सके, वह 'व्यक्त' मानी जाती है। ऐसा नहीं कि व्यक्त का यह रूप समझा जाना सर्वसाधारण या अनजान लोगों का हो, ग्रन्थकारों के भी उल्लेख उपलब्ध होते हैं। मनुस्मृति के प्रारम्भिक ग्यारहवें श्लोक के अव्यक्त पद की व्याख्या करते हुए टीकाकार कुल्लूकभट्ट ने लिखा है— 'अव्यक्तं बहिरिन्द्रियगोचरम्' अर्थात् अव्यक्त वह है, जो बाह्य इन्द्रियों से ग्रहण न किया जाय। इसका स्पष्ट अर्थ है, जो बाह्य इन्द्रियों से ग्रहण किया जाय वह 'व्यक्त' है परन्तु गौतम, कणाद के विचार से व्यक्त का यह स्वरूप मान्य नहीं है।

अभी हमने इस लेख में ऊपर वात्स्यायन के एक संस्कृत सन्दर्भ का हिन्दी रूपान्तर दिया है। वहां व्यक्त जगत् के जिस उपादान-कारण को व्यक्त कहा है, इसके लिए तीन विशेषणपदों का प्रयोग किया गया है परम-सूक्ष्म, अतीन्द्रिय, नित्य। स्पष्ट है, वहाँ इन पदों के द्वारा पृथ्वी आदि के परमाणुओं का निर्देश है। परमाणुओं के अतीन्द्रिय (इन्द्रियों से ग्रहण न किया जाना) होने में कोई संदेह नहीं है, पर उनको 'व्यक्त' माना गया है। अन्यथा गौतम, कणाद का यह सिद्धान्त ही उखड जाता है कि व्यक्त जगत् की उत्पत्ति 'व्यक्त' से होती है। इससे हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि इन्द्रियों द्वारा ग्रहण होना व्यक्त का रूप-एक मोटा कथन है। व्यक्त की कोई अन्य परिभाषा होनी चाहिए।

परमाणु व्यक्त है —

वात्स्यायन ने उक्त सन्दर्भ में इसको स्पष्ट किया है। वह कहता है, रूपादि गुणयुक्त कार्य व्यक्त है और वह व्यक्त कारण से ही उत्पन्न होता है। शंका की गई, उस कारण मे व्यक्त का स्वरूप क्या है ? भाष्यकार समाधान करता है - जैसे रूपादि गुणयुक्त कार्य है, वैसा ही उस कार्य-मूल उपादान-कारण भी रूपादि गुणों से युक्त है। कार्य के साथ कारण की यह समानता कारण के 'व्यक्त' भाव को स्पष्ट करतो है। इससे यह परि-णाम निकलता है कि किन्हीं भी रूपादि विशेषताओं से युक्त होना वस्तु के 'व्यक्त' भाव को सिद्ध करता है। गौतम, कणाद के विचार से व्यक्त घटादि कार्यों में रूपादि गुणनिमित्तक जो विशेषता है, वैसी ही उनके उपादान-कारण परमाणुओं में भी हैं, इसलिए परमाणु अतीन्द्रिय होता हुआ भी 'व्यक्त' है और इस आधार पर गौतम, कणाद का व्यक्त से व्यक्त उत्पन्न होने का सिद्धान्त सम्पन्न होता है।

न्याय-वैशेषिक सिद्धान्त के अनुसार परमाणु अतिसूक्ष्म है, इसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी "परम-अणु" है— छोटेपन की सीमा। वात्स्यायन ने उक्त सन्दर्भ में इसे परमसूक्ष्म कहा है। ये परमाणु चार प्रकार के बतलाये गये हैं—पार्थिव, आप्य, तैजस, वायवीय। पृथ्वी परमाणु का छोटे से छोटा कण है इसका अब पृथ्वी रूप में विभाग नहीं किया जा सकता, अर्थात् वह पृथ्वी के दो कण नहीं है, वह निरवयव पृथ्वी तत्त्व है। इसका आगे विभाग न होने का यह अभिप्राय नहीं है कि इसका आगे विश्लेषण न हो सकता हो, प्रत्युत इतना ही तात्पर्य है कि पृथ्वीरूप में अन्तिम तत्त्व है। इसमें उन विशेषताओं का उद्भव है, जिनके आधार पर इसका नाम पृथिवी, जलादि नहीं। गन्ध और रूप आदि वह विशेषता इसमें रहने पर घटादि के समान इन्द्रियग्राह्य नहीं है, क्योंकि उसके लिए एक और विशेषता की आवश्यकता है, जिसे "महत्त्व" कहा जाता है, वह अभी इसमें उत्पन्न नहीं हुआ। इस प्रकार परमाणु अतीन्द्रिय रहता हुआ भी व्यक्त है।

परमाणु - विश्लेषण :—

पृथ्वी रूप में अन्तिम तत्त्व होने पर भी पृथिवी परमाणु का आगे विश्लेषण किया जा सकता है। पर विश्लेषण होने पर जो वह तत्त्व होगा, उसे पृथिवी नहीं कहा जा सकेगा, क्योंकि वहां उन विशेषताओं का अन्तर्धान हो चुका है, जिनके कारण उसका नाम पृथ्वी हुआ। तत्त्व की उस अवस्था में वहां उन सब विशेषताओं का अभाव होने से–जिनके कारण तत्त्व का पृथ्वी, जल आदि विशेष नाम रक्खा गया–उसको "अविशेष" कहेंगे। यह विषय अब न्याय, वैशेषिक की प्रतिपाद्य सीमा से बाहर निकल आता है, और सांख्य के प्रतिपाद्य की सीमा में प्रवेश कर जाता है। न्याय, वैशेषिक में पृथिवी आदि के आद्य मूलभूत कणों से ही जगदुत्पत्ति की व्याख्या का प्रारम्भ किया गया है। सूक्ष्म से स्थूलभाव की प्रक्रिया और प्रमाणों द्वारा उसकी परीक्षा करना इन शास्त्रों का प्रतिपाद्य विषय है। फलतः दृश्यमान स्थूल जगत् के तदनुकूल सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्वों को मूल मानकर इन शास्त्रों की प्रवृत्ति है। इन मूल कणों की नित्यता इतने अंश में है कि कोई पार्थिव आदि विकार उनके अस्तित्व के बिना सम्भव नहीं, और उसके आगे प्रतिपादन की यहां अपेक्षा नहीं।

उपसंहार –

यद्यपि समस्त अध्यात्म अधिभूत, त्रिगुण वैषम्य का ही परिणाम है, पर किसी स्तर पर विशेष विचार के लिए विभिन्न पद्धतियों का आश्रय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ले लिया जाता है। यह केवल वस्तुतत्त्व के विवेचन की भावना से होता है। इसमें किसी प्रकार के पारस्परिक विरोध की आशंका का अवकाश नहीं। फलतः न्याय, वैशेषिक के आरम्भवाद के अनुसार किस प्रकार अतीन्द्रिय तत्त्व से इन्द्रियग्राह्य पदार्थ बन जाते हैं, यह स्पष्ट कर दिया है। परिणामवाद के अनुसार त्रिगुण में वैषम्य आते ही पदार्थों की अभिव्यक्ति होने लगती है। यह सब त्रिगुण के विषमतापूर्ण अन्योन्यमिथुन का चमत्कार है। यदि हम इस रहस्य को समझ पाते हैं। त्रिगुण की साम्य अवस्था जब त्रिगुण सर्जनोन्मुख नहीं है, उसका 'अव्यक्त' रूप है। तब अव्यक्त से व्यक्त हो जाने की पहेली समझाने में निःसंदेह हमें सुविधा हो जाती है। 'अव्यक्त' और 'व्यक्त' इन विरोधी प्रतीत होने वाले पदों को देख कर हमें भयभीत नहीं होना चाहिए। इस प्रक्रिया के अनुसार 'अव्यक्त' से 'व्यक्त' होने पर तत्त्व-स्वरूप में कोई अन्तर नहीं आता। अव्यक्त और व्यक्त का यह संचर और प्रतिसंचर निरन्तर निर्बाध चला करता है।

★—★

ऊँच-नीच का भेदभाव न हो

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते
सं भ्रातरो वावृधुः सौभागाय।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां
सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः॥

ऋग्० ५-६०-५

अर्थ—ज्येष्ठ और कनिष्ठ (ऊँच-नीच, बड़ा-छोटा) के भाव से रहित, ये मरुत् (प्राणवायु) भाई के तुल्य रहते हुए सौभाग्य के लिए बढ़े हैं। सदा युवा और सुन्दर कर्म करने वाला रुद्र (जीवात्मा) इनका पिता है। सुन्दर अन्नादि-समृद्धि देने वाली पृथिवी मरुतों के लिए शुभ दिन करे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदापौरुषेयत्व

–आचार्य देवदत्तशर्मोपाध्याय

[आचार्य देवदत्त शर्मा श्री स्वामी शुद्धबोधतीर्थजी के पट्ट शिष्यों में थे। संस्कृत-विश्वविद्यालय वाराणसी में दर्शन विभागाध्यक्ष थे। व्याकरण और षड्दर्शनों के मर्मज्ञ विद्वान् थे। वाराणसी नगरी आपके पाण्डित्य की धाक मानती थीं। आपका तपोमय जीवन शिष्यों के लिए आदर्श था। आपका वेदविषयक शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत है। —संपादक]

अद्वैत-वेदान्त तथा श्रुति –

प्रसंगवश सर्वप्रथम यह बता देना आवश्यक होगा कि अद्वैत वेदान्ती वेद को परमेश्वर का भी बनाया हुआ नहीं मानते। उनका कहना है कि सर्वज्ञ होने के कारण परमेश्वर पूर्व सृष्टि में परम्परागत प्रस्तुत वेद को ही इस सृष्टि के आदि में ऋषियों के हृदय में उपदेश के द्वारा प्रकाशित कर देता है, न कि उनको पूर्वसृष्टि से भिन्न नवीन रूप में बनाता है। अतएव उनका कहना है कि —

'श्रुतीनामीश्वराज्जन्म केवलं श्रुतिषु श्रुतम्।
मानान्तरोपलब्धेऽर्थे रचना तु न मीयते॥'

अर्थात् ईश्वर ने नवीन रूप से वेदों को नहीं रचा, केवल सृष्टि के आदि में पूर्ववत् उपदेश मात्र कर दिया है। इसी अभिप्राय को सिद्धान्त रूप से हृदयंगम कर परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री चित्सुख मुनि ने अपने ग्रन्थ 'तत्त्व प्रदीपिका' के प्रथम परिच्छेद के अन्त में वेदान्तों को अपौरुषेय सिद्ध करने के लिए तन्मूलभूत वेदों को पूर्वोत्तर पक्ष प्रदर्शन पुरःसर 'अपौरुषेय' सिद्ध किया है। वेदों की पौरुषेयता में कोई प्रत्यक्ष प्रमाण है ही नहीं, जिससे कि यह कह सकें कि यह अमुक ने वेद बनाये। क्योंकि संसार में वेदों को बनाने वालों को आज तक किसी ने दृष्टिगोचर किया ही नहीं, इस कारण वेदों की पौरुषेयतादि में अनुमानादि प्रमाण ही हो सकते हैं। अतएव आचार्य चित्सुख मुनि ने वेदों की पौरुषेयता सिद्ध करने के लिए पूर्व पक्ष से तीन प्रकार के अनुमान प्रस्तुत किये हैं, उनमें पहला यह है कि—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्व पक्ष– १—

"वेदवाक्यानि पौरुषेयाणि वाक्यत्वात् कालिदासादिवाक्यवत्"

अर्थात् वेदवाक्य पुरुषों के बनाये हुए हैं, वाक्य होने से जैसे कि कालिदास के वाक्य।

२. 'वेदवाक्यानि आप्तप्रणीतानि; प्रमाणत्वे सति वाक्यत्वात् मन्वादिवाक्वत्'

अर्थात् वेदवाक्य आप्त (सत्यवक्ता) पुरुष के बनाये हुए हैं। प्रमाणिक वाक्य होने से मनुस्मृति आदि के वाक्यों की भांति।

उत्तरपक्ष –

पौरुषेयवादी पूर्वपक्षी के इन दोनों अनुमानों के खण्डनार्थ किसी अपौरुषेयता वादी सिद्धान्ती ने विपक्ष में यह अनुमान प्रस्तुत किया—

'वेदस्याध्ययन सर्वं गुर्वध्ययनपूर्वकम्
भारतस्याध्ययनत्वेन साम्प्रताध्ययनं यथा ।।'

अर्थात् वेद का सम्पूर्ण अध्ययन अनादि काल से गुरु परम्परा पूर्वक चला आ रहा है। तात्पर्य यह निकला कि वेद इसीप्रकार अनादि काल से चला आ रहा है। किसी पुरुष ने इसको नहीं बनाया। इस कारण यह अपौरुषेय है।

अपौरुषयेता में प्रमाण –

पौरुषेयतावादी पूर्वपक्षी की इन पूर्वोक्त समग्र शकाओं का निराकरण हो जाने पर भी पाठकों के निश्चयार्थ श्रुति, स्मृति, अनुमान–प्रमाण भी उपस्थित करते हैं, जो कि वेदों को नित्य और अनादि बतलाते हुए साक्षात् अपौरुषेय सिद्ध कर रहे हैं, उनमें दिग्दर्शन रूप से कुछ का ही यहां निम्न प्रकार से उल्लेख किया जाता है –

१–'वाचा विरूपनित्यया'

अर्थात् वेदरूपी नित्य वाणी के द्वारा।

२–'यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै'

अर्थात् प्रभु ने ब्रह्मा को पैदा कर उसको वेदों का उपदेश दिया। कहने का तात्पर्य यह है कि वेद ब्रह्मा जी से भी पहले विद्यमान थे।

३–'नाचिकेतमुपाख्यानं मृत्युप्रोक्तं सनातनम्'

अर्थात् नचिकेता द्वारा कहे गये मृत्यु सम्बन्धी सनातन (अनादि) इस वेद के उपाख्यान को सुनो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४–'अनादि निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयंभुवा'

अर्थात् स्वयंभु ने ऐसी नित्य वाणी बोली जिसका आदि और अन्त नहीं।

५–'वेदा अपौरुषेयाः सम्प्रदायाविच्छेदे सत्यस्मर्यमाणकर्तृकत्वात्, आत्मवत्'

अर्थात् वेद अपौरुषेय हैं, क्योंकि इनका कोई कर्ता नहीं, पुनरपि अविच्छिन्न गति द्वारा परम्परा से चले आ रहे हैं, जैसे आत्मा इत्यादि। इस प्रकार इन श्रुति, स्मृति, तथा अनुमानादि प्रमाण से वेद नित्य और अनादि होने के कारण अपौरुषेय सिद्ध हो जाता है।

यदि कोई यह शंका करे की **'वाचा विरूपनित्यया'** इत्यादि श्रुति आदि तो अन्यपरक या अन्यार्थक हैं, वेद की नित्यत्वपरक नहीं। तो यह कहना भी ठीक नहीं, क्योंकि मीमांसा में प्रदर्शित देवताधिकरण न्याय के द्वारा प्रमाणान्तर का सम्बन्ध या विरोध न होने पर अन्यपरक वाक्यों का भी स्वार्थ अर्थात् अपने स्वाभाविक अर्थ में प्रामाण्य स्वीकार कर लिया जाता है। अतः यह पूर्वोक्त श्रुति-स्मृत्यादि स्वार्थ मं प्रमाणित होन के कारण वेद का नित्यत्व एवं अनादित्व प्रदर्शित कर अपौरुषेयत्व सिद्ध करने में सर्वथा समर्थ हैं।

यह तो रहीं चित्सुखाचार्य आदि अद्वैतवादियों की बातें, जिनका कि प्रसंगवश उल्लेख किया गया है। अब अन्यों के मत से भी वेद को अपौरुषेय सिद्ध किया जाता है।

मीमांसादर्शन –

मीमांसाशास्त्र-प्रणेता महर्षि 'जैमिनी' ईश्वर-प्रणीत या ईश्वरोच्चरित न मानते हुए भी पुरुषप्रणीत न होने के कारण वेद को अपौरुषेय ही मानते हैं। अतएव 'चोदना' सूत्र के श्लोक वार्तिक में कुमारिल स्वामी ने—

"यद्वा वक्तुरभावेन न स्युर्दोषाः निराश्रयाः"

अपिच "यदा स्वतः प्रमाणत्वं तदाऽन्यन्नैव मृग्यते।
निवर्तते हि मिथ्यात्वं दोषाज्ञानादयन्नतः॥"

अर्थात् वेद का कोई मनुष्य बनाने वाला न होने से उसमें किसी दोष की सम्भावना नहीं की जा सकती। जबकि वे स्वतः प्रमाण हैं तो किसी अन्य वस्तु के ढूंढ़ने की आवश्यकता ही नहीं, क्योंकि दोष के होने से उसमें मिथ्यात्त्व आ ही नहीं सकता इत्यादि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार मीमांसादर्शन प्रथमाध्याय के पंचम सूत्र के भाष्य में शबर मुनि स्पष्ट लिखते हैं कि— 'तस्मात् कारणादवगच्छामो न कृत्वा सम्बन्धं व्यवहारार्थं केनचिद् वेदाः प्रणीता इति'

अर्थात् इस कारण हम जानते हैं कि किसी ने नवीन सम्बन्ध बनाकर व्यवहार के लिये वेदों को रचा हो यह बात नहीं, अपितु वेद अपौरुषेय हैं।

अर्हतप्रवर हरिभद्रसूरि ने भी 'षड्दर्शन-समुच्चय' में मीमांसक का मत प्रतिपादन करते हुए कहा है कि 'शब्दशाश्वत वेदोत्थम्' अर्थात् शाश्वत नित्य वेदों के शब्दों से प्रकट हुआ अर्थ ही आगम प्रमाण कहलाता है। इससे यह बात निकल आई कि मीमांसक वेदों को अपौरुषेय मानता है।

लौकिक युक्ति—

जब आप किसी बुद्धिमान् व्यक्ति से पूछेंगे, कि विधान पहले या शासन (राज्य) पहले, अर्थात् राज्य और विधान में कौन पहले हुआ करता है, तो वह व्यक्ति निःसन्देह अविलम्ब यही उत्तर देगा कि विधान पहिले और राज्य पीछे, क्योंकि किसी भी राज्य को चलाने से पूर्व उसके संचालनार्थ विधान का बनाना परम आवश्यक है। अतः जब कोई विधान ही नहीं होगा तो शासन (राज्य) किस प्रकार चलाया जा सकता है। विधान के बिना सब लोग स्वच्छन्दगामी बन मनमानी कर सकते हैं और उच्छृंखल वृत्ति को धारण कर शासन की तो क्या कथा? प्रत्युत उसके विरुद्ध अशासन या कुशासन की ओर अग्रसर हो सकते हैं। ऐसी अवस्था में महाद्वीप और देश-देशान्तरों की तो क्या चले, एक छोटे से नगर, ग्राम या समूह का भी शासन चलाना (अर्थात् राज्य करना सर्वथा असम्भव है। अतः किसी भी राज्य के संचालनार्थ जिस प्रकार एक शासनकर्त्ता सुयोग्य राजा की परमावश्यकता है, उसी प्रकार सुविज्ञ निर्मित परिपूर्ण एक विधान की भी परम आवश्यकता है। सुन्दर विधान के बिना सुयोग्य शासक भी राज्य करने में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। यही प्रणाली आज भी भारतादि प्रत्येक देश के शासन में अपनाई हुई दृष्टि-गोचर होती है। जिस का कोई भी निषेध नहीं कर सकता।

वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है—

यह कहना भी अनुचित न होगा कि जिस प्रकार संसार में एक सूर्य ही ईश्वरीय प्रकाश है, इसके अतिरिक्त दीपक, लालटेन आदि समग्र प्रकाशक पदार्थ मनुष्यकृत हैं, या यों कहिये कि वे सूर्यरूपी ईश्वरीय-प्रकाश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की सहायता से ही प्रकाशित हैं। ठीक इसीप्रकार संसार में ईश्वरीय-ज्ञानरूप प्रकाश सम्बन्धी पुस्तक भी एक ही हो सकती है, अनेक नहीं। और वह है वेद। इसके अतिरिक्त शेष सब पुस्तकें मनुष्यकृत हैं और वेद सम्बन्धी ज्ञान की सहायता से ही अपने ज्ञान का प्रकाश कर सकती हैं। अतएव सब प्राचीन ऋषियों एवं आस्तिक विद्वानों ने सदा से सृष्टि के आदि में हीं वेद का प्रादुर्भाव माना, मध्य में नहीं। क्योंकि मध्य में पैदा हुई वस्तु में निश्चित मनुष्य-निर्मित होने की सम्भावना की जा सकती है। इसी अभिप्राय को मन में रखकर तथा अपौरुषेय पुस्तक की लोक में परम मान्यता समझकर अनेक सम्प्रदाय अपनी-अपनी धार्मिक-पुस्तकों को, या उनके बनाने वालों को सृष्टि के आदि में पैदा हुआ मानने का दुःसाहस करने लगे हैं। परन्तु उनके इस वाक्यप्रपंच में बुद्धिमान् पुरुष नहीं फँस सके और न फंसेंगे ही, क्योंकि वे जानते हैं कि सम्प्रदायवादी पुस्तकें और उनके बनाने वाले सब नवीनतम हैं और आधुनिक काल में पैदा हुए हैं।

सत्य का व्रत लें

व्रतेन दीक्षामाप्नोति, दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति, श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

यजु० १९-३०

व्रत (संकल्प) से दीक्षा (कर्तव्यनिष्ठा) को प्राप्त होता है। दीक्षा से दक्षिणा या दाक्षिण्य (चतुरता) को प्राप्त होता है। दक्षिणा (दाक्षिण्य) से श्रद्धा (आस्तिक्य बुद्धि) को प्राप्त करता है। श्रद्धा से सत्य (ब्रह्म) की प्राप्ति होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि में वैदिक वाङ्मय

डा० सूर्यदेव शर्मा, डी० लिट्०

अब यह तथ्य तो विश्व की प्राय: विद्वत्मण्डली द्वारा स्वीकार किया जा चुका है कि प्रोफेसर मैक्समूलर के शब्दों में " The Rigveda is the oldest book in the library of the world " अर्थात् संसार के पुस्तकालय में सबसे प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद ही है । हमें इस छोटे से लेख में देखना यह है कि हमारा वैदिक साहित्य केवल प्राचीनता की दृष्टि से ही नहीं, किन्तु अन्य दृष्टियों से भी पाश्चात्य विद्वानों को कहाँ तक प्रभावित कर सका है ? उन्होंने समय-समय पर इसके सम्बन्ध में क्या उद्गार व्यक्त किये हैं ?

यद्यपि इसाई प्रचारकों ने अपने प्रारम्भिक काल में भारत में आकर यूरोपीय विद्वानों को भ्रम में डालने के लिए एक 'Ezour Vedam' 'यजुर्वेदम्' को रचना फ्रेंच भाषा में कर डाली और वाल्टेयर आदि विद्वानों के सम्मुख वेद के नाम से प्रस्तुत की गई । लेकिन वैदिक साहित्य से यूरोप विद्वानों को सर्वप्रथम चमत्कृत और प्रभावित करने का कार्य तो फ्रांस के एक नवयुवक विद्वान Duperron (डूपरोन) ने किया जो सन् १७६० में भारत आया था और ८० से अधिक हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थ यहाँ से फ्रांस को ले गया था । उन ग्रन्थों में मुगल सम्राट् शाहजहाँ के पुत्र दाराशिकोह द्वारा कृत उपनिषदों का फारसी अनुवाद भी था । डूपरोन ने उसको Latin (लैटिन) भाषा में अनुवाद करके 'औपनिषत' (Oupnekchat) के नाम से प्रकाशित किया, जिसको जर्मनी प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् शोपनहावर ने पढ़ा और तब उसने यह उद्गार प्रकट किये :—"यह अनुपम ग्रन्थ आत्मा की गहराईयों तक को हिला डालता है । इसके प्रत्येक वाक्य में मौलिक, गम्भीर और अत्यन्त ज्योतिष्मान् विचार ऊपर उठते हैं । हमारे चारों ओर भारतीयता का वातावरण आप से आप ही खड़ा हो जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि मानो यह विचार हमारे अपने आत्मिक बन्धु के विचार हों । हमारे मनों पर यहूदी तथा इसाई संस्कारों की जो रूढ़ियां और अन्धविश्वास छाये हुए हैं वे इन विचारों से एक दम घुल जाते हैं । समस्त संसार में इसके जोड़ का इतना उदार कोई अन्य ग्रन्थ नहीं हो सकता । अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीवन में मुझे उपनिषदों से ही शान्ति मिली है और उन्हीं से मृत्यु के पश्चात् भी शान्ति प्राप्त होगी।

"They have been the solace of my life and they will be the solace after death."

यूरोप में संस्कृत भाषा के प्रचार से वैदिक साहित्य का मान अधिकाधिक वृद्धिगत होता गया। सन् १७८६ में विलियम जोन्स ने रायलएशियाटिक सोसाइटी के अधिवेशन में यह घोषणा की थी कि 'संस्कृत परम अद्भुत भाषा है। यह यूनानी (ग्रीक) से अधिक पूर्ण और लैटिन से अधिक सम्पन्न है।' इससे यूरोपीय विद्वानों में सस्कृत पढ़ने की इच्छा उत्पन्न हुई। सन्-१८०२ में एक अंग्रेज अलैक्जेन्डर हैमिल्टन भारत से संस्कृत सीखकर फ्रांस की राजधानी पेरिस में ठहरा था, जबकि अंग्रेजों का नैपोलियन बोनापार्ट से युद्ध आरम्भ हो गया और हैमिल्टन पेरिस में बन्दी बना लिया गया। उसने जेल में ही लोगों को संस्कृत पढ़ाना आरम्भ कर दिया। उससे चेजी ने सस्कृत पढ़ी, चेजी से श्लीगल और बर्नफ ने, और बर्नफ से जर्मन विद्वान् मैक्समूलर ने संस्कृत पढ़ी, जिसने अपने जीवन के अधिकांश वर्ष वैदिक साहित्य के अध्ययन में ही लगा दिये। उसी ने तुलनात्मक भाषा विज्ञान और तुलनात्मक धर्म के अध्ययन की परम्परा प्रचलित की। ऋग्वेद का प्रामाणिक संस्करण उसने इस श्लोक की भूमिका में देकर छपाया —

"शार्म्मण्यदेशजातेन श्री 'गोतीर्थं' निवासिना।
मोक्षमूलरभट्टेन ग्रन्थोऽयं संविशोधितः ॥

अर्थात् शर्मणी (जर्मनी) देश में उत्पन्न, गोतीर्थ (Oxford) में निवास करने वाले मोक्षमूलरभट्ट ने इस ग्रन्थ का संशोधन किया है।

इसी प्रकार वेदों की प्राचीनता के सम्बन्ध में रैवरेंड मौरिस फिलिप नामक पादरी अपने ग्रन्थ 'The teachings of the Vedas' में लिखा है- After the latest researches into the History and chromolgy of old testament, we may safely now call Rigveda as the oldest book, not only of the Aryan race but of the whole world.'

अर्थात् पुराने अहदनामे के इतिहास के अनुसंधान के बाद अब हम यह निश्चित रूप से कह सकते हैं कि ऋग्वेद केवल आर्य जाति का नहीं, समस्त संसार का सबसे प्राचीनतम ग्रन्थ है। प्रोफ़ेसर हीरेन (Heeren) ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी ऐतिहासिक अनुसंधानों (Historical researches) में यही भाव इस प्रकार व्यक्त किया है —

'The Vedas are without doubt the oldest books composed in Sanskrit, They stand alone in their solitary splendour, as become of Divine light for the on ward march of humanity'.

अर्थात् 'निस्संदेह संस्कृत में रचित वेद ही सबसे प्राचीन ग्रंथ है। मानवता की अग्रगामी प्रगति के लिए 'ईश्वरीय प्रकाश' के प्रदर्शक एकाकी चमत्कार के रूप में वेद ही हमारे सम्मुख उपस्थित है" कितने सुन्दर भाव हैं। इसी प्रकार फ्रांस के विद्वान् Leon Delbos ने घोषणा की —

"The Rigveda in the most sublime conception of the great high ways of humanity".

अर्थात् मानवता के सर्वोच्च श्रेष्ठ मार्गों का महान् उच्च विचार प्रदानकर्ता ऋग्वेद ही है। इसी प्रकार अमेरिका के प्रसिद्ध विद्वान् थोरी, नोबेल पुरस्कार विजेता मैटरलिंक, फ्रांस के डा० जेम्स कजिन्स, रूस के विद्वान् वोलिगार आदि अनेक विद्वानों ने वेदों के उच्च ज्ञान से प्रभावित होकर अपने बहुमूल्य उद्‌गार प्रकट किये हैं। प्रो० मास्करो ने तो 'Himalayas of the soul' नामक ग्रन्थ में वेदों, उपनिषदों को आत्मा के लिए हिमालयसदृश महान् एवं विशाल गौरवास्पद स्वीकार किया है। यही नहीं वैदिक साहित्य की बात तो अलग रही, नीत्से नामक विद्वान् ने तो मनुस्मृति तक पढ़ने के पश्चात् ही लिखा था-

"A work which is spiritual and superior beyond comparison, even to name in one breath with the Bible would be a sin'.

अर्थात् मनुस्मृति समस्त तुलनाओं से परे एक आध्यात्मिक उच्च स्तर का ग्रन्थ है जिसके नाम के साथ बाईबिल का नाम भी एक सांस में लेना पाप होगा। कहाँ तक गिनाया जाय, वेदों और वैदिक साहित्य के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों ने जो उद्‌गार प्रकट किये हैं, जिस श्रद्धा से वे वेदों का स्तवन करते हैं, वह वास्तव में अनुकरणीय है। यद्यपि कुछ विरोधी विचारधारा के दर्शन भी यत्र-तत्र होते हैं और वेदों के निर्माण काल के सम्बन्ध में तथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदों में इतिहास है या नहीं, इसमें भी उनका मतवैभिन्य मिलता है, फिर भी ऋषि दयानन्द द्वारा निर्मित आर्यसमाज के तीसरे नियम में कही गई इस बात से सभी सहमत हैं कि 'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना, सबका परम धर्म है'। अतः हम भी श्रद्धावनत हो वेदों का स्तवन करते हैं–

वेद भगवन् ! तुम हमारे पूर्वजों के प्राण हो ।
रूप में पुस्तक के हो पर तत्त्व में भगवान् हो ।।

चारों वर्ण तेजस्वी हों

रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु, रुच ँ राजसु नस्कृधि ।
रुचं विश्येषु, शूद्रेषु, मयि धेहि रुचां रुचम् ।।

यजु० १८-४८

अर्थ—हे परमात्मन् ! हमारे ब्राह्मणों में तेजस्विता दो। हमारे क्षत्रियों में तेजस्विता दो। हमारे वैश्यों और शूद्रों में तेजस्विता दो। मुझे अखण्ड तेजस्विता से युक्त करो।

Eng. Tr.—O God ! vouchsafe glory on the Brahmanas, the Kshatriyas, the Vaishyas and the Shudras. May you bestow unfailing brilliance on me.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेद में मानव-शरीर का वर्णन

—श्री पं० रामनाथ वेदालंकार

सचमुच मानव–शरीर की रचना और क्रियाशक्ति बड़ी अद्भुत है। इसलिए अथर्ववेद का कवि इसके एक–एक अंग पर मुग्ध होता हुआ 'केन सूक्त' में कहता है, अहो, किस विलक्षण कारीगर ने इस मानवशरीर में एड़ियां बनाई हैं। किसने मांस भरा है, किसने टखने बनाये हैं। किसने पोरुओं वाली अंगुलियां बनाई है। किसने इसमें प्राण–अपान का ताना–बाना किया है। किस देव ने इसमें समान को निहित किया है। किसने इसे बल प्रदान किया है। किसने इसे वेग दिया है, किसने इसमें रेतस् भरा है, जिससे यह प्रजातन्तु का विस्तार करता है। किसने बुद्धि पैदा की है, किसने इसे वाणी और नृत्यकला दी है।

मानव–शरीर की अद्भुत कृति पर ऐसे उद्गार सहसा प्रत्येक के मुख से निकल पडते हैं। मनुष्य व्यक्त वाणी द्वारा अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट कर सकता है। मन से चिन्तन कर सकता है, बुद्धि से बड़ी–बड़ी समस्याओं को सुलझा सकता है। ये सब बातें अन्य शरीरों की अपेक्षा मानव-शरीर में विलक्षण हैं, जिसके कारण उसे श्रेष्ठता का पद मिला है।

यह देवपुरी है —

इस मानव-शरीर को देवों की पुरी कहा गया है। ब्रह्माण्ड के सब देव इस शरीर के अन्दर प्रविष्ट होकर अपना-अपना स्थान बनाकर बैठे हुए हैं (अथर्व वेद–११,८ के अनुसार, शरीर की हड्डियों को समिधाएं बनाकर, रस, रक्त आदि को जल बनाकर, रेतस को घृत बनाकर सब देव पुरुष शरीर में प्रविष्ट हुए हैं और यज्ञ रच रहे हैं) इस शरीर में सब जल, सब देवता समस्त विराट् जगत् प्रविष्ट है। प्रजापति ब्रह्मा भी इसके अन्दर है। सूर्य चक्षु रूप में शरीर में विद्यमान है। वायु प्राण रूप में, शरीर के अन्य अग अग्नि को मिले हैं। जो विद्वान् है, वह इस मानव–शरीर को साक्षात देवपुरी या ब्रह्मापुरी समझता है, क्योंकि जैसे गौएं गोशाला में रहती हैं वैसे ही सब देव शरीर में आकर बसे हुए हैं ऐतरेय उपनिषद् के अनुसार 'अग्नि वाणी बनकर मुख में प्रविष्ट है, वायु प्राण बनकर नासिका में प्रविष्ट है, आदित्य

१— अथर्व १०, २, १, १७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चक्षु बनकर आंखों में प्रविष्ट है, दिशाएं स्रोत बनकर कानों में प्रविष्ट हैं, औषधि-वनस्पतियाँ लोम बनकर त्वचा में प्रविष्ट है। मन चन्द्रमा बनकर हृदय में प्रविष्ट है, मृत्यु अपान बनकर नाभि में प्रविष्ट है, जल रेतस् बनकर शिश्न में प्रविष्ट है।''

अथर्ववेद-१०,२,३१,३३ के अनुसार मानव-शरीर देवपुरी अयोध्या है जिसमें आठ चक्र, नौ द्वार हैं। इस पुरी के अन्दर एक ज्योति से आवृत हिरण्मय कोश है, जिसका नाम स्वर्ग है। उस हिरण्मय कोश के अन्दर एक यज्ञ वास करता है, जिसे वे जानते हैं; जो ब्रह्मवित् है, इस प्रभ्राजमाना, हृदयहारिणी, यशोमयी, अपराजिता, स्वर्णिम देवपुरी में ब्रह्मा का वास है।

इस प्रकार मानव-शरीर के सम्बन्ध में वैदिक दृष्टिकोण यह है कि यह एक देवपुरी है। आंख, कान, नाक आदि सब अवयव एक-एक देवता के प्रतिनिधि हैं. वैदिक विचार के अनुसार यह शरीर मल-मूत्र का चोला, या त्यागने योग्य वस्तु नहीं है। मानव आत्मा को अपना सौभाग्य समझना चाहिए कि देवताओं की यह पुरी उसे रहने के लिए मिली है।

यह यज्ञस्थली है—

इस शरीर के सम्बन्ध में वैदिक साहित्य में यह विचार भी मिलता है कि यह एक यज्ञस्थली है। इस शरीर में हमें विषय-भोग का ही साधन न समझकर एक पवित्र यज्ञगृह समझना चाहिए। अथर्ववेद-१०,२,१४ "किस एक देव ने पुरुष-शरीर के अन्दर यज्ञ को निहित किया है।" यह कहता हुआ मानव शरीर की यज्ञमयता को बताता हुआ कहता है। अथर्ववेद-११, ८, २९ जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, शरीर की यज्ञमयता को बताता हुआ कहता है कि शरीर में हड्डियां ही समिधायें हैं, रुधिर, वस्ति आदि ये आठ प्रकार के जल ही यज्ञिय जल हैं और रेतस् ही घृत है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी हड्डियों को समिधा, रेतस् को घृत कहा गया है। यजुर्वेद ३४, ४ में मन की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है कि इस मन के द्वारा ही सप्तहोता यज्ञ चलता है। यह सप्तहोता यज्ञ पांच ज्ञानेन्द्रियां, मन और बुद्धि इन सात होताओं से परिचालित होने वाला ज्ञानप्राप्ति रूपी यज्ञ ही है जो कि शरीर रूपी यज्ञशाला में होता है। गोपथ ब्राह्मण में शारीरिक यज्ञ की व्याख्या इस प्रकार की गई है, पुरुष का शरीर यज्ञभूमि है, मन ही इस शरीर का ब्रह्मा है, प्राण उद्गाता है, अपान प्रस्तोता है, व्यान प्रतिहर्ता है, वाणी होता और आँख अध्वर्यु है, प्रजापति सदस्य है, अन्य अंग होत्राशंसी हैं, आत्मा यजमान है। छान्दोग्य उपनिषद् के एक प्रकरण में मानव शरीर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के यज्ञ का वर्णन इस रूप में मिलता है—पुरुष शरीर एक यज्ञ है, जिसकी आयु के प्रथम चौबीस वर्ष प्रातः सवन है, अगले चौवालीस वर्ष माध्यन्दिन सवन है—उससे आगे के अड़तालीस वर्ष तृतीय सवन है—इस प्रकार यह एक सौ सोलह वर्ष चलने वाला यज्ञ है, इस भावना से जो अपने शरीर को चलाता है वह एक सौ सोलह वर्ष जीवित रह सकता है।

यह ऋषिभूमि है –

यह शरीर ऋषियों की भूमि भी है, यजुर्वेद ३४, ५५ में कहा है कि शरीर में सात ऋषि बैठे हुए हैं, वे सातों बिना प्रमाद किये इस शरीर को रक्षा कर रहे हैं। जब यह शरीर सोता है, तब वे सातों ऋषि आत्मलोक में चले जाते हैं, पर दो देव ऐसे हैं जो उस समय भी शरीर में जागते रहते हैं। निरुक्त की व्याख्या के अनुसार पाँच ज्ञानेन्द्रियां, छठा मन और सातवीं बुद्धि ही शरीर के सात ऋषि हैं। यह सदैव शरीर की रक्षा में तत्पर रहते हैं। यदि शरीर में से ये ऋषि निकल जाये और मनुष्य आँख से न देख सके, नासिका से गन्ध ग्रहण न कर सके, कान से न सुन सके, जिह्वा से स्वाद का ज्ञान और त्वचा से स्पर्श का ज्ञान न कर सकें, मन से चिन्तन और बुद्धि से विवेचन न कर सकें तो कोई आकर उसकी हिंसा कर सकता है। आँख आदि के अभाव में उसे ज्ञान तक न होगा कि कोई उसकी हिंसा करने आया है। जब यह शरीर सोता है तब आँख आदि ऋषि स्थूल रूप में अपना कार्य बन्द कर देते हैं। उस समय वे आत्मलोक में चले जाते हैं। किन्तु उस समय भी आत्मा और प्राण यह दो देव शरीर में जागते रहते हैं, क्योंकि यह भी कहीं चले जायं तो शरीर मृत ही हो जाये।

अथर्व० १०, ८, ९ में शरीर के विषय में यह वर्णन मिलता है कि 'यह एक चमस चम्मच या पात्र है, जिसका बिल नीचे की ओर और पृष्ठ ऊपर की ओर है, तो भी इसमें सब प्रकार यश निहित है। इस चमस में सात ऋषि भी बैठे हुए हैं जो इसकी रक्षा कर रहे हैं। यह चमस शरीर का, मूर्धा गर्दन से ऊपर का हिस्सा ही है। साधारण चमसों में पृष्ठ नीचे और छिद्र ऊपर रहता है। नहीं तो उनमें रखी वस्तु गिर जाये, पर यह ऐसा अद्भुत चमस है कि इसका छिद्र मुख नीचे की ओर है और पृष्ठ खोपड़ी ऊपर है तो भी उसमें विश्व रूप यश सर्वविध ज्ञान भरा हुआ है, गिरता नहीं। सात ऋषि पूर्वोक्त सात इन्द्रिय रूपी ऋषि है। जो इसमें बैठे हुए इसकी रक्षा कर रहे हैं। यह सात ऋषि दो कान, दो नासिका छिद्र, दो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आँखें और एक मुंह यह भी हो सकते हैं। जैसा कि अथर्ववेद-१०, २, ६ में परिगणित किये गये हैं। शतपथ ब्राह्मण-१४, ४, २ में भी इस चमस में रहने वाले यही ऋषि बतलाये गये हैं। और यह कहा गया है कि दो कान गौतम और भारद्वाज हैं। दो नासिकाएं वशिष्ठ और कश्यप हैं, दो आंखे विश्वामित्र और जमदग्नि है, मुंह अत्रि है।

अतः इस वैदिक विचार के अनुसार हमें शरीर के प्रति यह भाव रखनी है, कि यह ऋषियों की पवित्र तपोभूमि है और इसे किसी प्रकार दूषित नहीं होने देना चाहिए।

★★

समाज का नेता एक हो

अहं गृभ्णामि मनसा मनांसि,
मम चित्तमनु चित्तेभिरेत।
मम वशेषु हृदयानि वः कृणोमि,
मम यातमनुवर्त्मन एत॥

अथर्व० ३-८-६;

अर्थ—मैं अपने मन से तुम्हारे मन को ग्रहण करता हूँ, अनुकूल बनाता हूँ। मेरे चित्त के अनुकूल अपने चित्त बनाकर मेरा अनुसरण करो। मैं तुम्हारे हृदयों को अपने वश में करता हूँ। मेरे व्यवहार का अनुसरण करते हुए तुम मेरे साथ आओ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदों की प्रासंगिकता

—डॉ० कर्ण सिंह
संस्कृत विभागाध्यक्ष, मेरठ कालेज, मेरठ

भारतीय बने रहने के लिए भारतीयों, विशेषत: वैदिक धर्मावलम्बियों के लिए वेदों से परिचित होना नितान्त अनिवार्य है। भारतीय व्यक्ति के लिए जन्म के भी पूर्व से लेकर मृत्युपर्यन्त होने वाले सोलह संस्कारों का अत्यधिक महत्त्व है। और इन सस्कारों का सम्पादन वेदों के मन्त्रों के बिना सम्भव नहीं है। हमारी दैनिक प्राथना, हमारे देवी-देवता, हमारीउपा सना, हमारे अनुष्ठान, हमारे पर्व, हमारे यज्ञ, हमारी मान्यताएं तथा परम्पराएँ-सभी वेदों से प्रभावित हैं। परम धार्मिक श्री लोकमान्य तिलक ने तो हिन्दू धर्म का लक्षण ही "प्रामाण्यबुद्धिर्वेदेषु" किया है। अर्थात् हिन्दू वही है जो वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार करता है। वस्तुतः, प्रामाणिकता ही नहीं व्यावहारिकता के लिए भी वेदों का ज्ञान हम भारतीयों के लिए अत्यधिक आवश्यक है। हमारी प्रत्येक धारणा एवं विचारणा का मूलस्रोत वेद ही हैं। अतः संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि वेद हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति एवं हिन्दू सभ्यता के मूल आधार हैं।

विभिन्न दृष्टिकोणों से देखने पर वेदों के जिस महत्त्व से हमारा साक्षात्कार होता है, उसे हम क्रमशः इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं—

(क) धार्मिक दृष्टि से वेदों का महत्त्व—

धर्म की दृष्टि से वेदों के महत्त्व को जानने के लिए इतना ही पर्याप्त है कि प्रमुख धर्मशास्त्रकार महाराज 'मनु' ने अपने ग्रन्थ में वेद को सभी धर्मों के मूल रूप में स्वीकार किया है—"**वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।**"

(मनुस्मृति २/६)

इसकी व्याख्या में कहा जाता है कि आरम्भ से लेकर आज तक धर्म की दृष्टि से वैदिक धर्मावलम्बियों का जितना भी क्रिया-कलाप है, उस सबका मूल वेद ही हैं। कोई भी देवता, कोई भी पद्धति, कोई भी सम्प्रदाय, कोई भी मान्यता ऐसी नहीं है, जिसे हिन्दू और सम्बन्धित धर्मों में स्वीकार किया गया हो और उसका सम्बन्ध वेदों से न हो। प्रत्येक हिन्दू धर्मावलम्बी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिए वेदों की प्रामाणिकता सर्वोपरि है— **'प्रामाण्यबुद्धिर्वेदेषु'**। यहाँ तक कि ईश्वर की अपेक्षा भी हम वेद को अधिक महत्त्व देते हैं।

हिन्दू धर्म में यज्ञ को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है, कोई भी नित्य और नैमित्तिक क्रिया ऐसी नहीं है जिसका सम्पादन यज्ञ के बिना किया जाता हो। इस यज्ञ के महत्त्व का कारण भी वेद ही हैं। वेदों में आये मन्त्रों के द्वारा ही धार्मिक अवसरों पर देवताओं का आह्वान होता है तथा इन्हीं मन्त्रों के द्वारा देवताओं को आहुति दी जाती है।

अतः हमारे धर्म में यज्ञ के महत्त्व से भी यह सर्वथा प्रतिपादित हो जाता है कि हमारे जीवन में धार्मिक दृष्टि से वेदों का सर्वाधिक महत्त्व है।

(ख) ज्ञान की दृष्टि से वेदों का महत्त्व —

'विद्' ज्ञाने धातु से निष्पन्न 'वेद' शब्द का अर्थ ही ज्ञान है। इस पर भी मनु **'सर्वज्ञानमयो हि सः'** (मनुस्मृति २/७) कह कर वेद को सभी प्रकार के ज्ञान से युक्त घोषित किया है। तात्पर्य यही है कि हमारे जीवन का ऐसा कोई भी पक्ष नहीं है, जिसका दर्शन हमें वेद में न होता हो। तीनों लोक, चारों वर्ण, चारों आश्रम. यहां तक कि भूत, भवत् (वर्तमान) और भविष्य सभी का ज्ञान वेदों के द्वारा सम्भव है —

"चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाश्चत्वारश्चाश्रमाः पृथक्।
भूतं भव्यं भविष्यं च सर्वं वेदात् प्रसिध्यति ॥"

(मनु० २/९७)

वेद की इस सर्वज्ञानमयता एवं सर्वप्रकाशकता के कारण ही भारतीयों की यह मान्यता है कि हम सभी शिक्षित लोगों के लिए वेद का अध्ययन करना परम आवश्यक है —

"योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥"

तथा (मनु २/१७८)

"वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते।" (मनु० २/१६६)

इस प्रकार भारतीय जीवन में ज्ञान की दृष्टि से वेदों का परम महत्त्व है।

(ग) साहित्यिक दृष्टि से वेदों का महत्त्व—

सरस साहित्य की दृष्टि से भी वेदों का महत्त्व किसी प्रकार कम नहीं है। **'कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूः'** आदि वेद-वाक्यों में वैदिक ऋषियों को कवि ही माना गया है और समग्र संसार को देव का काव्य कहा गया है—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"पश्य देवस्य काव्यम्"। वस्तुतः वेदों के मन्त्रद्रष्टा ऋषि, इस मानव-सृष्टि के सबसे पहले कवि थे। वेदों मे स्थल-स्थल पर काव्यात्मक अभिव्यक्तियां मिलती हैं। ऋग्वेद का उषः सूक्त तो इसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण ही माना जाता है। इसके अतिरिक्त भी इन्द्र, अग्नि, वरुण और वाक् सूक्तों में काव्यात्मकता का पूर्ण निदर्शन उपलब्ध होता है। ऋग्वेद के सृष्टि-सूक्त से वैदिक कवि की कल्पना का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। इसके साथ ही अधिकांश वैदिक देवता, प्राकृतिक शक्तियों के मानवीकृत रूप हैं, जिन्हें वेद के कवियों के द्वारा ही यह स्वरूप प्रदान किया गया है। वेद के कवियों द्वारा प्रयुक्त अलङ्कार एवं छन्द भी अत्यन्त उत्कृष्ट हैं। उपमा अलङ्कार यहाँ अपने सर्वोत्कृष्ट एवं मार्मिक रूप में देखा जा सकता है। वैदिक छन्दों का स्वरूप बहुत ही व्यवस्थित हैं। अधिकांश रचनाएं छन्दोबद्ध हैं। छन्दों में गायत्री, त्रिष्टुप् और जगती आदि छन्द बहुत प्रमुख हैं। वैदिक अनुष्टुप् छन्द ही आगे के लौकिक संस्कृत काव्यों में भी प्रमुख रूप से प्रयुक्त हुआ है। इसी प्रकार वैदिक काव्य की अनेक अन्य विशेषताएं भी बाद के सस्कृत काव्यों में उसी रूप में दृष्टिगोचर होती हैं।

संक्षेप में वेद भारतीय काव्य-उपवन के प्रथम पुष्प हैं और उनकी सुरभि से बाद का सारा ही काव्य सुवासित हुआ सा प्रतीत होता है।

(घ) भारतीय दर्शन की दृष्टि में वेदों का महत्त्व —

भारतीय दर्शन का मूल उत्स वेद हैं। इसी मूल उत्स से भारतीय दर्शन की विभिन्न धाराएं फूटी हैं। आस्तिक दर्शन तो वेदों के मन्त्रों को हो आधार बनाकर विकसित हुए हैं। किन्तु, नास्तिक दर्शन भी वेदों को विचारधारा की प्रतिक्रिया स्वरूप ही प्रादुर्भूत हुए हैं। भारत का सम्पूर्ण प्राचीन दर्शन, गौतमबुद्ध के पूर्व हो प्रकाश में आ चुका था, उसी को आधार बनाकर उसकी प्रतिक्रिया बौद्ध दर्शन में सामने आयी है। जैन धर्म का विकास भी इसी प्रकार हुआ है। अतः हम कह सकते हैं कि "श्रुतियों की सहायता से ही भारतीय दर्शनों के विविध विकास को हम भली-भांति समझ सकते हैं। उपनिषदों में समग्र आस्तिक तथा नास्तिक दर्शन के तत्त्वों की बीजरूपेण उपलब्धि होती है" — बलदेव उपाध्याय।

संक्षेप में, सांख्य, न्याय, मीमांसा, वैशेषिक और वेदान्त आदि भारतीय वैदिक दर्शनों का तथा बौद्ध, जैन, चार्वाक आदि सभी अवैदिक दर्शनों का आधार वेद और वैदिक साहित्य ही है। इन दर्शनों के अन्यान्य भेदोपभेद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी वैदिक साहित्य को ही आधार बनाकर विकसित हुए हैं। इस प्रकार भारतीय दर्शन के आविर्भाव एवं विकास को जानने के लिए वेद ही एक मात्र महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं।

(ङ) सांस्कृतिक दृष्टि से वेदों का महत्त्व—

यदि हम अपने पूर्वज आर्यों की संस्कृति और सभ्यता को जानना चाहते हैं, तो उसका एकमात्र साधन वेद ही हैं। हमारे प्राचीन ऋषियों और मुनियों के क्या विचार थे ? जगत् को वे किस दृष्टि से देखते थे ? हमारे पूर्वजों का जीवन किस प्रकार व्यतीत होता था ? उनका खान-पान, रहन-सहन, आचरण और व्यवहार कैसा था ? समाज का संगठन कैसा था ? प्रमुख संस्थाएं कौन-सी थीं ? हमारे पूर्वज किस प्रकार की स्तुतियां और प्रार्थनाएं किया करते थे ? किस प्रकार वे उषःकाल में उषा के प्राकृतिक सौन्दर्य से आत्मविभोर होकर उसे 'पुराणी युवती' की संज्ञा से विभूषित करते थे ? कैसे प्रातः काल होते ही यज्ञादि-संपादन के लिए पठित मन्त्रों से आकाश गूंज उठता था ? किस प्रकार भाव-विभोर होकर अग्नि, इन्द्र, वरुण, मित्र, सविता, उषा आदि देवताओं की स्तुतियों से उनका आँगन भर जाता था ? इन सब विषयों के ज्ञान के लिए वेदों का अध्ययन ही एक मात्र साधन है।

प्राचीन आर्यों का गृहस्थ जीवन कैसा था ? उनके मनोरञ्जन के साधन क्या थे ? उनकी सुख-दुःख की अनुभूतियां कौन-सी थीं ? उनका अध्ययन-अध्यापन कैसे चलता था ? यह सब वेदों के द्वारा ही ज्ञात होता है।

वेद केवल भारतीयों के ही आदिम ग्रन्थ नहीं है। अपितु मानव जाति के आदिम ग्रन्थ भी वेद ही हैं। अभी तक इनसे प्राचीन अन्य किसी भी लिखित रचना का पता नहीं चला है। अतः केवल प्राचीन आर्यों की ही संस्कृति नहीं, अपितु मानव मात्र की प्राचीन संस्कृति को जानने का एकमात्र सर्वप्राचीन एवं उपलब्ध और सर्वसम्मत साधन भी वेद ही हैं। श्री बलदेव उपाध्याय ने इसीलिए कहा है कि 'ये (वेद) आर्यों के ही नहीं, प्रत्युत मानव जाति के सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं।

अतः अतीत काल में मानवों के व्यवहार तथा विचार का पता इन अमूल्य ग्रन्थरत्नों की पर्यालोचना से भली-भाँति लग सकता है।

(च) भाषा विज्ञान की दृष्टि से वेदों का महत्त्व –

भाषा विज्ञान की दृष्टि से भी वेदों का बहुत महत्त्व है। वेदों में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेष रूप से ऋग्वेद के प्राचीन सूक्तों में प्रयुक्त वैदिक भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है।

आधुनिक भाषाविज्ञान विषय का प्रारम्भ १८ वीं शताब्दी में, भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन के रूप में हुआ था। तब कुछ योरोपीय विद्वानों का ध्यान संस्कृत भाषा की ओर गया तथा उन्होंने संस्कृत की तुलना अपनी प्राचीन भाषाओं ग्रीक, लैटिन आदि से की। इस तुलना से वे उस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इन सभी भारोपीय भाषाओं का विकास किसी एक ही मूल भाषा से हुआ है, जिसे उन्होंने 'मूल भारोपीय' भाषा का नाम दिया। मूल भारोपीय भाषा के स्वरूप को निर्धारित करने में वैदिक (प्राचीन संस्कृत) भाषा से इन्हें सबसे अधिक सहायता मिली। इसका कारण यह है कि वेदों में भाषा का प्राचीनतम रूप सुरक्षित रखा गया है।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि वेद में प्रयुक्त भाषा के अध्ययन से एक ओर तो यह सिद्ध हो गया कि यही भाषा सर्वप्राचीन सुरक्षित भाषा है, दूसरे यूरोप की उपलब्ध अन्य लैटिन, ग्रीक आदि भाषाओं से वैदिक भाषा की तुलना करने पर एक नवीन ही विज्ञान का श्रीगणेश हो गया। इसी को आगे चलकर तुलनात्मक भाषाविज्ञान अथवा भाषा विज्ञान का नाम दिया गया।

इस प्रकार, भाषाविज्ञान की दृष्टि से भी वेदों का महत्त्व असंदिग्ध रूप में स्वीकार किया जाता है।

संगठन का आधार ईश्वर है

संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इडस्पदे समिध्यसे, स नो वसून्या भर ॥

ऋग्० १०–१९१–१;

अर्थ—हे सुखों के वर्षक अग्निरूप परमात्मन! तुम संसार के स्वामी हो। तुम सारे जीवों को अच्छे ढंग से मिलाते हो, तुम वैश्वानर रूप सारे जीवों में व्याप्त होकर उन्हें मिलाते हो। तुम यज्ञवेदी में (हृदय) प्रदीप्त किए जाते हो। तुम हमें धन दो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महर्षि दयानन्द की वेदार्थ दृष्टि

—डॉ० विष्णुदत्त 'राकेश' डी. लिट्.
अध्यक्ष-हिन्दीविभाग,
गुरुकुल कांगड़ी बिश्वविद्यालय (हरिद्वार)

वेद मन्त्रों की एकाधिक व्याख्या की प्रवृत्ति ने विभिन्न व्याख्या-प्रणालियों को जन्म दिया। ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रायः अधिदैवत तथा अध्यात्म के संदर्भ में ही व्याख्याओं का प्रयत्न हुआ है। यास्कीय निरुक्त भी उक्त दो दृष्टियों का ही विशेष रूप से पोषग करता है। यों आर्ष, वैयाकरण, याज्ञिक, नैरुक्त, अधिभूत (इतर), आत्मप्रवाद तथा अधिलोक परक अर्थ–प्रणालियों का प्रचलन भी उनके समय रहा है और 'चत्वारि वाक् परिमिता' जैसी ऋचाओं की व्याख्या उन्होंने इन्हीं के आधार पर की है। दुर्गाचार्य मंत्रों का तात्पर्य अध्यात्म, अधिदेव तथा अधियज्ञ परक ही मानते थे। स्कन्द महेश्वर ने 'सर्वदर्शनेषु च सर्वे मन्त्रा योजनीयाः' कहकर मन्त्रों का व्याख्या क्षेत्र और भी विस्तीर्ण कर दिया है। तात्पर्य यह है कि वेदमन्त्रों को अखिल विधाओं का द्योतक मानते हुए उनकी बहुविध व्याख्याए प्राचीन काल से ही होती चली आ रही हैं। यास्कीय निरुक्त में अधिदवत, अध्यात्म, आर्ष, परिव्राजक, अधियज्ञ, नैरुक्त, वैयाकरण, नदान, ऐतिहासिक तथा आख्यान मूलक प्रणालियों के उदाहरण दिए गए हैं। परिव्राजक परक व्याख्या क कई प्रसग पुराणों में भी मिल जाते है। दार्शनिक तथा अध्यात्म परक अर्थों म ही निर्वेदमूलक व्याख्याओं का समाहार विद्वानों ने माना है। इतिहास तथा आख्यान के अतिरिक्त समाज तथा राष्ट्रोपयोगी अथ अधिभूत प्रक्रिया के ही अग हैं। अतः यज्ञ, देवता, अध्यात्म तथा समाजोपयोगी संदर्भों में ही वेदमन्त्रो की व्याख्याए प्रायः महत्त्वपूर्ण हो सकीं। महर्षि दयानन्द ने वेदार्थ की अधिभूत प्रक्रिया को सर्वथा सामाजिक वैज्ञानिक रूप देकर वेदार्थ के क्षेत्र में युगान्तकारी परिवर्तन किया। उनसे पूर्व सायण ने प्रायः याज्ञिक प्रक्रिया को ध्यान में रखकर ही भाष्य किया तथापि अधिदैवत, अध्यात्म, अधिभूत तथा अधिराष्ट्र परक व्याख्याएं भी उनके भाष्य में मिल जाती हैं। इसका तात्पर्य यही है कि वह वेदमन्त्रों के अर्थ के लिए व्यापक प्रणालियों के पक्षधर थे। सर्वजनोपयोगी भाष्य की अपेक्षा करते थे, पर वैज्ञानिक अनुसंधान तथा बहुशास्त्रीय अनुशीलन के अभाव में वह इस कार्य को पूरा न कर सके।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाष्य के लिए पारम्परिक दृष्टि का आग्रह भी उनके सर्वव्यापी निर्णय आकलन में बाधक रहा। उनमें इतर अर्थ करने की उत्सुकता थी और इसका प्रमाण यह ऋचा है जिसमें सैनिक को केन्द्र बनाकर उन्होंने युद्ध परक आख्यान किया है।

वज्रं कृणुध्वं स हि वो नृपाणो वर्मा सीव्यध्वं बहुलापृथूनि,
पुरः कृणुध्वमायसीरधृष्टा मा व सुस्रोच्चमसो दृहंता तम्।

पहले इसकी व्याख्या में अध्यात्म, फिर यज्ञ तथा तदुपरान्त योद्धृ व्यवस्था की गई है। यहां युद्ध परक अर्थ पूर्व परम्परा से हटकर अधिराष्ट्रीय व्यवस्था के अन्तर्गत किया गया है। अर्थात् हे युद्धकर्त्ता वीरों, तुम सेनाओं का संगठन कर युद्ध में प्रवृत्त हो जाओ। यह युद्ध शत्रुओं के प्राणों को पी जाने वाला है। कवच सियो ताकि शत्रु के शस्त्र तुम्हें भेद न सकें। शत्रुओं की बाधाओं को दूर करने के लिए तथा अपनी रक्षा के लिए लोहे के नगरों का निर्माण करो। तुम्हारा यज्ञरूपी चमस दृढ़ हो।

ऋग्वेद के दशम मण्डल के भाष्य में विविध व्याख्याएं अधिक हैं। इनमें भी उनका रुझान याज्ञिक, अधिदैवत तथा आध्यात्मिक व्याख्याओं की ओर अधिक है। इसी मण्डल के १५९वें छह ऋचाओं के सूक्त की व्याख्या वह शाची (इन्द्र की पत्नी) की उक्तियां मान करते हैं। जबकि इन मंत्रों में कोई भी गृह पत्नी अपनी और अपने कुटुम्ब के लोगों की वीर भावना की झलक देख सकती है।

ऐतिहासिक पक्ष के समर्थक सायण को मन्त्रार्थ के लिए आदर्श मानते हैं। भारतीय तथा यूरोपीय विद्वान् इतिहास प्रसिद्ध नामों तथा घटनाओं की खोज वेद में करते रहे हैं। यह प्रवृत्ति अद्यतन दिखाई पड़ती है। राम, कृष्ण, अर्जुन, भीम आदि के आख्यान भी वेदमन्त्रों में खोजे जा रहे हैं। इस प्रवृत्ति से वेद के अपौरुषेय माने जाने में कठिनाई आती है। सायण स्वयं भी ऐतिहासिक पक्ष के प्रति आश्वस्त नहीं थे। यही कारण है कि ऐसे प्रसंगों में वह निरुक्त परक अर्थ भी साथ-साथ देते हैं। उदाहरण के लिए यह ऋचा लीजिए—

दनो विष इन्द्र मृध्रवाचः सप्त यत् पुरः शर्म शारदीर्दत्।
ऋणोरपो अनवद्यार्णा यूने वृत्रं पुरुकुत्साय रन्धीः ॥
—ऋक् १।१७४।२

इसका अर्थ करते हुए ऐतिहासिक पक्ष में वृत्रं और पुरुकुत्स का उल्लेख किया है किन्तु यहीं पर 'वृत्रं मुख्यं मेघं रन्धीः असाध्यः अहनः' कहकर वृत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का मेघ परक अर्थ किया है। अनिश्चय की स्थिति में भी सायण राजाओं, ऋषियों, नगरों, नदियों आदि व्यक्तिवाचक नामों को वेद में स्वीकार करते हैं। स्वामी दयानन्द ने इस दृष्टि को भ्रम पूर्ण बताकर इसका निषेध किया— ' यद्वा हे योध्दारः वज्रं संघातात्मकं ग्रामं कुरुत । स खलु युष्मदीयः संग्रामो नृपाणः नरो योद्धारः पिबन्ति प्रत्यार्थिनां प्राणान् इति नृपाणः, वर्म कवचानि देहावरणानि सीव्यध्वम् । यथा परकीयशस्त्रैः शरीरभेदो न भवति तथा संनह्यध्वम् । आयसीः अयोनिर्मिताः पुरः नगराणि कृणुध्वं शत्रुबाधापरिहारार्थं स्वरक्षार्थं च । एतादृशो वः युष्माकं चमसः अदनसाधनभूतः संग्रामो मा सुस्रोत् मा उपगच्छतु तं दृहंतेति मन्त्रद्रष्टा ऋषिर्ब्रूते । '

'अतो नात्र भागे इतिहासलेशोऽप्यस्तीत्यवगन्तव्यम् । अतो यच्च सायणाचार्यादिभिर्वेदप्रकाशादिषु यत्र कुत्रेतिहासवर्णन कृत तद् भ्रममूलमस्तीति मन्तव्यम् ।'

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के ३१ वें सूक्त के ग्यारवें मन्त्र में आए 'नहुष' शब्द का अर्थ सायण ने 'नहुषस्य एतन्नामक राजा विशेषस्य' किया है। इसी प्रकार सत्रहवें मन्त्र में आये ययातिवत् का अर्थ ययाति राजा के समान किया है। यदि ऋग्वेद में नहुष तथा ययाति का आख्यान स्वीकार कर लें तो पुरुरवा के पुत्र आयु, आयु के पुत्र नहुष तथा नहुष के पुत्र ययाति के उल्लेख से ऋग्वेद अत्यन्त परवर्ती हो जायेगा। पुराणों में चन्द्रवंशी राजाओं के वंश प्रसंग में इनका उल्लेख हुआ है।[1] स्वामी जी ने वेदों को नित्य मानते हुए 'वेदानां सनातनत्वात् तस्य गाथाऽत्र न संभवति'। कहकर इस पक्ष का खण्डन किया तथा नहुष का अर्थ निघण्टु से मनुष्य तथा ययाति का अर्थ प्रयत्नवान् पुरुष किया है। कण्व, अदिति, अत्रि, भारद्वाज, वसिष्ठ तथा जमदग्नि आदि का अर्थ भी स्वामी जी ने सायण से भिन्न किया है। यास्क ने निरुक्ति पूर्वक सायण से भिन्न अर्थ किया है।

यद्यपि सायण यहां भी एकाधिक अर्थ करते हैं जैसे भारद्वाजाय संभृियमाण हविर्लक्षिणान्नाय यजमानाय, अथवा 'प्राणो वै 'भरद्वाजवदिति' तथापि प्राण, अन्न और यजमान अर्थ करके भी संशयवश भरद्वाज का अथ ऋषि

१—यः पुरुरवसः पुत्र आयुस्तस्याभवन् सुताः ।
नहुषः क्षत्रवृद्धश्च रजीरम्भश्च वीर्यवान् ॥ –श्रीमद्भागवत ९.१७.१.
यतिर्ययाति संयाति रायानिर्वियतिः कृतिः ।
षडिमे नहुषस्यासन्निन्द्रियाणीव देहिनः ॥ –भागवत् ९.१८.१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया है। ऋषि दयानन्द ने ऐसे अवसरों पर ब्राह्मण ग्रन्थों का सहारा लेकर यौगिक अर्थ किया है। स्वामी जी की अर्थ दृष्टि ब्राह्मण ग्रन्थकारों तथा यास्क से अनुप्राणित है, अतः ग्राह्य है। तैत्तिरोय आरण्यक जब 'मनो वै भारद्वाज ऋषिः अन्नं वाजो यो वै मनोविभर्ति सोऽन्न वाजं भरति, तस्मात् मनो भारद्वाज ऋषिः' कहता पाठक जब 'अग्निर्वै ब्राह्मणः' तथा शतपथ जब 'इन्द्रो वै यजमानः' 'क्षत्रं वै यमो विशः पितरः' तथा 'अग्निर्वै रुद्रः', चक्षुर्वै जमदग्निः' कहकर ऐतिहासिक पक्ष का निषेध करते हैं तब हठ पूर्वक कल्पित अर्थ क्यों किए जांय। इन पदों को लेकर कल्पित आख्यायिकाओं की सृष्टि पुराण ग्रन्थों में हुई। पुराणों को पंचम वेद मानने के कारण सायण उक्त आख्यायिकाओं की छाया ढूंढते चले गये। उन से पूर्व मंत्र रामायण जैसी रचनाएं प्रकाश में आ गई थीं। राम-कथा के पात्र तथा घटनाएं मन्त्रों में संकेतित कराये जा चुके थे। आज भी करपात्री जैसे विद्वान् लोक में घटना पूर्वक शब्दोलेख होता है तथा वेद में शब्दानुसारिणी घटना होती है, के अनुसार वेद में आए नामों को इतिहास सिद्ध मानते हैं तथा प्रतद् दुःशीमे पृथवाने वेने प्ररामे वोचमसुरे मघवस्तु (ऋक् १०-७३-१४) ऋचा का अर्थ करते हुये दुःशीम पृथवान, वेन और राम का सम्बन्ध सूर्यवंशी वेन तथा राम से मानते हैं। पर ऐसा मानने से वेद के नित्यत्त्व में बाधा पहुँचती है। अस्तु सायण जब स्वयं 'यस्य निःश्वसित वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्' घोषणा करते हैं तो ईश्वरी ज्ञान के कारण उसे अनित्य रूप से घटित होने वाली घटनाओं से क्यों जोड़ा जाए। ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका में 'तस्माद् यज्ञात्सच्चिदानन्दादिलक्षणा पूर्णात्पुरुषात् सर्वहुतात् सर्वपूज्यात् सर्वोपास्यात्सर्वशक्तिमतः पर ब्रह्मणः ऋग्वेदः, यजुर्वेदः सामवेदः अथर्ववेदश्च चत्वारो वेदास्तेनैव प्रकाशिता इति वेद्यम्' कहकर स्वामी जी ने सायण का समर्थन किया है पर सायण ऐतिहासिक अर्थ करते हुए अपनी इस मूल प्रतिज्ञा को भूल गये। स्वामी जी का भाष्य इस कसौटी पर सर्वत्र खरा उतरता है।

वेद-विद्या ब्राह्मविद्या तथा सृष्टिविद्या दोनों हैं। वेद मन्त्रों की मानव जीवनोपयोगी व्याख्या तथा विज्ञान सम्मत व्याख्या सुदीर्घ भाष्य परम्परा में पहली बार स्वामी जी ने की। भूगोल, खगोल, गणित, योग, मुक्ति, नौविमानादि, तार, आयुर्वेद, पुनर्जन्म, राज्यव्यवस्था, समाज-व्यवस्था, वर्णाश्रमधर्म, यज्ञ शिल्प, शस्त्र, वाणिज्य तथा कृषि आदि का विनियोग भी उन्होंने ही किया। इससे एक ओर भारतीय अतीत के गौरव का उद्घाटन हुआ तो दूसरी ओर कर्मकाण्ड तक सीमित समझे जाने वाले ज्ञान का आधुनिक ज्ञानविज्ञान तक प्रसार हुआ। मानव जाति के कल्याण दर्शक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के रूप में वेदों की प्रतिष्ठा हुई। इससे वेद पढ़ने का अधिकार मनुष्य मात्र तथा वेदार्थ में पारम्परिक विनियोगों के अनुसरण आवश्यक नहीं समझा गया।

स्वामी जी से पूर्व ब्राह्मणों तथा आरण्यकों में ज्योतिष सिद्धान्त सम्बन्धी सामग्री को देखकर वैज्ञानिक प्रणाली पर अर्थ करने की परिपाटी पड़ सकती थी, पर नवीन दृष्टि सम्पन्न विनियोग को परिवर्तन सापेक्ष प्रणाली परिपाटी विरुद्ध समझी जाने के कारण स्वीकार न हो सकी। स्वामी जी की सूझबूझ से यह कार्य महत्त्वपूर्ण ढ़ंग से सम्पन्न हुआ। तैत्तिरीय संहिता (३.४.७.१.) में कहा गया है—

सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः

अर्थात्– चन्द्रमा सूर्य से नीचे लोक में भ्रमण करता है तथा चन्द्रमा का प्रकाश सूर्य रश्मियों के कारण होता है, उसमें स्वतः प्रकाश नहीं है। सूर्य जैसे आकाश में ऊपर चढ़ता है वैसे रात्रि होने लगती है पर कुछ भागों में दिन होने लगता है। यह घटना तभी सम्भव हो सकती है, जब पृथ्वी गोल हो। पृथ्वी यदि समधरातल होती तो यह दृश्य कभी घटित न होता।

निवेशयन् प्रसुवन् अकतुर्भिजगत् (ऋक् ३.५३.३) ऐतरेय ब्राह्मण कहता है कि सूर्य न कभी उदय होता है और न अस्त।

स वा एष न कदाचनास्मेति. नोदेति[1] ।।

स्वामी जी से पूर्व भी प्रतीकात्मक अर्थ करने का श्री गणेश कुमारिल भट्ट ने किया था। 'अहल्यायै जारः' को पुराण में विस्तार मिला। इन्द्र को गौतम की पत्नी अहल्या का जार(उपपति)बताया गया। शतपथ (३.३४.१८) तैत्तिरीय (१.१२.४), षडविंश (१.१.) तथा लाट्यायन श्रौत सूत्र(१.३.१), में यह कथन उपलब्ध है। इन्द्र, अहल्या के इस वृत्त पर वेदनिन्दकों के प्रहारों का सामना कुमारिलभट्ट को करना पड़ा। उन्होंने परम्परा से हटकर तन्त्रवार्त्तिक में इसका नया अर्थ किया। यह गाथा सूर्यरात्रि के व्यवहार का द्योतन कराती है। चन्द्रमा गोतम है। उत्तमो गावोस्य सः अर्थात् निर्मल किरणों वाला। निरुक्त भी सर्वेऽपि रश्मयो गावः उच्यन्ते कहता ही है, अहल्या का अर्थ है रात्रि (अहर्लीयते यस्यां सा, जिसमें दिन लीन हो जाये) सूर्य इन्द्र है। (य एष सूर्यस्तपति, एष उ एव इन्द्रः, शतपथ) सूर्य के उदय होते ही रात्रि जीर्ण हो जाती है अतः वह जार है। निरुक्त भी 'आदित्योऽत्र जार उच्यते रात्रेर्जरयिता' कहता है। अर्थात् कुमारिल की सम्मति में भी चन्द्रमा की पत्नी रात्रि सूर्य द्वारा जीर्ण होती है। महर्षि दयानन्द ने भी ऋग्वेदादि

१–संस्कृतशास्त्रों का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय–पृष्ठ ४६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाष्य भूमिका में यही व्याख्या स्वीकार की है। तात्पर्य यह कि स्वामी जी की अर्थ प्रणाली का समर्थन कुमारिल भट्ट प्रभृति मीमांसकों से भी हो जाता है और इस प्रकार स्वामी जी के अर्थों को परम्परा विरुद्ध कह कर त्याज्य नहीं बताया जा सकता। स्वामी जी ने 'आयं गौःपृश्निरक्रमीदसदन् मातरं पुरः' (य० ३.६) का अर्थ कहते हुए कहा कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। त्वं सोमपितृभिः संविदानोऽनुधात्रा पृथ्वी आततन्थ' (ऋक् ८.४८.१३) का अर्थ करते हुए बताया कि चन्द्र पृथ्वी के चारों ओर घूमता है।

स्वामीजी के समय तक समुद्र यात्रा निषिद्ध समझी जाती थी। कलिवर्ज्य तालिका में समुद्र यात्रा करने वाले ब्राह्मण का उल्लेख है। बौधायन धर्म सूत्र (१.१.२२.) ने समुद्र संयान (समुद्र यात्रा) को निन्द्य माना है और उसे महापातकों में सर्वोपरि स्थान दिया है। (२.१.५१)मनु ने समुद्र यात्रा से लौटे ब्राह्मण को श्राद्ध में निमंत्रित होने के लिए अयोग्य ठहराया। औशनस स्मृति में भी ऐसा ही कहा गया है—

वेद विक्रयिणश्चैते श्राद्धादिषु विगर्हिताः।
द्रुम विक्रयिणो यत्र परपूर्वाः समुद्रगाः ॥ ४.२२

महीधर चाहते तो इस अंधमान्यता का खंडन कर सकते थे। रुद्राध्याय के निम्न मंत्र की व्याख्या में उन्होंने प्रयागादि तीर्थों का गमन मान कर संसार सागर से संतरण का अर्थ संगत समझा। स्वामी जी ने युग की आवश्यकता को ध्यान में रखकर कहा कि मनुष्यों को चाहिए कि नौकादि यानों में प्रशिक्षित मल्लाह लेकर समुद्र के उस पार इस पार आ जा के देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तरों में व्यवहार से धन की उन्नति कर, अपना अभीष्ट सिद्ध करें। उन्हीं का अर्थ 'नौकादिना परतटादर्वाचीने तट प्राप्ता' तथा तीर्थाय का अर्थ 'वेदविद्याध्यापकेषु सत्यभाषणादिषु च साधवे' किया। मंत्र है—

नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः।

ऐतिहासिक अभिलेखों से ज्ञात होता है कि ब्राह्मण लोग समुद्र पार करके स्याम, कम्बोडिया, जावा आदि देशों में जाते थे। राजा और व्यापारी गण भी आते जाते थे। बावेरु जातक, मिलिन्द्र पद्म राजतरंगिणी तथा नारद-

---

१–पुराण विमर्श–आचार्य बलदेव उपालय–पृष्ठ २५१

२–संसाराब्धेः परतीरे जीवन्मुक्त रूपेणभवः पार्यः तस्यै तीर्थे–प्रयगादौ भवः तीर्थ्यः तस्यै।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्मृति इसका समर्थन करते हैं। अतः स्वामी जी का यह अर्थ भी परम्परा विरुद्ध नहीं है ।

यजुर्वेद के रुद्राध्याय का अर्थ करते हुए उन्होंने राजधर्म का निरूपण किया है और इस सन्दर्भ में उनका अर्थ मौलिक तथा लोकोपयोगी कहा जा सकता है । महीधर तथा उव्वट ने 'षोडशे शतरुद्रियाख्यहोम मन्त्रा उच्यन्ते' कहकर रुद्र देवता परक अर्थ ही किया है । यहाँ भी दयानन्द जी की दृष्टि पृथक् है । दूसरे मन्त्र का तात्पर्य वह शिक्षक शिष्य के व्यवहार, तीसरे का राजपुरुष के कर्त्तव्य, चतुर्थ पंचम का वैद्य के कार्य तथा छटे से २६ तक राजधर्म निरूपण लेते हैं । यही नहीं महीधर प्रायः जिन मन्त्रों का अर्थ यज्ञ वैदिका अथवा भूमिखनन से करते हैं । स्वामी जी वहाँ सुवर्ण निर्माण आदि का उल्लेख कर अधिभूत परक व्याख्या करते हैं । निम्न मन्त्र की व्याख्या में स्वामी जी ने लिखा है कि हे शिल्पी तेरे साथ भूमि को खोदने वाली नारी के सदृश लोहे की कस्सी है, उससे अग्नि संयोग द्वारा सुवर्ण बना—

अभ्रिरसि नार्चसि त्वया वयमग्नि शकेम खनितुं सधस्थ आ जागतेन छन्दसांगि रस्वत् । य० ११।१०

यहाँ भूगर्भतत्त्वविद्या का संकेत स्वामी जी के व्यवहारोपयोगी व्याख्या दृष्टि का ही परिणाम कहा जा सकता है ।

सायण, महीधर तथा उव्वट ने अग्नि, अदिति, इन्द्र, रुद्र, विष्णु आदि का अर्थ अधिदैवत प्रधान ही किया है पर स्वामीजी ने अधिभूत तथा अध्यात्म की दृष्टि से इनकी व्याख्या की है । अग्नि को परमेश्वर, जीवात्मा, विद्वान्, सभाध्यक्ष, राजा सेनापति, वैद्य, नेता, योगी, अध्यापक, उपदेशक तथा न्यायाधीश कहा गया है । अदिति को परमेश्वर, आत्मा, विदुषी, माता, अध्यापिका तथा राजसभा बताया गया है । इन्द्र का तात्पर्य परमेश्वर, जीवात्मा, सम्राट्, शूरवीर, विद्वान्, शिल्पी, कृषक तथा वैद्य बताया गया है । रुद्र का सर्वत्र परमेश्वर, प्राण, सेनापति, सचिव, राजा तथा विद्वान् के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है । विष्णु का अर्थ भी प्राण, यज्ञ, सेनापति, शिल्पी, योगी तथा गृहपति किया है । सारांश यह कि देवता विशेष परक शब्दों की व्याख्या को निरुक्त के आधार पर व्यापक अर्थ विस्तार स्वामी जी ने दिया है । यज्ञो वै विष्णुः, यज्ञ उ वै प्रजापतिः, पशवो सविता, अग्निर्वै रुद्रः, वीर्यं वा इन्द्रः, आदित्यौ ह्वै वाह्यः प्राण उदयति, वृत्रो वै सोम आसीत्, अर्चिषि भृगुः संबभूव अङ्गारेष्वंगिरा, प्राणइन्द्रः, इन्द्रो वै यजमानः,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वायुरपरश्चन्द्रमा इत्येते भृगव: आदि वाक्य ब्राह्मणग्रन्थों में उक्त शब्दों के अनेक अर्थ वाचक होकर आए हैं । अतः स्वामी जी ने इस परम्परा को को आगे बढ़ाते हुए इन्द्रादि शब्दों के विविध अर्थ किये । इस प्रकार के अर्थ करने में ब्राह्मणग्रन्थों ने उन्हें प्रेरणा दी । सायण आदि ने हिंसा परक व्याख्यायें भी इन प्रकरणों में की । पुरोडाश को मांस का वाचक माना गया । विचित्र बात है कि एक ओर सायण अध्वर का अर्थ ध्वरतिहिंसाकर्मा के आधार पर हिंसारहित करते हैं और फिर यज्ञ में उपयोगी पशुओं को मारने का समर्थन करते हैं । यजुर्वेद पशून् पाहि की प्रार्थना संकेत देता है । अत: दयानन्द ने इन अर्थों को स्वीकार नहीं किया । ब्राह्मण ग्रन्थ अश्व, पुरोडाश आदि शब्दों के कई अर्थ करते हैं । शतपथ सूर्य, अग्नि को अश्व तथा मेव, अन्न को पुरोडाश कहता है । स्वामी जी ने ब्राह्मण और निरुक्त का प्रमाण देकर इन शब्दों की अवसरानुकूल व्याख्या की । यास्क के मर्म को जितनी गहराई के साथ दयानन्द ने आत्मसात् किया था, उतना उनके पूर्ववर्ती किसी आचार्य ने नहीं किया । मत मतान्तरों तथा अन्ध विश्वासों की रूढ़ियों से मुक्त किया ।

स्वामी जी की अधिभूतपरक व्याख्या उनकी अपनी सूझबूझ का परिणाम पर आध्यात्मिक व्याख्याओं में उन्होंने उपनिषद् की शैली अपनाई है । बृहदारण्यक ने अन्तर्यामी पर विचार करते हुए याज्ञवल्क्य ने अधिलोक, अधिभूत, अधिदेव तथा अध्यात्म की शैली अपनाई । यही नहीं 'कतम इन्द्रः स्तनयित्नु इन्द्रः' तथा 'यज्ञ इति पशव' जैसे अर्थ याज्ञवल्क्य ने किये । केनोपनिषद् में विद्युत और सकल्प और ब्रह्म बताया गया । तैत्तिरीयोपनिषद् में ज्योतिष, अधिप्रज्ञ तथा दार्शनिक दृष्टि से उपासना विवेचन किया गया । अन्न ब्रह्मेति जैसे वाक्य इसी आशय से कहे गये हैं । छान्दोग्य में पंचाग्नि महिमा, वृषभ, अग्नि, हंस, मद्‌गु का उपदेश, अधिभूत तथा अध्यात्म दोनों दृष्टियों से वर्णित हुआ है । दहर कमल का स्पष्टोकरण भी अथर्व के मन्त्र 'सर्वाह्यस्मिन् देवता गावो इव श्रिता:' के जैसा ही है । संवर्ग का विवेचन करते हुए ऋषि ने 'तौ वा एतौ संवर्गौ वायुरेव देवेषु प्राणः प्राणेषु' तथा 'वायुर्वाव सवर्गः' 'प्राणो वाव संवर्ग' कहकर अधिभूत तथा अध्यात्म परक व्याख्या की है । उपनिषद् में इत्यधिदैवतम् तथा 'अथाध्यात्मं' घोषणाएं स्पष्ट है । सारांश यह कि स्वामी दयानन्द ने उक्त दोनों शैलियां परिवर्तन के साथ स्वीकार की । अधिदैवत में बहुदेववाद को स्वीकार न करने के कारण अधिभूत तथा अध्यात्म-मूलक व्याख्याएं उन्होंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की। अधिभूत परक व्याख्याएं इतने विशद आयाम के साथ उनके पूर्ववर्ती किसी आचार्य ने नहीं की थी।

अन्त में कहा जा सकता है कि वेद प्रामाण्य के बहुमुखी उद्घोष के लिए उन्हें सृष्टिविद्या तथा ब्रह्मविद्या के विनियोग, वेदार्थ करते हुए करने पड़े। ब्राह्मण तथा उपनिषदों की शैली को उन्होंने आगे बढ़ाया। अश्लील तथा जुगुप्सा व्यंजक अर्थों का परित्याग कर आदर्श गृहस्थोचित मान्यताओं का उद्घाटन किया। अधिभूत तथा अध्यात्मपरक व्याख्याएं कर वेद को प्रवृत्ति तथा निवृत्ति प्रधान जीवन यापन करने वालों का सम्बल बनाया। उन्होंने भाष्य की जो शैली अपनाई वह परम्पराभंजक नहीं, परम्परा का पुनरुद्धार करने वाली थी। राष्ट्रवादी, व्यवहारोपयोगी, मानवतावादी तथा दार्शनिक शैली की दृष्टि से भाष्यकारों में उन्होंने अत्यन्त स्वस्थ परम्परा की खोज की। स्वामी जी इस दृष्टि से बेजोड़ हैं।

सबके विचार समान हों

समानो मन्त्रः समितिः समानी,
समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः,
समानेन वो हविषा जुहोमि॥

ऋग्० १०-१९१-३

अर्थ—इन (लोगों) की मन्त्रणा एक प्रकार की हो। समिति एक प्रकार की हो। इनका मन समान हो और चित्त (चिन्तन) भी समान हो। तुम्हें समान मन्त्र देता हूं और तुम्हें समान सामग्री (उपकरण) से युक्त करता हूं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्व-ज्ञानमयो हि सः

डा० हरि गोपाल शास्त्री, व्याकरणाचार्य, पी०-एच० डी०
सम्पादक भारतोदय, गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

वेद में सब ज्ञान, विद्यायें वर्णित हैं क्योंकि वेद सर्व ज्ञानमय है। परम-पिता परमात्मा ने सृष्टि के आदि जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऐहिक और पारलौकिक सुख की कल्याण कामना के लिए वेद को प्रदान किया है। जिसकी स्वरवर्णानुपूर्वी नित्य है। इसी वेद को आधार मानकर ऋषि-मुनियों ने अन्यान्य ग्रन्थों की रचना की है। मानव सम्बन्धी समस्त आवश्यक ज्ञान बीज रूप में इसमें है, ऐसा ऋषि मुनियों को अभिप्रेत है। आर्य सनातन धर्म का यत्किञ्चित भी क्रिया-कलाप वेद के बिना सम्भव नहीं है। जन्म से मृत्यु पर्यन्त वेद का ही आश्रय लेना अनिवार्य है। देश के धनाढ्य वर्ग से लेकर आकाशीवृत्ति के आश्रित के यहाँ भी विवाह आदि कोई शुभ कार्य वेद की ध्वनि के बिना नहीं हो सकता है। अतः वेद सम्पूर्ण मानव जाति का प्राण है, इसमें भी अत्युक्ति नहीं कि वेद ही भारतीय संस्कृति, सभ्यता और साहित्य का मूलाधार है। इसीलिए मनु महाराज ने कहा है —

'स सर्वोऽभिहितोवेदे सर्वज्ञानमयो हि सः'। (मनु० २/७)

ऋग्वेद के दशम् मण्डल के ७१वें सूक्त में कहा गया है —

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत् प्रैरत नामधेयं दधानांः।

अर्थात् वेदवाणी प्रथम सृष्टि के आदि में दी जाती है, वही सब भाषाओं की मूल है। उसी से सब पदार्थों के नामादि का व्यवहार चलता है। मनु ने अपने श्लोक के द्वारा इसकी पुष्टि की है—

सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेद शब्दभ्यः एवादौ पृथक् सस्थाप्य निर्ममे ॥ ॥ मनु० १–२१॥

ऋषिः मुनियों ने वेद को '**सर्वज्ञान मयो हि सः**'(मनु २/७) '**प्रमाणं परमं श्रुति**' (मनु) **वेदोऽखिलो धर्ममूलं** (मनु०२/६) **देवपितृमनुष्याणां वेदः चक्षुः सनातनम्**' माना है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राचीन काल से ही वेद आर्य संस्कृति के प्रकाश स्तम्भ रहे हैं। आर्य-जाति के संगठन और उसकी जीवन चर्या के व्यवस्थापन वा नियमन, उसकी आध्यात्मिक तथा अन्य उत्कृष्ट भावनाओं की प्रेरणा म वेद का प्रमुख स्थान रहा है। प्राचीन ऋषियों ने वेद को परम-प्रमाण, अपौरूषेय और ज्ञान का भण्डार माना है। उन प्राचीन ऋषि-मुनियों की कृतियों में जो लोकोत्तर महत्ता दिखाई देती है उसमें भी हमें वेद की उत्कृष्ट भावनाओं का प्रभाव पदे-पदे दृष्टिगोचर होता है। इससे हमें अपनी आर्य संस्कृति का महत्त्व अधिक स्पष्ट प्रतीत होने लगता है इस सबके मूल को खोजने से हमें यही विदित होता है कि वेद हमारी आर्य जाति, आर्य संस्कृति तथा सभ्यता के प्राण, अक्षय्यनिधि, पथ-प्रदर्शक सदा रहे हैं। और वेद के कारण ही सब संसार में अजर-अमर हैं।

'निष्कारणो धर्मः षडंगो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च'

(महाभाष्य)

बिना यह सोचे कि हमें इसके पढ़ने से क्या लाभ होगा, अपना परम कर्तव्य समझते हुए इस वेद को छःओं अङ्गों सहित पढ़ने का आदेश हमारे ऋषि लोग करते चले आ रहे हैं। इसी का यह फल है कि वेद इस समय तक सुरक्षित रहता आया है, अन्यथा अनेकानेक जातियों के आगमन से तथा वेद-विध्वंसकों के सतत प्रहार से यह वेद कभी का भूमण्डल से लुप्त हो गया होता।

इस परिप्रेक्ष्य में हमें महर्षि दयानन्द को नहीं भूलना चाहिए, उन्होंने लुप्त होते वेद को देख कर, वेद प्रभु की वाणी है, नित्य स्वतः प्रमाण हैं, बताकर उसका उद्धार किया तथा उसके पठन-पाठन पर ध्यान दिया।

शास्त्र सम्बन्धी बिविध, रूढ़ियों, प्रचलित रीतियों और शास्त्रकारों के परस्पर कहे जाने वाले विरोध के भंवरों, विविध वादों और मतान्तरों के तूफान में दयानन्द पर्वत के समान अटल रहे, डिगे नहीं।

वेदाध्ययन की अक्षुण्ण परम्परा —

वेदों का प्रचलन सृष्टि के आरम्भ से ही रहा है, उसकी अजस्र परम्परा हमें प्रत्येक काल में देखने को मिलती है। इसी अविच्छिन्न परम्परा के कारण ही वेद हम तक पहुँचा है। रामायण काल में वेदाध्ययन की अच्छी स्थिति थी। बाल्मीकि रामायण में लिखा है —

न ऋग्वेदाविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणाः।
ना सामवेद विदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम।

(किष्किन्धा काण्ड)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राम ने हनुमान की योग्यता के विषय में लक्ष्मण से कहा था बिना ऋक्, यजुः, और साम वेद के जाने कोई इस प्रकार की बात नहीं कर सकता।

सर्वे वेदविदः शूराः सर्वे लोकहिते रताः।
ते चापि मनुजव्याघ्रा वदिकाध्ययने रता॥
(रामायण बालकाण्ड सर्ग/१८)

इत्यादि कथनों से स्पष्ट है कि उस समय वेदाध्ययन की परम्परा सर्वं साधारण में भी थी। महाभारत शान्तिपर्व अ० २३२/२४ में कहा है —

अनादि निधना नित्या वाग् उत्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आदौवेदमयो दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः॥

सृष्टि के आरम्भ में स्वयम्भु परमात्मा से ऐसी वाणी (वेद) का प्रादुर्भाव हुआ जो नित्य है, जिसका कभी विनाश नहीं होता जो दिव्य है। उसी से संसार की सब प्रवृत्तियाँ चलती हैं।

महाभारत काल में भी वेद सम्बन्धी यह धारणा विद्यमान थी। द्रोणपर्व ७/१ में वेदषडंगवेदाह, 'योऽधीते चतुरोवेदान्' वनपर्व-५८/७० इत्यादि वचनों से स्पष्ट है कि उस काल में वेदाध्ययन की परम्परा अक्षुण्ण रही है। इस लम्बे काल में यह परम्परा कहाँ तक गई है यह कहना तो कठिन है, किन्तु यह अवश्य है कि यज्ञ - यागादि करने के लिए ही वेदाध्ययन की परम्परा चलती रही। सायण के समय तक यह प्रक्रिया चली उनका भाष्य इस प्रक्रिया का परम पोषक बना, सायण के बाद वेदों के अर्थों का पठन-पाठन भारत के किन्हीं स्थान विशेषों में हो रहा है जो नगण्य है। यह अवश्य कहा जा सकता है कि विगत डेढ़ सौ वर्षों में वेद का अर्थपूर्वक अध्ययन बहुत कम रहा।

वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है —

यह कहना अनुचित न होगा कि जिस प्रकार संसार में एक सूर्य ही ईश्वरीय प्रकाश है, इसके अतिरिक्त दीपक आदि समग्र प्रकाशक पदार्थ मनुष्य कृत हैं, या यों कहिए कि वे सूर्यरूपी ईश्वरीय प्रकाश की सहायता से ही प्रकाशित हैं। ठीक उसी प्रकार ससार में ईश्वरीय ज्ञान रूपी प्रकाश सम्बन्धी पुस्तक भी एक ही हो सकती है, अनेक नहीं। और वह है वेद। इसके अतिरिक्त शेष सब पुस्तकें मनुष्य कृत हैं और वेद सम्बन्धी ज्ञान की सहायता से ही अपने ज्ञान का प्रकाश कर सकती है। अतः सब ऋषि-मुनियों ने सदा से सृष्टि के आदि में वेद का प्रादुर्भाव माना है, मध्य में नहीं। साथ ही यह भी मुक्त कण्ठ से कहा —

स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्व ज्ञानमयो हि सः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आज फिर आवश्यकता है अग्नि-उपासना की

—डा० सत्यव्रत शर्मा 'अजेय'
एम.ए ,पी-एच.डी.
उपाचार्य–गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

अग्नि ही मर्त्य-लोक में अमृत तत्त्व है, यही नित्य सत्य का गोप्ता है, यही त्र्यम्बक है, यही रुद्र है, यही देवतात्मा है, सृष्टि–क्रम इसी से प्रवर्तित है, यही सृष्टि का कार्य-साधक है, इसी से चक्षु प्रकाशमय होते हैं, वनस्पति भी, वीरुद भी, लताएं भी इसी से विकसित होती हैं । यही देव–यजन का साधन हैं, यही अणु-परमाणु की संगति का कारण है, इसीलिये इसे यज्ञ का 'देव' कहा गया है । यही षड्ऋतुओं का जनयिता है, इसीलिए यही 'ऋत्विक्' है । संसार की पदार्थ रूपी हव्य सामग्री को प्राप्तकर यही उसके परमाणुओं को पृथक् करता है अतएव यही 'होता' है । इसी के कारण चांदी, सोना, हीरा, लाल, नीलम और पुखराज आदि महार्घ मणि-मुक्ताओं में चमक है, इसी की झल-मल झल के प्रतिबिम्ब से चिरकाल तक न ढलने वाला शीशे जैसा श्वेत पारदर्शक प्रस्तर स्वच्छ स्फटिक बन जाता है, अतएव यही 'रत्न-धारक' है । इसी परिवेश में ऋग्वेद की प्रथम ऋचा ने इस अग्नि देवता की स्तुति इस प्रकार की है :—

अग्नि-मीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्,

होतारं रत्नधातमम् । ऋ० १।१।१

यह कहीं गार्हपत्य है, कहीं आहवनीय है तो कहीं रक्षित है । इसी के कारण विष्णु अग्निजन्मा है, शिव अग्निकेतु है और कार्तिकेय अग्निभू है । अग्निमुख मंत्र इसी के तेज का गायन करता है । महाज्योतिष्मती लता इसी से दीप्त होने के कारण 'अग्निदीप्ता' कहलाती है । स्वर्ण इसी से सम्भव है । अतः यह 'अग्नि सम्भव' और 'अग्निशिख' कहलाता है । इसी से चकमक 'अग्नि प्रस्तर' है इसी से ज्वालामुखी 'अग्नि-पर्वत है और इसी से मणि विशेष 'अग्निमणि' है, इसी अग्नि देवता की वन्दना देवता करते हैं ।

ऋग्वेद में अग्नि से सम्बन्धित२००सकल सूक्त दृष्टिगोचर होते हैं, जिनमें इसे घृतपृष्ठ घृत–प्रतीक,मन्द्रजिह्व, घृत लोम,ज्वाल-लोम, हरि-केश, हिरण्यश्मश्रु,हिरण्यदन्त,अपाद,अशीर्षा, तपुर्मूर्धा, त्रिमूर्धा, सप्तरश्मि,सप्तजिह्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और सहस्रचक्षु आदि विशेषणों से विभूषित किया गया है । गुण-धर्म के अनुरूप उसका वास्तविक त्रित्र यह है—

'साधुर्न गृध्नुरस्तेव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु' ।

—ऋक्० १/७०/६

अर्थात् वह धीर धनुर्धर की भांति भयंकर शूर है।

ऐसा ही एक चित्र और देखिए —

स इदस्तेव प्रति धादसिष्यञ्छिशीत तेजोऽयसो न धाराम् ।

ऋग्वेद ६/३/५

अर्थात् वह लोहे की धार के समान अपनी ज्वलन्त ज्योति को तीव्र करता है। वह पीवर स्कन्ध है, सुवीर्य है—

'विजेह मानः परशुर्न जिह्वाम् ।'

ऋग्वेद ६/३/४

अर्थात् वह कुठार-धार सी अपनी जिह्वा को लपलपाता है। वह भास्वर है. विद्युत और मार्तण्ड की प्रचण्ड मयूखों के समान प्रभान्वित है। वह अहर्निश स्वयं प्रकाशमान् है —

सिन्धोरिव प्रस्वनितास ऊर्मयोऽग्ने-र्भ्राजन्ते अर्चयः ।

ऋग्वेद १/४४/१२

अर्थात् उसकी ज्वाल-माल में सिन्धु की तुंग तरंगों के तुल्य गर्जन-तर्जन है। वह अपनी ऊष्मा से अश्मा का भी भेदन कर देता है।

देवासुर-संग्राम में सुरा-सुन्दरी के मोह-पाश में निबद्ध देवगण जब निरन्तर असुरों से पराजित होने लगे, तब उन्होंने विजय की कामना से ओज और तेज के प्रतीक अग्नि की आराधना की, तब रक्षोहन् अग्नि ने देवों में समाहित होकर स्वीय प्रकाश से राक्षसों को पराजित कर दिया, यथा—

वि पाजसा पृथुना शोशुचानो बाधस्व द्विषो रक्षसो अमीवाः ।

ऋग्वेद ३/१५/१

आज भारत विभा-रत न होकर अनुदिन वि-भारत होता जा रहा है, आज अनेक ज्वलन्त समस्याएं दिगन्त में उत्पन्न होकर हृदय-द्रावक घटनाओं को जन्म दे रही हैं। चींटी ने भी हमसे डरना छोड़ दिया है। हम अपने ही घर में बेगाने बनाये जा रहे हैं। इतना ही नहीं, और भी क्या-क्या अनाचार - कदाचार आज नहीं हो रहे। आज गौ-वध से भी अधिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जघन्य, अबोध अबला-वध दहेज-दानव द्वारा हो रहा है। दिगन्त आक्रान्त हैं, जन-जीवन अशान्त और भ्रान्त हैं। शत्रु ललकार रहा है, पानी में आग लगाई जा रही है, नृशंस नर-वध हो रहा है। यात्राओं में असु रक्षित नहीं घर में सुरक्षित नहीं, बाहर सुरक्षित नहीं, सभी सर्वत्र असुरक्षित हैं। आततायी अत्याचार कर रहें हैं, अतिवादी उभर रहे हैं, उग्रवादी गरज रहे हैं, राष्ट्रीय अखण्डता खण्ड-खण्ड की जा रही है, एकता की धज्जियां उड़ाई जा रहीं हैं, और हम आत्म-विस्मृत से मृतप्राय जीवन जी रहे हैं।

अतएव अमृत पुत्रो ! अपने अन्दर की अग्नि को पहचानो, आज एक मात्र तुम्हारे तेज की तरणि ही तुम्हें त्रास- तोयधि के विशाल वात्या-चक्र से पार लगा सकती है। उठो, और पावन प्राणाग्नि को प्रज्वलित कर मुग्ध शत्रु - सैन्य को शुष्क तृण-राशि के समान दग्ध कर दो। उठो, कि अपनी दीप्ति के विस्मयकारी स्फुलिंगों से समस्त द्युलोक को देदीप्यमान कर दो —

आ ते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् । यद्धस्या ते पनीयसी समिद् दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर ।

ऋग्वेद ५/६/४

सभी प्राणि सुरक्षित रहें

प्राणं में पाहि, अपानं मे पाहि, व्यानं मे पाहि,
चक्षुर्म उर्व्या विभाहि, श्रोत्रं मे श्लोकय ।
अपः पिन्व, औषधीर्जिन्व द्विपादव,
चतुष्पात् पाहि, दिवो वृष्टिमेरय ।।

अर्थ—हे परमात्मन् ! मेरे प्राण अपान और व्यान वायुओं की रक्षा करो। मेरी दृष्टि को विस्तृत रूप से तेज दो। मेरे कानों को सुनने की शक्ति दो। (पृथ्वी को) जल से सींचो, औषधियों में शक्ति दो। मनुष्य और पशुओं की रक्षा करो। आकाश से वृष्टि को प्रेरित करो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदों की सार्वभौमिक महत्ता

—डॉ० ठाकुर दत्त जोशी, एम.ए. साहित्याचार्य,
संस्कृत विभाग,
जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

यह बात निर्विवाद सत्य है कि पांच हजार वर्षों से पूर्व वेदमत से भिन्न कोइ मत नहीं था। मानव समाज की उद्धारक समग्र मान्यताएं वेदाध्ययन में आने वाले शैलिल्य के गर्त में समाहित हो गई। महाभारत जैसी युद्ध विभीषिकाएं जो अतीत में घटित हुईं तथा जिनके कारण वर्तमान शताब्दी भी मानवता के अस्तित्त्व को खतरे में डाली हुई है इन सब के मूल में वेदसम्मत सौमनस्य भावना का अभाव किं वा वेदाध्ययन अप्रवृत्ति ही परिलक्षित होती है।

वेद अनन्त विद्याओं के भण्डार हैं। विश्व का कोई भी ऐसा विषय नहीं है, जिसका वेद में बीजरूपेण उल्लेख न हआ हो। विज्ञान, कर्मकाण्ड, उपासना, और ज्ञान, ये चार विषय क्रमशः चारों वेदों के मुख्य प्रतिपाद्य हैं। पूर्वोक्त विविध विषयों की गहनता में न जाकर, व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्रों को एक सूत्र में बांधने वाले वचनामृत का ही हम यहां पान करेंगे।

व्यक्ति एक सामाजिक इकाई है। अतः उसे अपने दैनिक जीवन के कार्यों की पूर्ति हेतु समाज के अन्य व्यक्तियों से मेल-जोल बनाए रखने की अत्यधिक आवश्यकता है। इसी प्रकार एक राष्ट्र को अन्य राष्ट्र के साथ अपने अच्छे सम्बन्धों की भित्ति को मजबूत बनाए रखना परमावश्यक है। वेदों ने हमें इन पारस्परिक सम्बन्धों को सुमधुर एवं सौहार्द्रपूर्ण बनाये रखने के लिए जिन-जिन उपायों एवं मान्यताओं को हमारे सामने अमृतमयी वाणी द्वारा उपन्यस्त किया है, उन्हीं का उल्लेख साररूप में यहाँ किया जा रहा है।

परिवार राष्ट्र की एक इकाई है, अतः पारिवारिक जीवन के समारम्भ क्षणों में ऋग्वेद ने हमें आज्ञा दी—हे गृहस्थ धर्म में प्रवेश करने वाले वर और वधू! तुम दोनों यहीं अर्थात् अपने घर पर एक दूसरे से सन्तुष्ट होकर मिलकर रहो। मन, वचन और कर्म द्वारा कभी एक दूसरे से अलग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मत होओ, जीवन भर साथ निभाओ और पुत्रों और पौत्रों के साथ खेलते हुए अपने घर में आनन्द मनाते हुए पूर्ण आयु भोगो[1]।

गृहस्थधर्म में प्रविष्ट होने के अनन्तर पति-पत्नी एवं भाई-बहिन के सौमनस्य बनाये रखने हेतु अथर्ववेद हमें प्रेरणा देता है—घर घर में पुत्र पिता का आज्ञाकारी और माता से सहमत हो तथा पत्नी पति से मीठी तथा शान्ति से भरी वाणी बोले[2]। भाई-भाई आपस में द्वेष तथा कलह न करें। एक जैसे मन वाले तथा समान धर्म वाले बनकर तुम सब कल्याणकारी ढंग से परस्पर संलाप अर्थात् बातचीत करो। अर्थात् सारे परिवार में प्रेम, सहानुभूति, सहृदयता और सद्भावनापूर्ण पारस्परिक व्यवहार होना चाहिए[3]। इतना ही नहीं समाज के सम्बन्धों में किसी प्रकार का दुराव न आने पावे, अतः पारिवारिक सौमनस्य के अनन्तर सामाजिक सौमनस्य के लिए भी अथर्ववेद हमें प्रेरित करता हुआ हमारी ही आवाज में कह रहा है—हे लोगों! हमारी कामनाएं एक दूसरे से विरुद्ध न होकर हमारे हृदयों को जोड़ने वाली हों और हमारे मन परस्पर मिले हुए हों[4]। ऋग्वेद भी इसी आवाज को लगाते हुए हमें प्रेरित कर रहा है—हे मनुष्यों! तुम परस्पर मिलजुल कर चलने वाले बनो। तुम्हारे परस्पर विवाद प्रेमपूर्ण हों, तुम्हारे मन एक दूसरे के सम्मान करने वाले हों। जिस प्रकार पूवकाल के देवगण ऐकमत्य को प्राप्त हुए, अपने-अपने हविर्भाग को स्वीकार करते चले आ रहे हैं, उसी प्रकार तुम लोग भी एक मति वाले होकर धन सम्पत्ति को

१— इहैव स्त मा वियौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे॥
—ऋग्वेद, १०-८५-४२

२— अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्॥
—अथर्ववेद, ३-३०-२

३— मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया॥
—अथर्ववेद, ३.३०.३

४— कामेन मा काम आगन् हृदयाद्धृदयं परि।
यदमीषामदो मनस्तदैतूप मामिह॥
—अथर्ववेद, १९-५२-४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वीकार करो[1]।

हिंसा किसी भी प्रकार की क्यों न हो वह निन्द्य है। चाहे वह कायिक हो या वाचिक हो अथवा मानसिक ही क्यों न हो, वह हमें अच्छे बिचारमार्गों से भटका देता है, अतः यजुर्वेद हमें इससे भी बचने की प्रेरणा देता है— हम कल्याण की ओर ले जाने वाले हिंसा रहित मार्ग पर सदा चलें, जिस पर चलने से मनुष्य सब दुःखकारक कार्यों को छोड़ता है और ऐश्वर्य को प्राप्त करता है[2] अर्थात् अहिंसात्मक मार्ग पर चलने से अपना भी और दूसरों का भी कल्याण करो।

इस प्रकार की कल्याणकारी प्रवृत्ति के लिए एक विशेष धरातल वाले मनः स्थिति की आवश्यकता होती है, यजुर्वेद के अनुसार वह स्थिति निम्न प्रकार से है, इस स्थिति को सतत बनाए रखने के लिये वेद हमें प्रेरणा दे रहे हैं—सब प्राणी मित्र की दृष्टि से मुझे देखें और मैं भी मित्र की दृष्टि से तथा हम सब आपस में एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें[3]।

परिवार एवं समाज के अन्दर सभी व्यक्ति अपने अपने कार्यों को अनालस्य—भाव से करते रहें, तभी परस्पर मैत्रीभाव बना रहता है। यदि परिवार में एक भी अरुग्ण व्यक्ति बिना कर्म किये खाने लगता है, तो अन्य पारिवारिक जन की दृष्टि उसके प्रति अमित्रभाव वाली हो जाती है। सयुक्त पारिवारिक-प्रणाली के विघटन के कारणों में एक कारण यह भी रहा है। अतः ऋग्वेद की मान्यता है—देवता, पुरुषार्थी धर्मात्मा मनुष्य को चाहते हैं, स्वप्नशील को नहीं चाहते हैं। वे उसे भी नहीं चाहते हैं जो आलस्य और प्रमादवश पड़ा हुआ है। आलस्य रहित लोग ही परम आनन्द को प्राप्त करते हैं[4]।

१—संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवाभागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥
—ऋग्वेद, १०-१९१-२

२—प्रति पन्थामपद्महि स्वस्ति ग्रामनेहसम्।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु॥ —यजुर्वेद, ४-२९

३-मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥
-यजुर्वेद ३६-१८

४-इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति।
यान्ति प्रमादतन्त्राः। —ऋग्वेद १८-२-१८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् जो सो जाते हैं, देवता कि वा विद्वान् भी उनसे अप्रसन्न होकर जागते हुए लोगों को आनन्द प्रदान करने हेतु उनके पास चले जाते हैं। कर्मशील मनुष्य कर्म के द्वारा अपना ही कल्याण नहीं करता अपितु सम्पर्क में आने वाले मानवमात्र को आवश्यकतानुसार उपकार कर उसको भी उपकृत करता है ।

इस प्रकार किसी का उपकार करने से उपकार कर्ता (व्यक्ति) का मन अपूर्व सुखानुभूति प्राप्त करता है, ऐसो ऋग्वेद को मान्यता है—

दैवी प्रेम, सेवा और उपकार का जीवन वह नाव है, जिस पर चढ़कर परम सुख मिलता है[1]।

एकता, कर्मठता, त्याग, परोपकार, सेवाभाव आदि मानवीय उत्कृष्ट गुण ही सुसमृद्ध-राष्ट्र के निर्माण में सहायक हाते हैं। अतः ऋग्वेद ने भी इन गुणों के प्राप्त्यर्थ मानवमात्र को प्रेरित किया है—हे मनुष्यों! तुम्हारे निश्चय व कर्म समान हों। तुम्हारे हृदय और मन भी समान हों। इस प्रकार समान मति बने हुए तुम सब प्रकार से सुगठित जीवन बिताओ। अर्थात् तुम सब लोगों में सर्वविध ऐक्य हो और एक सुगठित राष्ट्र का निर्माण करने वाले बनो[2]।

सुगठित राष्ट्र का निर्माण तभी सम्भव है, जब हम सबसे प्रिय वस्तु अपने प्राणों को भी राष्ट्र के लिए न्यौछावर करने के लिए सदा तत्पर रहेंगे। यह शिक्षा हमें अथर्ववेद देता है–हे मातृभूमे! हम रोग रहित और स्वस्थ बनकर सदा तेरी सेवा करें। हम दीर्घ आयु और वास्तविक ज्ञान पाकर तेरे लिए अपने प्राणों को न्यौछावर करने के लिए भी सदा तत्पर रहें[3]।

इस प्रकार वेदों ने प्राणों को न्यौछावर करने के लिए एक विशेष राष्ट्र-प्रेम का होना आवश्यक माना है। जिस प्रेम की प्राप्ति बिना ज्ञान के

१–दैवीं नावम्..........आरुहेमा स्वस्तये ।
—ऋग्वेद १०. ६३. १०.

२–समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।। —ऋग्वेद–१०/१९१/४

३–उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा, अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना, वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम ।।
—अथर्ववेद, १२–१–६२

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्भव नहीं है। ज्ञान की किं वा विद्या की प्राप्ति, बिना गुरु के सम्भव नहीं हैं।

अतः विद्या के दानादान तथा विद्या के उत्थान के विषय में भी वेद हमें प्रेरित करते हुए कहते हैं—हे मनुष्यों ! जिस कर्म में विद्या एवं मेधा की उन्नति हो, उसे करो। जो तुम्हारी विद्या और सुशिक्षा की कामना करते हैं, उन्हें प्रीतिपूर्वक विद्यादान करो, जो आपसे अधिक हों, उनसे विद्या ग्रहण करो[1]।

केवल सैन्य-बल से ही राष्ट्र की पवित्रता एवं सार्वभौमिक रक्षा किया जाना शक्य नहीं है, अतः क्षात्रतेज एवं ब्रह्मतेज दोनों को ही राष्ट्ररक्षा में अपरिहार्य मानते हुए यजुर्वेद में कहा गया है—जिस देश में ब्राह्मण और क्षत्रिय में अथवा ज्ञान और बल साथ-साथ चलते हैं, वह देश पवित्र हैं[2]। जिस राज्य में मनीषी वर्ग मारा जाता है, उस राज्य को दुर्गति मिटा डालती है[3]। यजुर्वेद ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों को ही गुरुत्वेन वरणीय मानता है। कहा गया है—ज्ञान के लिए ब्राह्मण और शौर्य के लिए क्षत्रिय को प्राप्त करो[4]।

१-ब्रह्माणि ते मतयः शꣳ सुतासः शुष्मऽइयर्ति प्रभृतयो मेऽअद्रिः।
आ शासते प्रतिहर्य्यन्त्युक्थेमा हरी वहस्तता नोऽअच्छ॥

—यजुर्वेद, ३३.७८

२—यत्र ब्रह्म च क्षत्रञ्च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषम्॥ —यजुर्वेद, २०.२५

३—ब्रह्माणं यत्र हिंसन्ति तद्राष्ट्रं हन्ति दुच्छुना। —अथर्ववेद ५.१९.८

४—ब्रह्मणे ब्राह्मणं क्षत्राय राजन्यम्। —यजुर्वेद, ३०.५.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदिक साहित्य

श्री चन्द्रदीप शुक्ल
सम्पादक—'संस्कृत सम्मेलनम्'
पटना सिटी, पटना (बिहार)

वेद अपौरुषेय और विश्व के सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, इस विचार में विश्व के मनीषियों का मतैक्य है।

चारों वेदों के नाम सर्वविदित हैं, इनमें सामवेद और यजुर्वेद का ज्यादा सम्बन्ध तो यज्ञों से है। लेकिन ऋग्वेद और अथर्ववेद नाना दृष्टियों से बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। ऋग्वेद की ऋचाएं कब बनी थीं, इस विषय में नाना विज्ञजनों के नाना मत हैं। पर इतना निर्विवाद है कि ई० सन् से डेढ़ हजार वर्ष पहले ऋचाएं बन चुकी थीं। इनकी भाषा एक सी नहीं है, कहीं-कहीं उसमें अधिक प्राचीनता के चिह्न हैं और कहीं-कहीं अपेक्षाकृत कम प्राचीनता के। कुछ पण्डितों की राय में सामवेद और अथर्ववेद के अनेक मन्त्र ऋग्वेद से भी बहुत पुराने हैं। अथर्ववेद में ऐसे बहुत तरह के लोक प्रचलित टोटकों का संग्रह है, जो आश्चर्यजनक रूप से जर्मनी और पोलैण्ड में प्रचलित प्राचीन युग के टोटकों में से मिल जाते हैं। वेदों के जो भाष्य इस समय मिलते हैं, वे अपेक्षाकृत बहुत आधुनिक हैं।

विश्व-विश्रुत वेदभाष्यकार सायण और मध्य के प्रसिद्ध भाष्य चौदहवीं सदी में लिखे गए थे। बंगाल में 'नगद भाष्य' दसवीं सदी की रचना है। आलोचनात्मक दृष्टि से देखने वाले पण्डितों ने बताया है कि ये भाष्य अपेक्षाकृत आधुनिक परम्पराओं पर आश्रित हैं, इसीलिए कभी मन्त्रों के यथार्थ भाव को नहीं बताते। फिर भी जैसा कि मैक्समूलर ने कहा है—यह तो मानना ही पड़ेगा कि सायण का भाष्य अन्धे की लकड़ी है। यूरोपियन पण्डितों के सद् प्रयत्न से इन प्राचीन मन्त्रों के समझने के अनेक द्वार उद्घाटित हुए हैं। जेन्दावेस्ता के पाये जाने के बाद इस अध्ययन को और भी बल मिला है। इसके अतिरिक्त असीरिया, मिश्र और बैबीलोनिया में आविष्कृत प्राचीन भग्नावशेषों, पौराणिक-कथाओं तथा अन्यान्य बातों ने इस दिशा में बड़ी सहायता पहुंचाई है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदिक-साहित्य को पण्डितों ने तीन भागों में विभक्त किया है। (१) संहिता--जिसकी चर्चा ऊपर हो चुकी है। (२) ब्राह्मण और (३) उपनिषद्। ब्राह्मण गद्य में लिखे गए हैं, इनमें कर्मकाण्ड की ही प्रधानता है। कब और कैसे अग्नि प्रज्वलित करना चाहिए, कुश किधर और क्यों रखना चाहिए आदि यज्ञ-सम्बन्धी अनेक छोटी मोटी बातों का विवेचन इन में किया गया है, तथा जगह-जगह ऐतिहासिक और परम्परा-प्राप्त कहानियां भी हैं, जो बाद में चल कर पुराण और इतिहास का रूप धारण करती हैं। यह ध्यान देने की बात है कि ब्राह्मणों में सम्पूर्ण संहिता को प्रामाण्य रूप में स्वीकार कर लिया गया है अर्थात् संहिता और ब्राह्मण काल के भीतर काफी अन्तर विद्यमान था।

ब्राह्मणों ने जिस दृष्टि से सहिता को देखा है, वह यद्यपि कर्मकाण्ड प्रधान है। फिर भी उसमें व्याकरण,आयुर्वेद,दर्शन आदि का अस्पष्ट रूप विद्यमान है। ब्राह्मणों के अन्त में दार्शनिक अध्यायों के रूप में आरण्यक और उपनिषद् हैं, इनमें आध्यात्मिक बातों का बड़ा गम्भीर विवेचन किया गया है। भारतवर्ष के सभी दार्शनिक सम्प्रदाय (बौद्ध-जैन को छोड़कर) इन उपनिषदों में कहीं अपना अस्तित्व स्वीकार करते हैं। प्रधान ब्राह्मण ये हैं—ऐतरेय और शाङ्खायन (ऋग्वेद के), तैत्तरीय(कृष्ण यजुर्वेद)का, शतपथ (शुक्ल यजुर्वेद)का, ताण्ड्य याप ञ्चविंश (सामवेद)का और गोपथ (अथर्ववेद) का। जैसा कि पहले बताया गया है, ब्राह्मणों के अन्त में आरण्यक हैं,और आरण्यकों के अन्त में उपनिषद्। उपनिषदों की संख्या ऐसे तो बहुत अधिक है, पर ग्यारह प्राचीन हैं, ऐत-रेय और कौशीतकी (ऋग्वेद) के, छान्दोग्य और केन (सामवेद) के, तैत्तरीय,कण और श्वेताश्वतर (कृष्ण–यजुर्वेद) के बृहदारण्यक, और ईश (शुक्लयजुर्वेद) के, प्रश्न, मुण्डक तथा माण्डुक्य–(अथर्ववेद) के।

इसतरह कालक्रम से वैदिक साहित्य का विस्तार होने लगा। वेद और वेदाङ्ग की वैज्ञानिक छान-बीन भी आरम्भ होने लगी। वेदाङ्ग युग में इन्हीं प्रयत्नों का संग्रह हुआ। उन दिनों पढ़ने–पढ़ाने के लिए कण्ठस्थ करना निहायत जरूरी था,इसीलिए इस युग में सूत्र रूप से बातें लिखी गयी। उद्देश्य यह था कि थोड़े में बहुत याद कर लिया जाय। वेदाङ्ग–साहित्य, सूत्रों में लिखा गया है। कहीं-कहीं ये सूत्र पद्य में भी हैं। पर अधिकतर गद्य में ही पाए जाते हैं। वैदिक मन्त्र स्वतःप्रमाण माने जाते हैं। आगे चल कर यह साहित्य मनुष्य-कृत माना जाने लगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिक्षा में उच्चारण की विधियों का निर्देश होता है, इस अंग पर अनेक ग्रन्थ लिखे गये थे। जो दुर्भाग्यवश अधिकतर लुप्त हो गये हैं। कल्प-सूत्र तीन तरह के हैं। (१) श्रौत सूत्र, (२) धर्म सूत्र और (३) गृह्य सूत्र। श्रौत सूत्रों में वैदिक यज्ञों का विधान किया गया है। इन सूत्रों को आश्रित करके रचित बहुत थोड़ा साहित्य प्राप्त हुआ है। धर्म सूत्रों में ब्राह्मण के नित्य और नैमित्तिक कर्म का विधान है। छठी शताब्दी से लेकर बारहवीं सदी तक इन सूत्रों को आश्रित करके एक विशाल साहित्य का निर्माण हुआ है। बाद की बनी स्मृतियों, टीकाओं, भाष्यों और निबन्धों में इस साहित्य का प्रचुर प्रसार हुआ है। स्मृतियाँ, धर्मसूत्र, श्रौत और गृह्य सूत्रों में द्विज के संस्कारों और अन्यान्य कर्मों का विधान है। उस युग के सामाजिक आदर्श और परिस्थिति का अध्ययन करने की दृष्टि से इन सूत्रों का बड़ा महत्त्व है। इन तीन प्रकार के सूत्रों के बाद एक चौथे प्रकार का सूत्र है, जो सीधे श्रौत सूत्र से सम्बद्ध है। इसे शुल्वसूत्र कहते हैं। इसमें यज्ञ-विधियों का वर्णन है। भारतीय-पण्डितों का दावा है कि शुल्वसूत्रों में रेखागणित सम्बन्धी नियमों का वैज्ञानिक व्यवहार संसार में सबसे पहले हुआ था।

निरुक्त वैदिक-निघण्टु के रूप में सम्भवतः ईसा से छः सौ वर्ष पहले ही लिखा गया था, इसमें वैदिक शब्दों की निरुक्ति बताई गई है। कौन सा शब्द क्यों, किस विशेष अथ में व्यवहृत हुआ है, यह समझाई गई है। आधुनिक भाषाशास्त्री इन सभी निरुक्तियों से सहमत नहीं होते, पर वे यह स्वीकार करते हैं कि वेदों को समझने के लिए निरुक्ति अत्यावश्यक है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान देने की बात है कि वैदिक-विद्वानों ने ईसवी सन् से बहुत पूर्व कोष-ग्रन्थ लिखे थे, इन कोषों में विषयानुसार एकार्थक शब्दों का सग्रह रहता था। संसार के किसी जाति ने इतन पुराने जमाने में कोष नहीं लिखे थे। आयुर्वेदिक वनस्पति के अर्थ और गुण के निदर्शक निघण्टुओं का वर्गीकरण आज भी विज्ञान-सम्मत समझा जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदिक परिवहन व्यवस्था

—डॉ० भारतभूषण, विद्यालङ्कार
रीडर–वेद विभाग,
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय (हरिद्वार)

राष्ट्र की प्रगति उसकी परिवहन व्यवस्था से जानी जा सकती है। प्राचीन आर्यों की संस्कृति का इस दृष्टिकोण से मूल्याङ्कन महत्त्वपूर्ण है। यातायात की आवश्यकता वाणिज्य भ्रमण, युद्ध इत्यादि के लिए बहुत महत्त्व-पूर्ण थी। इसी से शीघ्र, सुरक्षित, सर्वत्र गति एवं भार-वहन की आवश्यकता के अनुसार यातायात के साधनों का विकास किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि वायुयान का प्रयोग उस समय होता था, क्योंकि अधिक दूर वाणिज्य-कार्य के लिए स्थल मार्ग कष्ट कारक था। इसलिए द्यु और पृथ्वी के मध्य भी आवागमन क लिए अन्तरिक्ष में आकाश के बृहत् क्षेत्र का प्रयोग होता था, इसी में भाज्यादि पदार्थों की भी पर्याप्त सुविधाएं थीं[1]।

इस प्रकार से मनुस्मृति भी विमान इत्यादि की ओर स्पष्ट कथन करती है[2]। बाल्मीकि रामायण में पुष्पक के अतिरिक्त भी अन्य विमानों का वर्णन प्राप्त होता है। रामायण में कहा है- "प्रासादाग्रे, विमानेर्वा वैहायसगतेन वा"। पक्षी की गति वाले विमान का वर्णन, मनुस्मृति के "वैमानिक गणाः" इसी शब्द को स्पष्ट द्योतित करता है। इसके अतिरिक्त रामायण के सुन्दरकाण्ड के[3] सर्ग आठ में अनेकों विमानों एवं उनके निर्माणस्थल का वर्णन भी प्राप्त होता है। आज के वैज्ञानिकयुग की भांति उस समय भी बिना चालक के विमानों का वर्णन प्राप्त होता है, रावण का पुष्पक विमान मन के संकल्प से ह अपने स्थान पर पहुँच जाता था[4]। वह स्वामी के मन का अनुसरण करते हुए बड़ी शीघ्रता से चलने वाले सामान्य-जनों के लिए दुर्लभ और वायुवेग से बढ़ने वाला था[5]।

जलीय मार्गों का प्रयोग तो बहुतायत से होता है, ऐसे वर्णन भी प्राप्त हैं; जिनसे अन्तरिक्ष में पक्षी की भांति उड़ने तथा सागर में गति करने के लिए

१-अर्थर्ववेद-३/१५/२०, २-मनुस्मृति १२/४८, ३-रामायण-अयो० का०-२७/६
४–वा० रामायण सु० का०–८/४, ५–वा०रा०सु०का०–८/५,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक ही नौका[1] का प्रयोग होता है। नाव का प्रयोग सामान्य जन भी जानते एवं करते हैं। समुद्र को पार करने या दूर तक नौका द्वारा जाने का वर्णन[2] भी अनेकत्र मिलता है।

नौका के अतिरिक्त जहाजों का वर्णन भी प्राप्त होता है जो कि सैकड़ों चप्पुओं से चलते थे। ये जहाज समुद्र को पार करने के लिए बनाये जाते थे[3]। छोटी नौकाएं "प्लव" कही जाती थीं[4]। डा० बलदेव उपाध्याय के अनुसार वैदिक युग में भी जलयान के द्वारा सामुद्रिक व्यापार का निर्देश मिलता है। पिछले युग के साहित्य में बड़े-बड़े व्यापारी जहाजों, पोत, क्रीड़ा-नौका आदि अनेक प्रकार के जलयानों का वर्णन मिलता है। इससे स्पष्ट है कि ऋग्वेद-युग में आर्य समुद्र से पूर्णतया परिचित थे। बड़ी-बड़ी नौकाओं को बनाकर उस युग के लोग समुद्री व्यापार करने में प्रवीण थे।

ऋग्वेद और वाजसनेयि संहिता में सौ चप्पुओं से चलाये जाने वाले जहाजों का भी उल्लेख है। पतवार (चप्पू) को 'अरित्र' तथा नाविक को 'अरितृ' कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण में पतवार के लिए 'मण्ड' और परवर्ती-साहित्य में 'कर्ण' शब्द का प्रयोग किया गया है। जलमार्ग वाणिज्य के लिए बहुत ही सस्ता एवं अधिक दूरी तक जाने का सुरक्षित माध्यम रहा है। वैदिक काल के पणि उस समय के प्रसिद्ध व्यापारी एव नाविक थे। वेदों में "पणिनेव गाव:" कहकर इस ओर संकेत भी किया गया है। आचार्य यास्क ने पणि शब्द से ही पण्य आदि शब्द बनाये। वही पणि शब्द आगामी साहित्य में बाजार के लिये प्रयुक्त होता रहा है। इसी विषय में "पणिर्वणिक् भवति" कहकर इनकी व्यापारिक बुद्धि की ओर सकेत किया है। इसी व्यापारिक प्रवृत्ति ने इन्हें "बेकनाट" का सम्बोधन दे दिया- "द्वैकनम् अटनं येषां ते" अर्थात् जो धन दुगुना करने के लिये ही घूमते हैं।

आर्यों ने इन पणियों की लोभ-प्रवृत्ति को देखते हुए इनको राष्ट्र से निष्कासित भी किया था, इसके बाद ये समुद्र मार्ग से आगे बढ़ गये और इन्होंने सर्वप्रथम फिनीशिया को बसाया और कालान्तर में वहाँ से आगे बढ़ गये। ये फिनीशियन्स ही यूरोप के सबसे पहले सफल तथा साहसी नाविक माने गये।

१-ऋग्वेद-१/२५/७, २-ऋ०-१/९७/७-८, १/९९/१
४-अथर्व-१९/५०/३. ३-ऋ०-१/४६/८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यातायात का श्रेष्ठ एवं मुख्य साधन रथ है, जैसा कि यास्क मुनि भी कहते हैं[1]। इसी से स्पष्ट है कि स्थलीय मार्गों एवं वाहनों का पर्याप्त विकास उस काल में हो चुका था। 'रथ' ही नहीं घोड़े, ऊंट, हाथी इत्यादि यातायात में सहायक होते थे। तीव्रगामी रथों के साथ भारवाहक शकटों का भी व्यवहार होता था, जिन्हें 'अनः' कहा जाता था। तीव्र वाहनों तथा अनः के लिये भी बहुत से मार्ग थे[2]। यह यातायात युद्ध-कार्यों का भी प्रधान-साधन समझा जाता था। उसके बनाने की विधियाँ हमें स्थान-स्थान पर मिलती हैं। प्रायः रथ लकड़ी के बनते थे और ऊपर से चमड़ा लगा कर मजबूत बनाये जाते थे[3]। रथ चक्र, अक्ष एवं नेमि की दृढ़ता विशेष ध्यान देने योग्य होती थी[4]। दो प्रकार के अक्ष होते हैं-एक वे जिनमें अक्ष स्थिर रहता है और केवल पहिये ही घूमते हैं, सम्भवतः ये शकट आदि में प्रयुक्त होते हैं। दूसरे वे जिनमें पहिये के साथ अक्ष भी घूमता है[5]। ये तीव्र गति वाले रथ रहे होंगे। उस तीव्र गति को संयमित करने के लिए सुन्दर एवं मजबूत लगाम भी आवश्यक है[6]। यह लगाम की ही महिमा है कि रथ में बैठा सारथी जहाँ चाहता है घोड़े को वहीं ले जाता है[7]। रथ शब्द स्वयं ही तीव्र गति का बोधक है, यास्क मुनि ने 'रथ' शब्द की निरुक्ति करते हुए कहा है—"रथ रंहतेर्गतिकर्मणः, स्थिरतेर्वा स्याद् विपरीतस्य, रममाणोऽस्मिंस्तिष्ठतीति वा, रेपतेर्वा सरतेर्वा" (निरुक्त—९/२) अर्थात् जो तीव्र गति युक्त हो, स्थिरता के विपरीत गतियुक्त हो, जिसमें आनन्दपूर्वक बैठा जाये या जो शब्द करता चलता है। अतः रथ दूर तक तीव्र गति से जाने के लिए तथा अनस या शकट भारवहन के कार्य में प्रयुक्त किये जाते हैं[8]। तीव्र गति वाले वाहन को सुखमय बनाने के लिए ही उनका रास्ता भी समतल करना आवश्यक है। इसलिए रथ के पहियों को चलाने के लिए छोटे मोटे पर्वतों को तोड़कर मार्ग बनाये जाते हैं[9]। कभी-कभी रथ या अनस टूट भी जाते हैं, उनकी मरम्मत भी आवश्यक होती है। मरम्मत के बाद फिर से उन्हें नया कर दिया जाता है[10]। रथ की कहाँ तक प्रशंसा की जाये स्वयं देव भी रथ की कामना करते हैं[11]। रथ में घोड़े जोड़े जाते हैं[12]।

---

1 रथोऽपि गर्त उच्यते, गृणातेः स्तुतिकर्मणः स्तुततमं यानम्। निरुक्त-३/१.,
2 ऋग्वेद-८/९१८, 3 ऋग्वेद-६/४६/२७,
4 ऋग्वेद—१/१३८/१२, 5 ऋग्वेद—१/३०/१४,
6 ऋ०—१/१३८/१२, 7 ऋ०—६/७५६,
8 ऋ०—३/३३/१०, 9 ऋ०—५/५२/९, निरुक्त-५/१/२५,
10 ऋ०—१०/३९/४, 11 ऋ०—९/३/५. 12 ऋ०—१/३८/१२

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिनकी संख्या एक से चार या सात तक भी होती है, एक घोड़े से चलने वाला रथ "कर्णी" रथ कहा जाता है। रथों का भेद उनके वाहन, पशु रथाङ्ग के आधार पर किया जाता है। अतः वृषरथ, षडश्व, पंचवाही आदि रथ मार्गों के आधार पर त्रिबन्धुर, अष्टाबन्धुर, सप्तचक्र, त्रिचक्र, हिरण्य-चक्र, हिरण्य प्रउग[1] आदि माम प्राप्त होते हैं।

रथियों का युद्ध तथा उत्सव में प्रमुख स्थान है। उस युग में रथ की निर्माण-प्रक्रिया की भी पर्याप्त चर्चा हुई है। रथ प्रायः लकड़ी के बनते थे, और अक्ष प्रायः "अरटु" की लकड़ी का पसन्द किया जाता था। अक्ष तथा युग (जूआ) "ईषादण्ड" कहा जाता था। युग (जूए) से बैल इधर-उधर न हों, इसके लिए एक-एक छोटी लकड़ी "शम्या" जूए के दोनों सिरों पर छेद करके डाल दी जाती थी। 'ईषा' और 'जूए' को "योक्त्रक" से बांधा जाता था और एक छेद "तर्दमन्" में फँसा दिया जाता था। जूए से आगे निकला हुआ "ईषादण्ड" "प्रउग" था। विभिन्न अरों से बने चक्र (पहिये) में 'नेमि' को 'पवि' के समान मजबूत बनाया जाता था। गाड़ी के नीचे लटकने वाली लकड़ी को "कस्तम्भी" या "अपालम्भ" कहते थे।

एक वाहन जो भार लादने में प्रयोग होता था, वह "शकट" है। 'शकट' का निर्वचन कर यास्क कहते हैं— "इस पर गोबर लगा रहता है, यह धीरे चलता है, यह शब्द करते हुए चलता है[2]। इसकी स्थिति वर्तमान बैलगाड़ी की है। इसमें बैल जोड़े जाते थे। उनकी संख्या दो से ज्यादा भी हो सकती थी। बैल भारवाही पसन्द किये जाते थे[3]। इसी का एक नाम अनस भी है। यास्क ने इन दोनों की एकता बताते हुए कहा है—"अनस इव शकटादिव। अनः शकटम् आनद्धमस्मिश्चीवरम्। नितेर्वास्याज्जीवनकर्मणः" (निरुक्त—११/४/३४) अर्थात् अनस शकट का नाम है, इसमें पुराने कपड़े बँधे रहते थे। इसे लोग जीविका का साधन भी बनाते थे। शकट तथा रथ का आकार लगभग एक सा होता था। विवाह आदि के समय गाड़ियों को आच्छादित करने की भी परम्परा थी[4]।

(1.) वैदिक साहित्य और संस्कृति, बलदेव उपाध्याय-परिच्छेद १३

(2.) शकटं शकृदितं भवति शनकैस्तकतीति वा शब्देन तकतीति वा ॥
निरुक्त—६/४/६४

(3.) यजु०—२२/२२, (4.) अथर्व०—१४/१/१०.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रथ एवं गाड़ी के अतिरिक्त पशु भी यातायात में प्रयोग किये जाते थे, बैल प्राय: गाड़ी में तथा अश्व रथ में जोड़े जाते थे। घोड़े सवारो के भी काम में लिए जाते थे। मुख में लगाम लगाकर उसे कमर, कक्षा (बगल) एव गरदन में बाँधकर उस पर बैठते थे। चाबुक का इशारा पाते ही यह घोड़ा चल पड़ता था और टेढ़े-मेढ़े रास्तों को लाँघ जाता था[1]। जाने के लिए तीव्र गति वाले अलंकृत सैकड़ों घोड़ों का वर्णन भी प्राप्त होता है[2]। अच्छे घोड़ों की पहचान की जाती थी[3]। उनकी गति उसका आधार बनती थी, इसलिए कहा गया है कि—"गधों को घोड़ों के आगे कभी नहीं जोड़ा जाता है[4]।

ऊँट भी यातायात में प्रमुखता रखता है, परन्तु घोड़े या बैल जितनी नहीं। ऊँट गाड़ी में तथा पीठ पर भार ढोने दोनों ही रूप में काम आता है। एक स्थान पर बीस ऊँटों की गाड़ी का वर्णन भी प्राप्त होता है[5]। पीठ पर उनसे बोझ ढोया जाता है[6]।

हाथियों को शिक्षित करने वाले हस्तिपाल (महावत), वेगयुक्त कार्यों को करने के लिए घोड़े पालने वालों का भी वर्णन है[7]। रथ आदि के निर्माण में कौशल प्रदर्शित करने वाले शिल्पियों, धैर्य पूर्वक लकड़ी के काम की बारीकियों को उकेरने वाले तथा लकड़ी के रूप एवं गुणों से परिचित तक्षा (बढ़ई) तथा रथकारोंकी अनेकत्र चर्चा है। ये कर्मकार समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे, जैसा कि यजुर्वेद—३०/७ में कहा है — "मैधायै रथकारं धैर्याय तक्षाणम्।"

इस प्रकार यातायात का पूर्ण एवं सुन्दर प्रबन्ध वेदों में उपलब्ध है। मार्गों की रक्षा के लिए रक्षक पुरुष नियुक्त किये जाते हैं, उनके प्रति नम्र एवं आदर का भाव होता है[8]। रक्षक आयुध भी धारण करते हैं और समूहों में रहकर मार्गों की रक्षा भी करते हैं[9]।

---

(1) ऋ०—४/४०/४. (2) ऋ०—६/७२/२. (3) ऋ०—१/२७/१. (4) ऋ०—३/५३/२३. (5) अथर्व०—२०/१२७/२. (6) यजु०—१८/२७ (7) यजु०—३०/११ (8) यजु०—१६/१७ (9) यजु०—१६/६०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदों का वर्ण्य विषय

—श्री पं० हरिसिंह त्यागी
विद्याभास्कर, एम०ए०, साहित्याचार्य
गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर

परमात्मा से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद प्रकट हुए हैं। वेद ही आर्यों के सर्वोत्कृष्ट धर्मग्रन्थ हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के दस नियमों में तीसरा नियम वेदों के विषय में निर्मित किया जो कि 'आप्तोपदेशः शब्दः' इस शब्दप्रमाण के अनुसार प्रामाण्य है—'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" वेद (ज्ञान) नित्य और अक्षय्य है।' ज्ञानार्थक विद्ज्ञाने' इस धातु से वेद शब्द सिद्ध हुआ है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है, यह भी वेद के ही प्रमाणों से पूर्णतः सिद्ध है। क्योंकि वद स्वतःप्रमाण हैं। जिस प्रकार सूर्य को देखने के लिए किसी अन्य प्रकाश की आवश्यकता नहीं है, उसीप्रकार वेदों का प्रामाण्य भी वेदों से ही सिद्ध है। अग्नि, वायु, आदित्य अङ्गिरा इन चार ऋषियों पर परमात्मा ने यह ज्ञान प्रकट किया। प्रमाण- "सः पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्" योगसूत्र, अर्थात् वह परमात्मा ही पूर्व ऋषियों का गुरु था, जिसका कि काल के द्वारा विनाश नहीं होता, अतः उसके द्वारा प्रदत्त ज्ञान भी विनाश रहित होने से नित्य है। अथर्ववेद के निम्न-लिखित मन्त्र से यही सिद्ध हो रहा है-**यस्मादृचोऽपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्अपा सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम्। स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विद्देव सः॥'** अथर्ववेद १० प्रपाठक २३ अनुवाक ४ मन्त्र २० मन्त्रार्थ से सिद्ध है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जो उक्त ऋषियों पर प्रकट हुआ। प्रमाण -

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थं ऋग्यजुसामलक्षणम्॥

मनुस्मृति में—मनु जी ने वेदों को अखिल धर्म का मूल कहा है "वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" (मनु अध्याय २) अर्थात् वेद ही सम्पूर्ण धर्म का मूल है। वेदों से ही मानव मात्र को उत्कृष्ट भाव पूर्ण विचार प्राप्त हुए "सर्वं वेदात् प्रसिध्यति" (मनुस्मृति)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वप्रथम वेद श्रुति रूप में ही आर्यावर्त में प्रचलित थे। कर्ण परम्परा से ऋषियों एवं विद्वानों ने उन्हें सुरक्षित रखने का पूर्ण प्रयास किया था। ऋषिजन ही मन्त्रों का अवलाकन करके उनके तथ्यपूर्ण तत्त्वों पर विचार करके जनता के समक्ष प्रस्तुत करते थे, इसोलिए कहा है– 'ऋषिः कस्मात् ? ऋषिः दर्शनात्'।

निरुक्त की इस व्युत्पत्ति के अनुसार – 'ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः' अर्थात् निरुक्त उन्हें ऋषि संज्ञा प्रदान को जाती थी।

ऋग्वेद - वैदिकसाहित्य की समस्त रचनाओं में यह संहिता सबसे अधिक प्राचीन है और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भी है। इसमें १० मण्डल तथा १०२८ सूक्त हैं। इन्द्रादि देवताओं के वर्णन से विदेशीय विद्वान् इन्हें इतिहास परक मानते हैं किन्तु इन्द्र और वृत्रासुर के युद्ध से जो ऐतिहासिकता प्रतीत होती है, वह अपनी वास्तविकता में इस प्रकार समझनी चाहिए - इन्द्र, तडित, झंझावात और वर्षा का देवता माना जाता है। वह उन पर्वताकार मेघों का जिनमें जल ही जल होता है, वृत्रासुर के रूप में प्रतीत होते हैं। इन्द्र अपने तड़ित रूपी वज्र द्वारा मेघ रूपी वृत्रासुर का वध करता है अर्थात् बादल फट जाता है और मानों रुधिर वर्षा रूप में पृथ्वो पर बहने लगता है।

इसीप्रकार अन्य रूपकों पर भी विचार किया जा सकता है। महर्षि दयानन्द जी ने देवतापरक जितने भी नाम हैं, वे सब ईश्वर के ही हैं, व्युत्पत्ति पूर्वक सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास में सिद्ध किये हैं। मन्त्रों को ऋचायें कहते हैं। इसलिए यह वेद **ऋग्वेद** के नाम से प्रचलित है।

यजुर्वेद-यजुषों का संग्रह है, जिसमें याज्ञिकविधियों का ज्ञान है। इसमें चालीस अध्याय कृष्ण यजुर्वेद तथा शुक्ल यजुर्वेद के नाम से प्रचलित हैं।

सामवेद- साम गीतों का संग्रह है। इसके दो प्रधान भाग हैं। आर्चिक तथा गान। इस वेद से स्वर माधुर्य का ज्ञान प्राप्त होता है।

अथर्ववेद – यह चतुर्थ वेद अङ्गिरा ऋषि पर प्रकट हुआ, इसमें विशेष रूप से आयुर्वेद विषयक ज्ञान प्राप्त होता है।

उक्त चारों ही वेद ज्ञानकाण्ड, कर्मकाण्ड और उपासनाकाण्ड की महत्ता के कारण वेदत्रयी नाम से कहे जाते हैं। वेदों से मानवों को विधि एवं निषेधात्मक उपलब्धियां होती हैं। ईश्वर प्राप्तिही वेद का वर्ण्यविषय है।उस ईश्वर का स्वरूप क्या है–स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरमित्यादि।(यजुर्वेद)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय, ४० मन्त्र ८) इस मन्त्र में ईश्वर के अनेक गुणों का वर्णन है। विशेष उल्लेखनीय उसका सम्पूर्ण शरीर बन्धनों से रहित होना है। ऐसा ही स्वरूप आत्मा भी प्राप्त करने का प्रयास करे जैसा कि निम्न मन्त्र से प्रकट है - **"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमित्यादि"** (यजुर्वेद का ३१ वां अध्याय १८ वां मन्त्र। भावार्थ— मैं इस अज्ञानान्धकार से रहित आदित्य के समान तेजस्वी महान् पुरुष को जानूं। उसे ही जान कर जन्ममरण के बन्धन से रहित होकर जीवात्मा मुक्ति को प्राप्त होता है। उसको जाने बिना मोक्ष प्राप्ति का दूसरा मार्ग नहीं है। चारों वर्णों का वर्णन भी संकेत द्वारा वेदों से प्राप्त होता है। प्रश्नोत्तर के रूप में - "यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते" (यजुर्वेद ३१ वाँ अध्याय १० वां मन्त्र) अर्थात् जिस पुरुष का वर्णन किया गया है, उसका मुख क्या है ? भुजायें क्या हैं और उरु तथा पैर कौन से हैं ? इसके उत्तर मे दूसरा मन्त्र प्रस्तुत है। ब्राह्मणोऽस्य मुखमासो बाहूः राजन्यः कृतः। ऊरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ।। यजुर्वेद ३१ वां अध्याय ११ वां मन्त्र। अर्थात् - पुरुष का मुख ब्राह्मण रूप हैं। भुजायें क्षत्रिय रूप हैं तथा पैर शूद्र रूप हैं। पुरुष के उक्त अङ्गों मे मुख से लेकर पैरों तक क्रमशः चारों वर्ण समाहित हैं। ठीक इसी प्रकार मानव समाज में भो ब्राह्मण वर्ण मुख्य है। भुजाओं का कार्य शरीर की रक्षा करना' है। इसी प्रकार क्षत्रिय वर्ण भी मानव समाज की रक्षा करता है। उदर से लेकर उरु तक वैश्य का तथा पैरों के समान शूद्र का कार्य सेवा करना है। ये चारों वर्ण एक दूसरे की सहायता करते हुए ही पुरुष शरीर के समान कार्य क्षेत्र में सफल हो सकते हैं, अतः वेदों स ही वर्ण विभाग का पाठ मानव जाति को मिला। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि संस्कार पर्यन्त सोलह संस्कारों की पूरी विधियाँ वेदों से ही प्राप्त होतो हैं। यथा नामकरण संस्कार में यजुर्वेद का अधोलिखित मन्त्र कितना महत्त्वपूर्ण है। "कोऽसि कतमोऽसि कस्यासि को नामासि। यस्य ते नामामन्महि यं त्वा सोमेनातीतृपाम। भूर्भुवःस्वः सुप्रजा प्रजाभिः स्याँसुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः' (यजुर्वेद ७ वां अध्याय २९ वाँ मन्त्र) इस मन्त्र के द्वारा पुत्र को उत्तमोत्तम गुण प्राप्त होने की माता पिता द्वारा शुभकामना की गई है। "संगच्छध्वमादि (ऋग्वेदसंगठन सूक्त १० मण्डल १९१ सूक्त मन्त्र २) मन्त्रों द्वारा हमे संगठन एवं एकता की शिक्षा पूर्ण रूप से मिलती है। "मूर्धाऽहं रयीणां मूर्धा समानानां भूयासम्" अथर्ववेद १६-३-१। इस वैदिकसूक्ति द्वारा धनों का सर्वोच्च स्वामी एवं अपने समान जनों में मूर्धन्य बनूँ। इसी प्रकार वदों में मानव मूल्यों का महत्त्वपूर्ण विषय वर्णित है।

★

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदिक-वाङ्मय के प्रसार में
गुरुकुल ज्वालापुर का योगदान

—श्री केशवप्रसाद उपाध्याय
एम्० ए०. साहित्याचार्य
गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर (हरिद्वार)

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार) उत्तर भारत के उन प्रसिद्ध तीर्थस्थलों में से एक है, जहाँ वैदिक-ज्ञान-गंगा निरन्तर प्रवाहित हो रही है। इस वैदिक-ज्ञान-गंगा को प्रवाहित करने का श्रेय इसके संस्थापक वीतराग स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती को जाता है, जो स्वयं एक विशिष्ट वैदिक विद्वान् थे। जिनके सद् प्रयत्नों के फलस्वरूप इस वैदिक-ज्ञान-गंगा के पवित्र जल का पान करने के लिए देश के ही नहीं, विदेश के भी वैदिक-ज्ञान-पिपासु यहाँ आकर अपने आपको धन्यभाग्य समझते हैं।

तीन छात्र एवं तीन चवन्नियों की मूल सम्पत्ति से प्रारम्भ हुए गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के पास आज लगभग ३५० बीघा भूमि, लाखों की सम्पत्ति के भव्य भवन, ज्ञान-गंगा को प्रवाहित करने वाले विभिन्न विभाग और अनुसन्धान संस्थान कार्य कर रहे हैं। यहां भारतीय ज्ञान–विज्ञान अनुसन्धान संस्थान के माध्यम से वैदिक साहित्य पर शोध का कार्य प्रगति पर है। शोध–विभाग के **"पद्मसिंह अनुसन्धान भवन"** का शिलान्यास **भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री श्री पं०जवाहरलाल नेहरु** के करकमलों से हुआ था। इस समय केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय की सहायता से **'शास्त्र-चूड़ामणि'** उपाधि हेतु वैदिक-साहित्य में अनुसन्धान-कार्य प्रगति-पथ पर अग्रसर है। गुरुकुल के सम्पूर्णानन्द–संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध विभाग में साहित्य, व्याकरण और वेदान्त के साथ-साथ वेद–नरुक्त विषय में भी आचार्य (स्नातकोत्तर) पाठ्यक्रम की मान्यता है। संस्था के स्नातक—पाठ्यक्रम **'विद्याभास्कर'** में प्राच्य, पाश्चात्य दोनों दृष्टियों से वैदिक साहित्य के तुलनात्मक अध्यापन का सुप्रबन्ध है, जिससे छात्र स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम उत्तीर्ण कर शोध की आधुनिक एवं प्राच्य सरणि का गहन अध्ययन कर सकें। इतना ही नहीं संस्था का एक **"प्रकाश-वीरशास्त्री उपदेशक महाविद्यालय"** भी है, जिसके माध्यम से वैदिक-ज्ञान के आलोक को जनमानस तक पहुँचाने के लिए स्नातक प्रशिक्षित किए जाते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। ये दीक्षित स्नातक देश-विदेश में वैदिक ज्ञान के गूढ़तम रहस्यों को जन साधारण तक पहुँचाने का सफल प्रयत्न करते हैं। विशिष्ट वैदिक-विद्वानों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जारहा है—

श्री स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती

गुरुकुल-महाविद्यालय ज्वालापुर के संस्थापक एवं इस युग में गुरुकुल-पद्धति के आद्य-प्रवर्तक, वैदिकसाहित्य के समाराधक, नि:स्वार्थ वैदिक-सिद्धान्तों के सेवक, वीतराग श्री स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती ने पं० कृपाराम के रूप में अपनी पैतृक–सम्पत्ति का परित्याग कर संस्कृत के दुर्लभ ग्रन्थों (विशेष-कर वैदिक–साहित्य) का प्रकाशन नि:स्वार्थ भाव से किया। इतना ही नहीं, संन्यास की दीक्षा के अनन्तर आपने वैदिक–साहित्य के पठन-पाठन की सव्यवस्था के लिए अपने जीवन काल में ५ गुरुकुलों की स्थापना की। आपने उपनिषदों का भाष्य 'उपनिषद्-प्रकाश' के माध्यम से प्रकाशित किया। आपने षड्दर्शनों के सुबोध–भाष्य भी लिखे। "आर्यसिद्धान्त मुक्तावली" के नाम से वैदिक विवेचनात्मक–लेखों का संग्रह कर उन्हें प्रकाशित कराया। वैदिक साहित्य की समृद्धि एवं उसके प्रचार–प्रसार के लिए सैकड़ों ट्रैक्ट आपने लिखे, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं :—

१– वेदों का महत्त्व
२– वेदों की आवश्यकता
३– वेद किस पर प्रकट हुए ?
४– वेद का विषय
५– वेद और पुनर्जन्मवाद
६– वैदिक धर्म
७– कुरान की जान वेद का एक मन्त्र है।
८– क्या वेदों को पढ़ने का अधिकार सबको नहीं ?
९– ईश्वर विचार
१०– ईश्वरकर्तृत्व-समीक्षा
११– वेद और इस्लाम
१२– कर्म–व्यवस्था
१३– वर्णव्यवस्था
१४– वैदिक साहित्य और श्राद्ध

श्री स्वामी शुद्धबोध तीर्थ

आपका संन्यास से पूर्व का नाम श्री आचार्य गंगादत्त था। आप वेदों के साथ-साथ व्याकरण के सूर्य थे। आपके शिष्यों की एक लम्बी श्रृंखला है। आपने गुरुकुल कांगडी एवं गुरुकुल ज्वालापुर में वर्षों तक व्याकरण के साथ-साथ वेदों का अध्यापन किया। आपका यह मन्तव्य था कि वेदार्थ के ज्ञान के लिए व्याकरण का उत्तम ज्ञान अपेक्षित है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री पं० भीमसेन शर्मा

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती के वैदिक-वाङ्मय की सेवा को कार्यरूप देने में आपको बहुत बड़ा हाथ है। आप संन्यासका दीक्षा के अनन्तर स्वामी भास्करानन्द सरस्वतो नाम से प्रसिद्ध हुए। आपने वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर के मॅनेजर के रूप में वैदिक-साहित्य के प्रकाशनमें महत्त्वपूर्ण योगदान किया। १९०० ई० में अजमेर से गुरुकुल सिकन्दराबाद आ गए। कई वर्षों तक वेद का अध्यापन कराया। तदनन्तर बुलन्दशहर की वैदिक संस्कृत पाठशाला में मुख्याध्यापक रहते हुए वेद का अध्यापन किया। गुरुकुल ज्वालापुर में रहते हुए "आर्य सूक्ति-सुधा" का प्रणयन एवं संस्कार-चन्द्रिका (संस्कार विधि को व्याख्या) का लेखन-कार्य बड़े मनोयोग के साथ किया।

श्री पं०नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ'

आपका नाम नरसिंह राव था। आचार्य शुद्धबोध तीर्थ ने आप का नाम नरदेव कर दिया। ऋग्वेदमें तीर्थ-परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् वेदतीर्थ लिखने लगे। आपकी प्रसिद्धि 'राव जी' के रूप मे विशेष थी। अजमेर में रह कर आपने वैदिक-साहित्य के पाठ-सशोधन एवं उनके प्रकाशन का कार्य किया। वेदों के विश्रुत-विद्वान् श्री पं० सत्यव्रत सामश्रमी से आपने वैदिक-वाङ्मय का विशेष अध्ययन किया। स्वामी दयानन्द सरस्वतीके साथ हुए काशी के पण्डितों के शास्त्रार्थ की मध्यस्थता इनके गुरु श्री सत्यव्रत सामश्रमी ने की थी। श्रीराव जी की विद्वत्ता से प्रभावित होकर शारदापीठ के शंकराचार्यने 'वेद-वेदाङ्ग-केसरी' एवं ऋषिकुल(हरिद्वार)की पण्डित-मण्डली ने'भारती-भूषण'को उपाधियां ससम्मान प्रदान की थीं। आप गुरुकुल काँगड़ी में भी वेदाध्यापक रहे। १९१३ ई० से आपने गुरुकुल महाविद्यालय में तीन वर्षों तक वेद का अध्यापन कराया। तदनन्तर आचाय, मुख्याधिष्ठाता, कुलपति के रूप में आजीवन सम्बद्ध रहें। आप दो बार उत्तरप्रदेश विधानसभा के सदस्य भी रहे। आपने १५ से अधिक वैदिक ग्रन्थों का प्रणयन किया है। जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं -

१- **ऋग्वेदालोचन** -यह ग्रन्थ ३२५ पृष्ठों का है, जिसे शान्तिप्रेस, आगरा ने प्रकाशित किया।

२- **यज्ञ में पशुवध वेद-विरुद्ध**-यह ४० पृष्ठों की पुस्तिका है, जिसे आपने हिन्दी एवं संस्कृत भाषा के माध्यम से यज्ञ में पशुवध को वेद-विरुद्ध सिद्ध किया है। इसका प्रकाशन देहरादून से हुआ है।

३- **पत्र-पुष्प**–इस पुस्तक में राव जी महाराज के १०० लेखों का संग्रह किया गया है। जिनमें अधिकांश वेद–विषयक हैं। इसका प्रकाशन भारती–भवन अलीगढ़ से हुआ है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डा० सूर्यकान्त शास्त्री

गुरुकुल म० वि० के सुयोग्य वैदिक-विद्वानों में अग्रगण्य थे। विद्याभास्कर में वेद में सर्वाधिक अंक प्राप्त किया। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से डी० फ़िल्० उपाधि प्राप्त की। डी० ए० वी० कालेज (लाहोर), पंजाब विश्व-विद्यालय (लाहोर), पंजाब विश्वविद्यालय ओरियन्टलकालेज (जालन्धर) आदि संस्थाओं में वेद के प्रवक्ता, रीडर और प्रोफेसर रहे। बी०एच० यू० में कालेज आफ इन्डोलोजी के आचार्य और वेद के प्रोफेसर रहे। अली-गढ एवं कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालयों के वेदविभाग में कार्य किया। आपने ७० से अधिक वैदिक-ग्रन्थों की रचना की, जिनमें से कुछ इस प्रकार है- १- अथर्व प्रातिशाख्य (सम्पादित) २- वैदिक-कोश ३- वंदिक देवशास्त्र ४- वैदिकधर्म एवं दर्शन 5- A Practical Vedic Dictionary.

श्री पं० उदयवीर शास्त्री

महाविद्यालय के प्राचीन स्नातकों में अग्रगण्य और वेद के विशिष्ट विद्वान् श्री पं. उदयवीर शास्त्री का नाम कौन नहीं जानता? म०वि० के १३ वें वार्षिक महोत्सव के अवसर पर श्री १००८ श्री भारती कृष्णतीर्थ जी महा-राज, शंकराचार्य, गोवर्धन पीठ ने 'वेदरत्न' और 'शास्त्र-शेवधि' ये दो उपाधियां आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर ससम्मान आपको प्रदान की थीं। आपको म० वि० की विद्या-सभा ने 'विद्या-वाचस्पति' से विभूषित किया है। आज कल आप विरजानन्द वैदिक संस्थान, संन्यास आश्रम (गाजियाबाद) में रहकर वैदिक-साहित्य के लेखन और प्रकाशन में लगे हुए हैं। 'वेद और उसके ऋषि' विषय पर गंभीर आलोचनात्मक-ग्रन्थ लिखा है। सभी दर्शनों पर विद्योदय-भाष्य, वेदान्त, सांख्य दर्शनों का इतिहास, आदि शोधपूर्ण ग्रन्थों की रचना की है।

डॉ० हरिदत्त शास्त्री

संस्कृत के आशुकवि, प्रख्यात साहित्य-सेवी, वैदिकविद्वान् डा० हरिदत्त शास्त्री ने म० वि० से जीवन-पर्यन्त कभी भी अपना सम्बन्ध विच्छेद नहीं किया। आपने व्याकरण, वेदान्त, आयुर्वेद आदि विषयों में आचार्य एवं कलकत्ता से १७ विषयों में तीर्थ परीक्षा उत्तीर्ण की। वेदविषयक तीर्थ-परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त कर महाविद्यालय का गौरव बढाया। संस्कृत में आयोजित पद्यबद्ध शास्त्रार्थ में वैदिक तर्क एवं प्रमाणों से प्रकाण्ड पौराणिक विद्वान् स्वामी करपात्री जी को भी आपके वैदिक-ज्ञान का लोहा मानना पड़ा था। आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर वाराणसी में आयोजित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शास्त्रार्थ में आर्य समाज के वैदिकविद्वानों का नेतृत्त्व किया। यह शास्त्रार्थ 'मूर्तिपूजा वेद विरुद्ध है' विषय पर आयोजित था। डी० ए० वी० कालेज, कानपुर में वर्षों तक वेद का अध्यापन किया। म० वि० के कुलपति के रूप में अनेक वैदिक शोधछात्रों को मार्गदर्शन दिया। आपने ऋक्सूक्त संग्रह, पारस्कर गृह्यसूत्र की टीका, आर्यपर्वसंकीर्तन, आर्योद्देश्य-रत्नमाला, स्वमन्तव्यामन्तव्य का संस्कृत काव्यान्तर आदि लगभग ५० पुस्तकें लिखीं। शताधिक वैदिक-शोध लेख लिखे, जो तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए।

श्री नन्दकिशोर शास्त्री

आपने विद्याभास्कर, एम्० ए० परीक्षायें वेद विषय के माध्यम से उत्तीर्ण कीं, वेदान्ताचार्य किया। पोस्ट ग्रेजुएटकालेज, गुरुकुलमहाविद्यालय ज्वालापुर के प्राचार्य एवं वेद के प्रोफेसर रहते हुए वैदिकसाहित्य, व्याकरण और दर्शनशास्त्र से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थों की रचना की। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में वैदिक-शोध लेखों का प्रकाशन कराया।

श्री डा० गौरीशङ्कर आचार्य

आप वैदिक-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् हैं। राजस्थान में शिक्षामन्त्री पद पर रह चुके हैं। 'गीता और वेदों का तुलनात्मक अध्ययन' नामक ग्रन्थ का आपने प्रणयन किया है। दर्शनों में तो आप अप्रतिम योग्यता रखते हैं। वाराणसी जैसे प्रख्यात साँस्कृतिक राजधानी में आप ने अपनी वैदिक-योग्यता की छाप छोडी है। वर्तमान में आप संस्था के प्रधान हैं। आपका विचार गुरुकुलमहाविद्यालय ज्वालापुर को वैदिक विश्वविद्यालय के रूप में परिणत करने का है।

डा० नारायणमुनिश्चतुर्वेदः

आपका संन्यास पूर्व का नाम श्री पं० लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी था। आपकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में हुई। एम्० ए०, साहित्याचार्य, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेदभास्कर, विद्याभास्कर आदि अनेक उपाधियाँ प्राप्त करने के अनन्तर जोधपुर में रहते हुए वैदिक धर्म एवं वैदिक-साहित्य का प्रचार-प्रसार किया। आपके प्रपितामह श्री पं० रामप्रसाद को महर्षि दयानन्द ने चतुर्वेदी की उपाधि प्रदान की थी। आप एक उच्च कोटि के कर्मकाण्डी वैदिक विद्वान् थे। आपने अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन करते हुए अपने सम्पादकीय के माध्यम से वैदिक-विचारधारा एवं वैदिक वाङ्मय की महती सेवा की। अनेक वर्षों तक ज्वालापुर महाविद्यालय के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचार्य रहते हुए वेद-विषयक अध्यापन कार्य किया। कर्मकाण्ड की विशेज्ञता के कारण आपके पास वेद-परायण महायज्ञों के निमन्त्रण सकडों की संख्या में आते रहते थे। आपने दिल्ली, बरनावा मेरठ), लुधियाना, गोहाना (हरियाणा) आदि अनेक स्थानों में सम्पन्न चतुर्वेद-पारायण - महायज्ञों का ब्रह्मा पद स्वीकार किया। इन महायज्ञोंमें आदरणीय मुनिजी के साथ मुझे भी भाग लेने का सौभाग्य मिला है। आपके प्रकाण्ड-पाण्डित्य शास्त्रार्थ पटुता कर्मकाण्ड-निपुणता, कवित्व आदि से मुग्ध होकर अनेक संस्थाओं ने आपको मानपत्र दिए। मरुत एवं वरुण आदि देवताओं के विशिष्ट यज्ञ भी समय-समय पर कराते रहे। उत्तरप्रदेश संस्कृत-अकादमी ने शुक्लयजुर्वेद के विशिष्ट वेद-पण्डित के रूपमें आपका सम्मान १९८३-८४ ई०में किया। महाविद्यालय ज्वालापुर की विद्या-सभा ने वेद-विषयक विशिष्ट वैदुष्य से प्रभावित होकर 'वेद-विद्यावाचस्पति' उपाधि ससम्मान प्रदान की। आपकी प्रसिद्ध कृतियों में यज्ञप्रसाद, श्रुतिसुधा, वरुणदेवतादिबृहद्यज्ञपद्धति आदि हैं। इसके अतिरिक्त अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। अप्रकाशित अनेक कृतियों के अतिरिक्त वैदिक साहित्य से सम्बन्धित सैकडों लेख संकलनार्थ हैं।

श्री सत्यव्रत शास्त्री (धामपुर)

आप म० वि० के उन विद्वानों में हैं, जिन्होंने कर्मकाण्ड में विशेष दक्षता प्राप्त की है। गायत्री-सन्देश, धर्मशिक्षा भाग १(दैनिक सन्ध्या एवं यज्ञ पद्धति), धर्मशिक्षा भाग २ (दैनिक आचार-व्यवहार-दर्शन), धर्मशिक्षा भाग ३ (पर्व प्रकाश एवं वैदिक वाङ्मय परिचय), वैदिक उपासना विधि, याजुष पंचाध्यायी आदि ग्रन्थ प्रकाशित करा चुके हैं। वेद, निरुक्त, एवं व्याकरण के विशिष्ट विद्वान् हैं।

श्री ब्रह्ममुनि परिव्राजक

आप महाविद्यालय ज्वालापुर एवं गुरुकुल कांगडी के वेदाध्यापक रहे। महाविद्यालय में रहते हुए वेदाध्ययन प्रवेशिका की रचना की। आपके महत्त्वपूर्ण कार्यों में ऋग्वेद के दशम मण्डल का दयानन्द की शैलीमें व्याख्या, यजुर्वेद के प्रथम दस अध्यायों का व्याख्यान, सामवेद का आख्यात्मिक भाष्य, अथर्ववेद का मुनिभाष्य, निरुक्त की निरुक्तसम्मर्श-टीका, बृहद् विमान-शास्त्र, यमपितृपरिचय, वैदिक-मनोविज्ञान, अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र आदि लगभग ७५ ग्रन्थों की रचना की है। आपने वेदभाष्य करते समय वेद के मन्त्रों पर गम्भीरता पूर्वक-मनन करके उनके भाव को स्पष्ट करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डा० कपिलदेव द्विवेदी

आप गुरुकुल महाविद्यालय के उन उज्ज्वल रत्नों में हैं, जिन्हें दो वेद कण्ठ करने के कारण द्विवेदी की उपाधि दी गई। आपने इलाहाबाद, बनारस, नैनीताल, कानपुर, गोपेश्वर आदि स्थानों के स्नातकोत्तर महाविद्यालयों में वेदविषयक अध्यापन कार्य किया। आप गुरुकुलमहाविद्यालय ज्वालापुर के कुलपति एवं शोध विभाग के 'शास्त्र-चूडामणि' पद पर हैं। आपकी ५०से अधिक पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है। अथर्ववेदकालीन संस्कृति, विश्वशान्तिमहायज्ञ पद्धति आदि अनेक वैदिक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। आजकल वेदामृतम् ग्रन्थमाला की प्रकाशन-योजना को विश्वभारती अनुसन्धान परिषद्, वाराणसो के माध्यम से मूर्त रूप दे रहे हैं। इस योजना के आठ खण्डोंका प्रकाशन हो चुका है, कुल ४० खण्ड प्रकाश्य हैं। भारतसरकार के शिक्षा-मन्त्रालय की ओर से 'अथर्ववेद का साँस्कृतिक अध्ययन' विषय पर एक शोधपूर्ण ग्रन्थ-प्रकाशन हेतु अनुदान भी स्वीकृत हुआ है।

डा० कर्ण सिंह

आप वैदिक-विद्वानों में अग्रगण्य हैं। 'कामायनी पर वैदिक-साहित्य का प्रभाव' विषय पर आप को पी-एच०डी० प्राप्त हुई है। 'वैदिक साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक का प्रणयन किया है। वैदिक-शोधलेख समय-समय पर प्रकाशित होते रहते हैं।

डॉ० हरिगोपाल शास्त्री—

आप गुरुकुल ज्वालापुर के प्राचार्य हैं। वेद एवं वैदिकसाहित्य को ओर आपको विशेष अभिरुचि है। आपने अनेक वेदसम्मेलनों की अध्यक्षता की है। भारत-सरकार द्वारा आयोजित वैदिक-सम्मेलनों में आप ने अनेक बार गुरुकुलों का प्रतिनिधित्व किया है।

डा० गणेशदत्त शर्मा

आप म० वि०केस्वातन्त्र्योत्तर-स्नातकों में विशिष्ट वैदिक विद्वान हैं। आपने 'ऋग्वेद में दार्शनिक-तत्त्व' पर शोध-कार्य है। आप उत्तरप्रदेश सस्कृत-अकादमी से वैदिक विद्वान् के रूप में पुरस्कृत हो चुके हैं। आजकल आप स्नातकोत्तर म० वि० साहिब्राबाद में प्राचार्य पद पर अधिष्ठित होकर गुरुकुल की विजय-वैजयन्ती फहरा रहे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेद में नारी के उपमान

श्री आचार्य वेदप्रकाश शास्त्री
रीडर–संस्कृत विभाग,
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

मानव-जीवन में अभिनव स्फूर्तिदात्री के रूप में नारी को स्वीकार किया गया है। नारी अनेक दृष्टियों से सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य मात्र की अर्चनीया अधिष्ठात्री देवी तुल्य होकर मानव-जीवन को सरस भाव से समय-समय पर उद्बोधन देती रही है। वेदों में अनेक स्थानों पर नारी के कुछ उपमान प्रस्तुत किये गये हैं। इन उपमानों के साधारण धर्म को ऋषियों ने नारी में व्यक्त होते देखा है अथवा उनके उन दिव्य गुणों से परिपूर्ण नारी समुदाय को निर्मित करने की इच्छा रही है। वेदों के अद्भुत भाष्य-कार महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों में प्रयुक्त नारी वाचक शब्दों का यौगिक अथ करते हुए अनेक शब्दों को आर्थिक पद्धति से नारी के गुण-वाचक रूप में स्वीकार किया है। मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने जिस सूक्ष्म एवं तात्त्विक दृष्टि से नारी के उपमानों का दर्शन किया है निःसंदेह वह अर्थद्रष्टा मनीषियों के लिए अधिक श्रद्धा का विषय है। इस समय इस लघु लेख में मात्र निदर्शन के लिए समास वृत्ति से कतिपय उपमान प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

अदिति –

दिति दैत्यों की माता, **'अदिति'** देवों की माता कही गई है। जिसका अवखण्डन, पराभव या विनाश न हो वह अदिति है। दो अवखण्डने के अनुसार ––

'न विद्यते अवखण्डनं पराजयो विनाशो वा यस्याः सा अदिति'

व्युत्पत्ति इस अदिति शब्द की बनती है।

निरुक्त ४/२२ में **'अदिति अदीना देवमाता'** कह कर अदिति के अनश्वर स्वरूप की स्थापना की गयी है। अदिति के समान ही नारी भी अपने शुद्धस्वरूप का खण्डन नहीं होने देती है। वैदिक नारी चरित्र की अखण्डता के कारण अदिति के समान है। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने अपने भाष्य में अदिति का अर्थ स्वरूपरूपेण अखण्डिता देवी विदुषी किया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। निघण्टु १/१, १/११, २/११ में अदिति शब्द पृथिवी, वाणी और गाय का वाचक है। जिस प्रकार पृथ्वी विस्तीर्ण है, सबका आधार है तथा आश्रयस्थली है उसी प्रकार नारी भी अपनी विशाल ममताभरी क्रोड़ में समूचे विश्व को स्थापित कर वात्सल्य की मूर्ति कही गयी है। वाणी के समान वह प्रकाश करने वाली तथा गाय के समान पोषण करने वाली है। कतिपय वेद मन्त्र जिनमें अदिति को नारी के उपमान रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार उद्धृत किये जा सकते हैं—

यूयं नो मित्रावरुणाऽदिते च स्वस्तिम् इन्द्रामरुतो दधातन। ऋ०२/२६/३

इड एहि अदित एहि सरस्वत्येहि। ऋजु० ३८/२

अदितिष्ट्वा देवी विश्वदेव्यावती पृथिव्याःसधस्थेऽङ्गिरस्वत् खनत्ववट।
यजु० ११/६१

सरस्वती–

सरस्वती को निघण्टु १/११ तथा १/१२ में वाणी तथा नदी का वाचक माना है। विद्या की अधिष्ठात्री देवी के रूप में स्वीकार किया है। शतपथ ब्राह्मण २/५/१/११ में **'योषा वै सरस्वती'** कह कर नारी को भी सरस्वती कहा है। जिस प्रकार सरस्वती पावन होती है, ज्ञान विज्ञान की देने वाली होती है। मानव के अन्तराल में अन्धकार को समाप्त कर प्रकाश करने वाली होती है उसी प्रकार नारी भी विदुषी होकर प्रशस्त ज्ञान से सम्पन्न होती हुई गृह कार्यों में पूर्ण दक्षताको प्रकट करती हुई अपने प्राञ्जल स्वरूप को प्रतिष्ठित करती है। नारी सरस्वती के समान पावका होकर शारीरिक, मानसिक और सामाजिक पवित्रता उत्पन्न करती है। वाजिनी-वती होकर ज्ञानवती तथा क्रियाशीला हो जाती है। 'धियावसुः' के रूप में वह अपनी बुद्धि का सदुपयोग गृहकल्याण में करती है। ऋतावरी होकर वह मन, वचन तथा कर्म में सत्य का वरण करके किसी के साथ छल–छद्म या प्रपञ्च का वर्ताव नहीं करती हैं। जुजुषाणा होकर वह सेवा-वृत्ति में इतनी तल्लीन हो जाती है कि मानो वह संसार में प्राणी मात्र की ममता-मयी मूर्ति के रूप में ही स्वर्ग का निर्माण करने के लिए परमात्मा द्वारा प्रेषित है। घृताची होकर वह नित्य प्रति अपने पति के साथ दक्षिण भाग में सन्निहित होकर यज्ञादि कार्यों का पूर्ण विधि और निष्ठा के साथ सम्पादन करती है। जिस प्रकार तीव्र प्रवाह से भरपूर कोई बड़ी नदी दोनों ओर से अवरोध उत्पन्न करने वाले तटों को गिराती हुई आगे ही आगे बढ़ती जाती है। इसी प्रकार पारावतघ्नी होकर सभी प्रकार के इधर-उधर से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्पन्न होने वाली विघ्न बाधाओं को तोड़ती हुई अपने गन्तव्य पथ पर निरन्तर गतिमती रहती है। नारी कभी वृत्रघ्नी होकर शत्रुओं का समूल विनाश करती है तथा कभी हिरण्यवर्तनिः होकर मधुर एवं सुखद स्वर्णिम व्यवहार से सभी के लिए हृदयहारिणी हो जाती है। वह अकवारी होकर कभी कुत्सित आचरण नहीं करती है, अपितु वह सदैव यशोभागिनी होकर समस्त संसार में अपने कीर्तिध्वज को बड़े उल्लास के साथ उत्तोलित करती है। नारी के सरस्वती विषयक उपमान से परिदृष्ट कतिपय वेदमन्त्र इस प्रकार देखे जा सकते हैं —

प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती, धीनामवित्र्यवतु।

—ऋ० ६/६१/४

त्वं देवि सरस्वति अवा वाजेषु वाजिनि, रदा पूषेव नः सनिम्।

—ऋ० ६/६१/६

चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्, यज्ञं दधे सरस्वती।

—यजु० २०/८५

उषा—

उषा का वेद में अत्यन्त मधुर रूप से वर्णन मिलता है। निरुक्त में इसको मध्यम स्थानीय तथा उत्तम स्थानीय दोनों में प्रतिष्ठित किया है। अत एव उषा का अर्थ मेघवर्ती विद्युत अथवा प्रातःकालीन वेला किया गया है। दो धातुओं से उषा शब्द को निष्पन्न किया जाता है। वे दोनों हैं — 'उच्छी विवासे' तथा 'वश कान्तौ'। उणादि कोष में तो 'उष् दाहे' धातु से उषा शब्द निष्पन्न होता है। उषा को सूर्य की पत्नी कह कर मानवसृष्टि में नर और नारी की ओर स्पष्ट संकेत है। महर्षि दयानन्द जी ने उषा के मन्त्रों की व्याख्या सद्गुणभूषिता नारी के पक्ष में की है, जैसे एक मन्त्र इस प्रकार है —

यावयद् द्वेषा ऋतपा ऋतेजाः सुम्नावरी सूनृता ईरयन्ती।
सुमङ्गलीर्बिभ्रती देववीतिमिहाद्योषः श्रेष्ठतमा व्युच्छ॥

—ऋ० १/११३/१२

अर्थात् जिस प्रकार उषा अन्धकार का समापन करती हुई प्रकाश का प्रादुर्भावन करके धार्मिकों को धर्मादि में प्रवृत्त करती हुई सुख प्रदान करती है, उसी प्रकार विद्या एवं धर्म से प्रकाशयुक्त होकर एक पतिव्रता नारी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपने पारिवारिक जनों तथा सन्तति में सद्विद्या एवं शुभ-गुणों का आधान करके धार्मिकता का मार्ग प्रकाशित करती हुई सबको आह्लादित करती है। उषा सम्बन्धी मन्त्रों में जिन विशेषणों से उषा को सम्बोधित अथवा प्रशंसित किया गया है। लगभग वे सभी विशेषण नारी के वैशिष्ट्य की ओर भी संकेत करते हैं। जैसे कुछ इस प्रकार द्रष्टव्य हैं-**विभावरी** ऋग्० १/३०/२०, **दास्वती** १/४८/१, **अश्वावती** १/४८/२, **सूनरी** १/४८/५। **वाजिनिवती** १/४८/६, **सुभगा** १/४८/७, **चित्रामघा** १/४८/१०, **रुशद्वत्सा** १/११३/२, **अजरा अमृता** १/११३/१३, **सर्ववीरा** १/११३/१८ इत्यादि।

आपः –

आपः को भी वेद में नारी के उपमान के रूप में पढ़ा गया है, यद्यपि निघण्टुकोष में आपः शब्द नित्य बहुवचनान्त होता हुआ अन्तरिक्ष तथा जल का वाचक है किन्तु उसके साधारण धर्म नारी में भी समान रूप से देखे जाते हैं। अत एव आपः को नारी का लिङ्ग गतौचित्य के अनुसार भी उपमान मानना युक्ति-युक्त है। यह आपः शब्द 'आप्लृ' धातु से निष्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ व्याप्त होना है।

अर्थात् जिस प्रकार जल अत्यन्त सरलता से किसी भी पदार्थ में प्रविष्ट हो जाता है, उसी प्रकार नारी अपने सारल्य एवं नैर्मल्य के कारण अपने परिवार से दूसरे परिवार में जाकर वहां के सभी जनों के हृदय में अपने पावन शील के माध्यम से व्याप्त हो जाती है। आपः का अर्थ यदि प्राण किया जाये तो जिस प्रकार जल सभी का प्राणाधार है उसीप्रकार नारी भी परिवार का प्राणरूप होकर आधार बनती है। नारी जल के समान **मधुश्चुतः** होकर मधुर व्यवहार करने वाली हो। जैसे आपः शतपवित्राः हैं, उसी के समान नारी भी सैकड़ों की संख्या वाले पवित्र भावों एवं गुणों से परिपूर्ण हो। जिस प्रकार आपः को विश्वभेषजीः कहा गया है, उसी प्रकार नारी भी समस्त रोगों का निदान करके उनका उपचार करना जाने। नारी आपः के समान मयोभुवः होकर सुखदायिनी तथा आरोग्यदायिनी हो। आपः को अम्ब भी कहा गया है अर्थात् जिस प्रकार अम्ब **'अमति प्रेमभावेन प्राप्नोति'** के अनुसार सबको प्राप्त करता है, वैसे ही नारी भी प्रेम-व्यवहार से समाज की प्रत्येक चेतना में अपना स्थान बनाए रहती है। इस प्रकार नारी के कुछ उपमान स्पष्ट रूप से वेद में प्राप्त होते हैं, जिनका संक्षेपतः वर्णन किया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बौधायन धर्मसूत्र एवं यज्ञ

—श्री नरेन्द्र कुमार एम०ए०
प्राध्यापक गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

वेदांगों की परम्परा में कल्पसूत्र–साहित्य का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है, कुमारिल भट्ट ने लिखा है—

'वेदादृतेऽपि कुर्वन्ति कल्पैः कर्माणि याज्ञिकाः।
न तु कल्पैर्विना केचिन्मन्त्रब्राह्मणमात्रकात् ॥'

प्रो० मैक्समूलर ने भी इसकी महत्ता को स्पष्ट करते हुए लिखा है—"यज्ञ का सम्पादन केवल वेद द्वारा, केवल कल्पसूत्र द्वारा ही हो सकता था। किन्तु बिना सूत्रों की सहायता के ब्राह्मण या वेद के याज्ञिक विधान का ज्ञान पाना कठिन है"।

धर्मसूत्रों में, गौतम, बौधायन, आपस्तम्ब, विष्णु, वशिष्ठ एवं हिरण्यकेशि प्रमुख है। जिनका प्रमुख विषय है- वर्णाश्रमधर्म, शौचाचार, भक्ष्य, अभक्ष्य, प्रायश्चित्त, यज्ञ, व्रत, राजा, न्याय, दण्ड आदि।

विष्णुमित्र ने कल्प की परिभाषा इस प्रकार की है —

'कल्पो वेदविहितानां कर्मणानुपूर्व्येण कल्पनाशास्त्रम्।'

बौधायन धर्मसूत्र में यत्र-तत्र यज्ञ के विषय में पर्याप्त विवेचन मिलता है। अग्न्याधान काल कब तक रहता है ? इस संदर्भ में आचार्य बौधायन ने लिखा है कि जब तक केशों का रंग काला रहे, तब तक अग्न्याधान करते रहना चाहिए —

'कृष्णकेशोऽग्नीनादधीतेति श्रुतिः।' १/२/३/६

यज्ञिय परिधान के लिए यजमान दम्पती को निर्देश दिया गया है कि वे रेशमी वस्त्र धारण करें, इनके अभाव में कपास या ऊन द्वारा निर्मित वस्त्रों का प्रयोग कर सकते हैं।

यज्ञिय समिधा की शुद्धि पर विशेष बल दिया गया है। अग्न्याधान स्थल तक पहुंचने के लिए उत्तर दिशा का सहारा लेते हुए इसी दिशा से ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहिर्गमन भी करना चाहिए किन्तु पितृकर्मों में दक्षिण दिशा का निर्देश है।

यज्ञिय पात्र यजमान दम्पती के निकट उपस्थित हो, इसका कारण बताते हुए बौधायन ने लिखा है कि यज्ञिय उपकरण अधिक निकट होते हैं, इसकी अपेक्षा ऋत्विज् दूरवर्ती होती है किन्तु यजमान दम्पती ऋत्विज् की अपेक्षा अधिक निकट होते हैं।

यज्ञिय क्रिया को सम्पादित करते समय ऋत्विज् यज्ञाग्नि के स्थान से अपने मुख को विपरीत दिशा में न करें। यदि उसका मुख पूर्व में हो तो दक्षिण की ओर मुख करें,पश्चिम दिशा की स्थिति में वाम स्कन्ध पर मुख फेरें–

'प्राङ् मुखश्चेद्दक्षिणमंसमभिपर्यावर्तेत । प्रत्यङ्मुखस्सव्यम् ।'

१/७/१५/१३–१४

वेदि का मार्ग चात्वाल और उत्कर के मध्य से होता है। इसे स्पष्ट करते हुए बौधायन धर्मसूत्र के भाष्यकार गोविन्द स्वामी ने लिखा है —

'उत्तरवेदिपुरीषावटं चात्वालः । वेदिपुरीषनिधानदेशः उत्करः । तयोर्मध्यं तीर्थं द्वारान्तरेण योगाद्वर्त्मेति ।।'

ब्रह्मा का आसन अग्नि के दक्षिण दिशा में कुश द्वारा निर्मित होना चाहिए। पश्चिम में यजमान का आसन होता है। उत्तर में आग्नीध्र का उत्कर के समीप एवं यजमान की पत्नी का स्थान गार्हपत्य अग्नि के पीछे होता है।

यजमान दम्पती के लिए आवश्यक है कि वह अनुष्ठानकाल में निम्नलिखित व्रत का पालन करें —

'न परपापं वदेन्न क्रुध्येन्न रोदेन्मूत्रपुरीषेनाऽवेक्षेत ।'

१/७/१५/३०

सन्ध्या के संदर्भ में विस्तृत विवेचना समुपलब्ध है, शारीरिक शुद्धि के पश्चात् आचमन करे तथा —

दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभि नो मुखात् कर प्रण आयूंषि तारिषत् ।

एवं 'आपो हिष्ठा....चक्षसे' तथा **'पवमानः सुवर्चसम् ।'**

इस अनुवाक् से सात व्याहृतियों, ओं भूः, ओं भुवः, ओं स्वः, ओं महः, ओं जनः आदि से जल अपने ऊपर छिड़क कर शुद्ध हो जावें। सौ बार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गायत्री मन्त्र का जाप करें अथवा '**उभयतः प्रणवां स सप्त व्याहृतिकां मनसा वा दशकृत्वः**, २/४/७/७ के आधार पर सावित्री मन्त्र से प्रारम्भ कर प्रणव व्याहृतियों का दस बार जप कर। सन्ध्या न करने वाले ब्राह्मण की तीव्र भर्त्सना करते हुए बौधायन ने लिखा है–

'अनागतां तु ये पूर्वामनतीतां तु पश्चिमाम् ।
सन्ध्यां नोपासते विप्राः कथं ते ब्राह्मणास्स्मृताः ॥'

सन्ध्योपासना करते हुए तदनुकूल आचरण करने वाले ब्राह्मण की प्रशंसा करते हुए बताया गया है — '**न चैनं वरुणो गृह्णाति**' २/७/८/२०

बौधायन ने पञ्चमहायज्ञों को महासत्र से भी अभिहित किया है —

'अथेमे पञ्च महायज्ञास्तान्येव महासत्राणि देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्म यज्ञ इति ।'
२/६/११/१

देवयज्ञ के सन्दर्भ में बताया है —

अहरहस्स्वाहाकुर्यादाकाष्ठात् तथैतं देवयज्ञं समाप्नोति ।
२/६/११/२

देवताओं के लिए प्रतिदिन "स्वाहा" के साथ अग्नि में होम प्रदान करे। एतदर्थं समयानुसार एक काष्ठ का टुकड़ा तक भी हवि के रूप में अर्पित कर सकते हैं।

पितृयज्ञ के विषय में बताया गया है कि प्रतिदिन पितरों के लिए "स्वधा" के साथ जल से तर्पण करना चाहिए।

मनुष्य यज्ञ के बारे में निर्देश है कि ब्राह्मण आदि को अन्न, फल, फूल, शाकादि से सत्कृत करे।

भूतयज्ञ में प्राणियों के लिए पुष्पादि से अर्चना का विधान है।

ब्रह्मयज्ञ के लिए बताया गया है —

'अहरहस्स्वाध्यायं कुर्यादाप्रणवात्तथैतं ब्रह्मयज्ञं समाप्नोति ।'
२/६/११/६

स्वाध्याय को ही ब्रह्मयज्ञ कहा गया है —

'स्वाध्यायो वै ब्रह्मयज्ञः ।' २/६/११/७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बौधायन ने आत्मयज्ञ नामक एक और यज्ञ की चर्चा की है। स्वयं अपनी आत्मा को अक्षर के साथ संयुक्त कर उसका ध्यान करना आत्मयज्ञ है। आत्मयज्ञ की प्रशंसा करते हुए बौधायन ने लिखा है कि आत्मयाजी सर्वश्रेष्ठ होता है तथा समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

आचार्य बौधायन ने प्रायश्चित्त व्यवस्था में भी यज्ञिय व्यवस्था का निर्देश दिया है। जैसे-स्वयं को अपवित्र मानने वाले के लिए बताया गया है कि वह कूष्माण्डीय मन्त्रों से हवि प्रदान करे तथा ऋत्विज् को गौ दक्षिणा में प्रदान करे। कूष्माण्डयाजी देवलोक को प्राप्त करता है।

यज्ञिय अग्नि के समीप जाने के यिए शारीरिक स्वच्छता, नख आदि कटाना, नये वस्त्र धारण करना तथा सत्यभाषण आदि आवश्यक है।

प्रायश्चित्त प्रकरण में यह भी बताया गया है कि कर्त्तव्य में सन्नद्ध रहने वाले व्यक्ति से यदि कोई प्रमाद हो जाता है तो उसे चाहिए कि निम्न मन्त्रों से हवन करे ---

देवकृतस्यैन सोऽवयजनमसि स्वाहा। मनुष्यकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा। पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा।

आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा। यद्विद्वांसश्चाविद्वांसश्चैनश्चकृमतस्याऽवयजनमसि स्वाहा। एनसोऽवयजनमसि स्वाहेति।

अतः स्पष्ट है कि आचार्य बौधायन ने अपने धर्मसूत्र में प्रसङ्ग-वशात् यज्ञ की पर्याप्त विवेचना की है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदों के प्राचीन भाष्यकर्त्ता

—श्री पं० सत्यव्रत शास्त्री
स्टेशन रोड, धामपुर (बिजनौर)

[आप गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के प्राचीन स्नातकों में हैं। म० वि० की विद्यासभा ने आपके वैदुष्य एवं वदिक साहित्य की विद्वत्ता का मूल्यांकन कर आपको 'विद्यावाचस्चति' से सम्मानित किया है। आप याज्ञिक प्रक्रिया में दक्ष कर्मकाण्डी विद्वान् हैं। —सम्पादक]

वेंदों पर प्राचीन समय से अनेक वेदमनीषी वेदमर्मज्ञ विद्वान् यथामति भाष्य करते आ रहे हैं, उनमें कुछ नाम इस प्रकार हैं – श्री स्कन्दस्वामी, उद्गीथ, वेंकटमाधव, मुद्गल, आत्मानन्द, देवस्वामी, हरिस्वामी, आनन्द बोध, देवयाज्ञिक, देवपाल, भवस्वामी, भट्टभास्कर, भरतस्वामी आदि आचार्यों के भाष्य कुछ मुद्रित कुछ हस्तलिखित रूप से प्राप्त हैं। इनके अतिरिक्त सायण, महीधर, उव्वट ने भी वेदभाष्य किए, परन्तु ये सभी भाष्य सामयिक प्रभाव से प्रभावित बिना हुए न रह सके रूढ़िवाद में पड़कर वेदों के वास्तविक बुद्धिगम्य रहस्यपूर्ण तात्त्विक अर्थों से सर्वथा अनभिज्ञ रहे अथवा समय के प्रभाव से प्रभावित रहे और अप्रासगिक, असम्बद्ध, अश्लील एवं दूषित अर्थ किए। जैसे अश्वमहिषी–संगम, अश्वमेध, नरमेध आदियज्ञों के नाम पर पशुवध बलि के द्वारा "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" को मिथ्या घोषणा करके वाममार्ग को सिद्धान्तों को ही पुष्ट किया, जिससे वेदों की गरिमा, उसका ईश्वरीय–ज्ञान होना ही नष्ट हो गया। इनके भाष्य पर बंगाल के सुप्रसिद्ध वेदज्ञविद्वान् आचार्य सत्यव्रत सामश्रमी अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "एतेरेयालोचन" (पृष्ठ १८९ द्वितीय सस्करण संवत् १९३३ वि०, कलकत्ता) में "लिखते हैं—

"वस्तुतो ध्वान्ताच्छन्नविज्ञानकालिकानामशेषशेमुषीमतामपि तेषां सायणमहीधरादीनामधिदेवतार्थतोऽपि मन्त्राभिप्रेतं प्रकृतविज्ञान नैव स्फुरितं सम्यगिति तच्छोच्यमेवाभवत्" इति। अर्थात् अज्ञानान्धकार से आच्छन्न समय में होने के कारण परम विद्वान् होते हुए भी, सायण महीधर, उव्वट आदि वैदिक विद्वान् न जान सके, यह शोक है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इनके अतिरिक्त १९ वीं शताब्दी के महर्षि प्रवर, योगिराज, वेदोद्धारक आर्यसमाज के संस्थापक, प्राचीन आर्ष प्रणाली के पुनरुद्धारक, ब्रह्मा से लेकर जैमिनिमुनि पर्यन्त-ऋषियों के प्रदर्शित सिद्धान्तों, मान्यताओं के एकमात्र आराधक, अनुयायी, समर्थक आचार्य स्वामी दयानन्द ने अपनी ओजस्विनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से–योग साधना से अपनी लेखनी उठाकर और वास्तविक रहस्यमय वेदभाष्य करके सारे विश्व में एक प्रलयङ्करी महाक्रान्ति उत्पन्न कर दी। आपने पुनः वेदों का ईश्वरीय ज्ञान है, प्रभु की वाणी है, अपौरुषेय है, नित्य सनातन ज्ञान है, स्वतः प्रमाण है, इसकी घोषणा कर दी और प्राचीन आर्ष पद्धति के अनुसार त्रिविध प्रक्रिया को अपना लक्ष्य बनाकर– आध्यात्मिक, आधिदैविक आधिभौतिक–अर्थ करके प्राचीनपरम्परा को अक्षुण्ण किया।

इसी परम्परा को स्कन्द स्वामी ने, यास्क ने अपने निरुक्त भाष्य में स्पष्ट स्वीकार किया है। आधुनिक समय के योगिराज परलोकवासी अरविन्दघोष अपनी लेखनी से लखनऊ से प्रकाशित 'अर्द्धमासिक पत्रिका, सुधा के 'दयानन्द अंक' वर्ष ७ ख० १, १६ अक्टूबर सन् १९३३ ई० संख्या ६ पृष्ठ ४६ पर लिखते हैं–

"ऋषि दयानन्द की इस धारणा में– वेद, धर्म और पदार्थ विद्या के भण्डार हैं, कोई अनुचित–अयुक्त अथवा अनहोनी बात नहीं है। मैं उनकी उत्तम धारणा में अपना विश्वास और जोड़ना चाहता हूँ, कि वेदों में पदार्थ विद्या की अन्य ऐसी सच्चाईयां भी हैं, जिनको आजकल का संसार यत्किंचित् भी नहीं जान पाया है"।

एक बार वेदों की स्थिति स्वामी दयानन्द के अभिमतानुसार समासीन हो जाने दो तो पुनः देखोगे कि सायणाचार्य का केवल रूढ़िपरक और कपोलकल्पित, अनेक ईश्वरवाद पर आश्रित वेदों के भाष्य का भवन अपने आप गिर जायगा। और उसी के साथ-साथ पाश्चात्य विद्वानों का केवल भौतिक पदार्थ और प्राकृतिक पूजन–परक भाष्य भी धराशायी हो जायगा और वेद एक उच्च गौरवास्पद ईश्वरीय ज्ञान–पुस्तक के रूप में हमारे पास शोभनीय होगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भारतीय परम्परा के वेदज्ञ-विद्वान्

—श्री देव शर्मा (ऋषिकेश)

मुझे परम्परागत श्रोत्रिय ब्राह्मण कुल में जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरे पितृचरण श्री पण्डित महादेव शर्मा ने वेदों में मेरा प्रवेश कराया और मैं वेदपाठियों को श्रेणी में गिना जाने लगा। इसी क्रम में मुझे भारत सरकार के निमन्त्रण पर देश के भिन्न-भिन्न भागों में वैदिक सम्मेलनों में जाने का सुसंयोग प्राप्त हुआ, तदनुकूल ही मैंने कुछ वेदपाठियों के शाखानुकूल निवासादि संकेत जिज्ञासुजन के हितार्थ संकलित किये हैं।

क्रम सं०	नाम	प्रदेश	पता
	ऋग्वेद (शाकल-शाखा)		
१	श्री डी० विजय भानु घनपाठी	तमिलनाडु	७९ अम्मन् सन्निधि, वीथी, तिरूनेल वेलिटाउन –६२७००६
२	श्री ई० बी० रंगराज घनपाठी	तमिलनाडु	प्रो० रायम् पेटटे, तिरूवेयाए-६१२०६४
३	श्री डी० बी० क्िन्जवडेकर	महाराष्ट्र	३८ बुधवारपेठ, पूना-४११००२
४	श्री वी० सी० आठले	महाराष्ट्र	रत्नागिरी पाठशाला मु० पो० रत्नागिरी-महाराष्ट्र
५	श्री आर० एस० फणसलकर	महाराष्ट्र	खड़े वाला शुक्रवार पेठ, पूना –४११००२-महाराष्ट्र
६	श्री वी० सी० फड़के	महाराष्ट्र	वृन्दावन सोसायटी नवीं '७' दन्तवाड़ी पूना-४११०३०
७	श्री दामोदर सीताराम भट्ट जोगडेकर	कर्नाटक	पो० गोकर्ण ५८१३२६ जि० कारवाड़-कर्नाटक
८	श्री दत्तात्रेय महादेव मुखणे	महाराष्ट्र	३७३ सी० शनिवार पेठ नन्दन सोसायाटी-पुणे ४११०३०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
९–श्री दामोदर हरि काजरेकर	महाराष्ट्र	३७३ सी० शनिवार पेठ नन्दन सोसायटी, पुणे–४११०३०
१०–श्री बी० के० लक्ष्मी नारायण भट्ट	कर्नाटक	वेद भवन विद्यालय संस्कृत कालेज गोकर्ण (नार्थ कन्नड़) ५८३१२६
११–श्री दिनकर माधव फड़के	महाराष्ट्र	३७३ सी० शनिवार पेठ पुणे–४११०३०
१२–श्री साम्ब दीक्षित	कर्नाटक	वेद भवन महाविद्यालय गोकर्ण (उत्तर कन्नड़) ५८१३२६–कर्नाटक

कृष्ण यजुर्वेद (तैत्तिरीय शाखा)

१३–श्री राजामणि घनपाठी	तमिलनाडु	१।६२ १९ स्ट्रीट नंगनल्लू मद्रास–६१००६१
१४–श्री एन० बरदराजाचार्य	तमिलनाडु	१६० नार्थ चित्रा स्ट्रीट श्री रंगमत्रियी–६२०००६
१५–श्री आर० वेकंटराम घनपाठी	आन्ध्र प्रदेश	हाउस नं० १८–९४।१प्लाट, नं० २५४, मल्लिकार्जुन नगर मल्काज गिरी, हैदरा–बाद–५०००४७
१६–श्री नागयशेश्वर सोमयाजी	आन्ध्र प्रदेश	अन्नवरम् प्रतिपत्तिपादु तालुका, जि०–ईस्ट–गोदावरी–५३३४०६
१७–श्री टी० ई० कृष्णदेशिकाचार्य	तमिलनाडु	श्री देशिकन तिरूमालिकै वीथि, तिरूअहीन्द्र पुरम्–६०७४०१ वाया तिरूप्पा-दिरिप्पुलियूर ज़ि० साउथ आर्कांड (टी० एन०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
१८–श्री दन्दुकूरि याजुलु	आन्ध्र प्रदेश	तेनाली, मारीश पेठ, जि०–गुण्टुरू (ए० पी०)
१९–श्री दन्दुकूरि अग्निहोत्री सोमयाजी	आन्ध्र प्रदेश	११-४-३२२।१८।१ चिलकल गूड, सिकन्राबाद
२०–श्री दन्दुकूरि वेंकट सुब्रह्मण्य घनपाठी	आन्ध्र प्रदेश	मदूपल्लि वारि वीथी, गवरनर पेठ विजवाडा –५२०००२ (ए० पी०)
२१–श्री दन्दुकूरि वेंकट हनुमत्–घनपाठी	आन्ध्र प्रदेश	हैस्कूल रोड–काटूरु वारि स्ट्रीट, कृष्णलंका–५२२०१३ बिजयवाडा
२२–श्री गुल्लपल्लि आन्जनेय घनपाठी	आन्ध्र प्रदेश	इरक वरम् तण्णूकू तालुका, बेस्ट गोदावरी आन्ध्र प्रदेश
२३–श्री दन्दुकूरि वेंकट हनुमत सोमयाजी	आन्ध्र प्रदेश	मारीश, पेठ तेनाली, जि०–गुण्टूरू (आन्ध्र प्रदेश)
२४–श्री दन्दुकूरि वेंकटेश्वर –सोमयाजी	आन्ध्र प्रदेश	मा० विजयवाडा, रामालयम् वीथी, कृष्ण लंका जि० –कृष्णा (आ० प्र०)
२५–श्री कुप्पाराम गोपाल अवधानी	आन्ध्र प्रदेश	२२-४-३० सत्यनारायण पार्क रोड, कोत्तपेठ, ग्रा०–तेनाली, जि० गुण्टुरू ५२२०२१
२६–श्री ई० रामा स्वामी शर्मा	तमिलनाडु	१७ईस्ट माड स्ट्रीट-लिटिल कांचीपुरम्–२ (तमिलनाडु)
२७–श्री आर० वेंकट राम घनपाठी	आन्ध्र प्रदेश	ब्लाक–२५८ मल्लिकार्जुन नगर, मल्काज गिरी –५०००४७, हैदराबाद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
२८–श्री बी०आर० सीताराम घनपाठी	तमिलनाडु	गुरुकुलम् वी० आर० एम० टी० वेद पाठशाला, तिप्पि-राजपुरम्–६१२४०२
२९–श्री एल्लम् सुब्रह्मण्य घनपाठी	तमिलनाडु	३२–ए० सन्निधी स्ट्रीट, लिटिल कांचीपुरम्–६३१५०३ (टी० एन)
३०–श्री बी० जी० सुब्रह्मण्य घनपाठी	तमिलनाडु	आर०आर०फ्लैट्स,८ सी० बारन रोड, मैलापुर, मद्रास–६००००४
३१–श्री वी० कृष्णमूर्ति घनपाठी	उ० प्र०	५।३११ हनुमान घाट वाराणसी (उ० प्र०)
३२–श्री एल० रामचन्द्र घनपाठी	उ० प्र०	५।३११ हनुमान घाट वाराणसी (उ०प्र०)
३३–श्री एल० बरदराव घनपाठी	उ० प्र०	५।३११ हनुमान घाट वाराणसी (उ० प्र०)
३४–श्री टी० ई० कृष्णमाचार्य	तमिलनाडु	१५ श्री रंगराज स्ट्रीट, कांचीपुरम्–६३१५०३ (टी० एन०)
३५–श्री निवासन्	तमिलनाडु	द्वारा श्री ई० रामा–स्वामी शर्मा १७ ईस्ट माड-वीथी, कांचीपुरम्-६३१५०३
३६–श्री राजगोपाल घनपाठी	तमिलनाडु	१८१ मौबरीसरोड आलवार पेठ, मद्रास–६०००६१
३७–श्री अवकर चितूरमाधवन्	केरल	त्रिचूर
३८–श्री डी० मल्लिकार्जुन शर्मा	तमिलनाडु	मद्रास संस्कृत कालेज, मैलापुर, मद्रास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शुक्ल यजुर्वेद (माध्यंदिन शाखा)

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
३९-श्री महादेव शर्मा	दिल्ली	प्राचार्य, शंकर एकेडमी (कामकोटि) २१० जीतसिंह मार्ग, नई दिल्ली-११००६७
४०-श्री सूर्यभानु शर्मा	उत्तर प्रदेश	
४१-श्री ओम प्रकाश पालीवाल	राजस्थान	
४२-श्री श्रीकृष्ण काशीनाथ गोड़से	गुजरात	
४३-श्री हरिनाथ सखाराम दीक्षित	उत्तर प्रदेश	
४४-श्रा श्रीदेव शर्मा	दिल्ली	द्वारा श्री महादेव शर्मा, शंकर एकेडमी, २१०जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली-६७
४५-श्री वेदप्रकाश शास्त्री	उत्तर प्रदेश	भगवान निवास, नरसिंहधाम के सामने, श्रवण नाथनगर, हरिद्वार
४६-श्री पं० पीताम्बर दत्त विजल्वाण	उत्तर प्रदेश	
४७-डा० कपिलदेव द्विवेदी	उत्तर प्रदेश	संचालक विश्वभारती अनुसंधान परिषद्, शान्ति निकेतन, पो०ज्ञानपुर (वाराणसी)
४८-डा० गणेशदत्त शर्मा	उत्तर प्रदेश	प्राचार्य-पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, साहिबाबाद (गाजियाबाद)
४९-श्री केशव प्रसाद उपाध्याय साहित्याचार्य	उत्तर प्रदेश	गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (सहारनपुर)
५०-श्री सुरेन्द्रकुमार विद्याभास्कर	उत्तर प्रदेश	सराय दाउद, मथुरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
५१-श्री युधिष्ठर उप्रेती	नेपाल	गोविन्दपुर गा० पं०, वार्ड नं० ५ (कैमी) जि०-मोरङ्ग
५२-श्री डा० हरिगोपाल शास्त्री व्याकरणाचार्य	उत्तरप्रदेश	प्राचार्य गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (सहारनपुर)
५३-श्री पं० हरिसिंह त्यागी	उत्तर प्रदेश	सिसौना, बिजनौर
५४-श्री पं० माधव प्रसाद उपाध्याय	उत्तरप्रदेश	प्राचार्य, महानन्द संस्कृतमहाविद्यालय लाक्षागृह, बरनावा, मेरठ
५५-श्री पं० तारानाथ मैनाली	नेपाल	शिवगंज गा० पं०, वार्ड नं० १ झापा, मेची-अंचल (नेपाल)
५६-श्री डा० सत्यव्रत शास्त्री "अजेय"	उत्तर प्रदेश	२२८, सत्यपुरी, मुजफ्फरनगर
५७-श्री डा० उदयवीर शास्त्री	उत्तर प्रदेश	संन्यास आश्रम, गाजियाबाद
५८-श्री डा० सत्यव्रत शास्त्री विद्याभास्कर	उत्तर प्रदेश	स्टेशन रोड, धामपुर, बिजनौर
५९-श्री दशरथ कुमार शास्त्री	उत्तर प्रदेश	ग्राम-मतनौरा, बाबूगढ़ गाजियाबाद

शुक्ल यजुर्वेद (काण्व शाखा)

६०-श्री ई०जे०कुमार स्वामी दीक्षित	तमिलनाडु	योगेश्वर याज्ञवलक्य विद्यासदनम्, पो० बडडलुर्के, वाया आर्काड, नार्थ आर्काड डि० ६३२५११ (टी०एन०)
६१-श्री परशुराम घनपाठी	तमिलनाडु	अल्लूर, जि०-त्रिची, तमिलनाडु, ६२०१०१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
६२-श्री दिवाकर महापात्र	उड़ीसा	वेदभवन, जगन्नाथवेद-कर्मकाण्ड महाविद्यालय, स्वर्गद्वार रोड, पुरी ७५२००१ (उड़ीसा)
६३-श्री श्रीकृष्णकान्त पौराणिक	असम	असम वेद विद्यालय, छत्राकार,उद्यान बाजार गोहाटी, असम-७८१००१
६४-श्री एस०बद्रीनारायण शास्त्री	तमिलनाडु	३, राजवीथि, कांचीपुरम् (तमिलनाडु)
६५-श्री लक्ष्मीकान्त रामाचार्य पौराणिक	उ० प्र०	के २०।१३ घासी टोला, दुर्गाधार, वाराणसी-२२१००१
६६-श्री बी० शिवराम शर्मा	तमिलनाडु	३, राजवीथि, काँचीपुरम् (तमिलनाडु)

सामवेद (कौथुमी शाखा)

६७-श्री सुन्दरराम श्रोति	तमिलनाडु	सामवेद पाठशाला, अम्भीग्रामम्, कांचीपुरम्, (टी. एन.) जि०-एन० टी०
६८-श्री रामनाथ श्रौति	तमिलनाडु	सामवेद पाठशाला, अम्भी-ग्रामम्, कांचीपुरम्(टी० एन०) जि० एन० टी०
६९-श्री आर०राजाराम शर्मा	तमिलनाडु	ईस्टस्ट्रीट, कोणिरी, राजा-पुरम्कुम्भ कोणम्,(टी०एन०)
७०-श्री चन्द्रमौलि शर्मा	तमिलनाडु	ईस्ट स्ट्रीट कौणिरी, राजा-पुरम्, कुम्भकोणम्(टी०एन०)
७१-श्री सुब्रह्मण्य शर्मा	तमिलनाडु	श्रीकांचीपुरम् कामकोटि, शंकराचार्यमठम् , कांचीपुरम् (टी० एन०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
७२-श्री एस०आर० कृष्णमूर्ति शास्त्री	तमिलनाडु	श्री कांचीपुरम् कामकोटि शङ्कराचार्यमठम्, काँची-पुरम् (टी० एन०)
७३-श्री वेंकटसुब्रह्मण्य शास्त्री	तमिलनाडु	श्री कांचीपुरम् कामकोटि शङ्कराचार्यमठम्, कांची-पुरम् (टी० एन०)
७४-श्री शिवराम शर्मा	तमिलनाडु	श्री कांचीपुरम् कामकोटि शङ्कराचार्यमठम्, काँची-पुरम् (टी० एन०)
७५-श्री त्यागराज श्रौति	तमिलनाडु	श्री कांचीपुरम् कामकोटि शङ्कराचार्यमठम्, काँचीपुरम् (टी० एन०)
७६-श्री गगन चट्टोपाध्याय	बिहार	श्यामाचरण विद्यापीठ, पो० बांसरीं, जि०-भागलपुर, बिहार ८१३१०४
७७-श्री बामन चट्टोध्याय	पश्चिमी बंगाल	सोलेक एवेन्यु वेद भवन, कलकत्ता-७०००१२
७८-श्री गणेश राम सामवेदी	.....	....
७९-श्री हरि नारायण भट्टाचार्य	पश्चिमी बंगाल	बंकिम चन्द्र चटर्जी स्ट्रीट, सस्कृत कालेज टोलडिपार्ट-मेन्ट, कलकत्ता-७०००१२
८०-श्री शान्ति प्रकाश शास्त्री	जम्मू	श्री रणवीर केन्द्रीय संस्कृत, विद्यापीठ, जम्मू (तवी) ग्रा० कडवान्डा, पो० भलवाल जम्मू तवी

सामवेद (राणायणीय शाखा)

८१-श्री सुन्दरराज श्रौति	तमिलनाडु	श्री कांचीपुरम् कामकोटि शंकराचार्यमठम्, कांचीपुरम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम सं० नाम	प्रदेश	पता
८२-श्री सुब्रह्मण्य भट्ट	कर्नाटक	मेलिन गन्टिगे पो०होसाकुली होनावर तालुका, जि०-उत्तर कन्नड़-५८१३३४
८३-श्री शिवराम शम्भु भट्ट	कर्नाटक	अलेख, पो०होसाकुली, होगवर तालुका, जि०-उत्तर कन्नड़
८४-श्री सुब्राय रामचन्द्र भट्ट	कर्नाटक	पो०भुगवा, तालुका होनावर, जि०-उत्तर कन्नड-५८१४३४
८५-श्री लक्ष्मीश आर० भट्ट	कर्नाटक	पो० सुरकट्टे, तालुका होग-बर, जि० उत्तर कन्नड़-५८१३३४
८६-श्री कृष्णमूर्ति वी० भट्ट	कर्नाटक	करिकान परमेश्वरी देवालय पो० नीलकोंड, तालुका होगवर, उत्तर कन्नड़-५८१३३४
८७-श्री शान्ता राम हेरम्न भट्ट	कर्नाटक	कोलगी, सिरलगी, तालुका सिद्धपुर, जि०-उत्तर कन्नड़

अथर्ववेद (पैप्पलाद शाखा)

८८-श्री हरि कृष्ण पाण्डया	उड़ीसा	स्वर्गद्वार रोड-पुरी, उड़ीसा

अथर्ववेद (शौनक शाखा)

८९-श्री किशोरचन्द्र ईश्वरलाल पाण्डया	गुजरात	वेद भवन विद्यालय, द्वारिका जि०-जामनगर (गुंजरात)-३६१३३५
९०-श्री जनकराम बी उपाध्याय	गुजरात	वेदविद्यालय, द्वारिका, जिला-जामनगर (गुजरात) ३६१३३५
९१-श्री श्रीधर टी० अड्डी	कर्नाटक	वेद भवन विद्यालय, गोक्रर्ण, जिला-कारवड़।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

The Relevance Of Vedas To The Modern Times

—Shri RAM KRISHNA SHARMA
Asstt. Educational Advisor(s)
Govt. of India.

The word veda derives from the Sanskrit root Vid Jyane. It means the sum of knowledge The term, veda implies the whole of the learning including all the vidyas or sciences which the human intellect can catch. This sum of the knowledge later on had been divided into four portions by the super-human type of wise men, who are called Ved Vyas by name (i) Rig Veda, (ii) Yajur Veda. (iii) Sama Veda and (iv) Atharva Veda.

About the origin of the vedas, there are different opinions expressed in different Puranas like :-Vishnupurana, Bhagwatpurana, Markandeyapurana, Harivanshapurana, & Mahabharatapurana. Most of the opinions are in favour of the vedas being a non-human origin and eternal and are regarded as the sacred breath of Sublime.

Vedic literature has been developed in the form of Samhita, Brahmana, Aranyaka and Upanishadas. The Rik Samhita is a collection of 1028 hymns which are in the praise of dieties like Agni, Soma, Baruna, Maruta, Savita, Indra, etc. These have been inspired by the seers like Vishvamitra, Gritsamad, Bashishtha, Bharadwaja, Atri, etc. Shakala, Bashkal, Ashwalayana, Shankhyayana and Mandukeya are the 5 recensions of this veda. Out of these only shakala

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

is available at present. Sama Veda, which is closely connected with Rig Veda, consists of 1549 stanzas and is divided as Purvarchikam and uttararchiKam. The Sama Veda originally had 1000 recensions out of which only Ranayaneeya, Kauthum and Jaimine are available.

Yajurveda :—Partly in prose and partly in verses comprising hymns mostly taken from Rig Veda. It has also had more than1000recensions out of which very few are available now. This veda has two branches, i. e. Krishna YajurVeda and Shukla YajurVeda. The former having Kathak Maitrayani and Taittareeya recensions is mostly prevalent in Southern India and the latter having Kanva and Madhyamdina recensions is in northern part of India. A few legends like that of Pururavas Urvashi are also found in this veda. Atharva Veda is a heterogeneous collection of Mantras directed against hostile agencies such as diseases, noxious animals, demons a nd other such type of enemies. This veda also contains the affairs like securing harmony in personal, family and village life. It also deals with the matters involving the longivity of human life, good mental & physical health, prosperity & charming personality. Shaunak & pippalada are the two recensions of this veda.

Now it has generally been recognised throughout the scholarly world of the globe that the vedas constitute the earliest literature known to the mankind & has come down to the earliest civilised man in an unbroken continuity from the seers of these vedic mantras. This transmission from generation to generation without any material change in the context or arrangemen of the matter is really a big ground for our wonder andt

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

solemn submission to the supreme authenticity of the vedas. This fact, while invites our minds towards the deep devotion and dedication of the olden people for preserving this sum of knowledge, also calls for our attention to the peculiar system of imparting this knowledge through oral human agency. This system has also preserved verbal & phonemic form of the veda entirely in the same form as it would have been at its inception with the excuse to overall deterioration of the human capacities which occurs owing to the changed atmosphere of the whole of the universal things.

No doubt, the credit for this preservation goes to the veda pathees who irrespective of their personal problems, socio economic status and physical or mental health, have dedicatedly been engaged in practising the veda patha in a disciplined and proper way. This system involves a competent veda teachers' faultless and powerful utterances of a particular passage of the veda with specific intonation as well as concentrated, patient and faithful following of the taughts till the ved path is passed on to him in an accurate form. In this very way next passage is taken up and passed on to the taughts. Apparently this practice requires a strong will-power, meditation and efforts from the persons involved. This is why the veda pathins have had a very respectful position especially in the Indian society for the long past. It is also very amazing to observe that the veda patha uttered by the ved pathis of different regions will present the same sound and accuracy as uttered by only one mouth.

This veda path is so authentic even today that

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

while any person quoting from any literature has to verify the correctness of his quotation from the printed text, the correctness in printed vedic text has to be tallied with the oral version of an authorised ved pathee.This **Shabda** or the sound has been accepted as an authoritative source of pure knowledge even more sacred than the visual and inferential knowledge, and as it is regarded as an non-human origin, since has been called Shabda Brahma, and it's instrument to know to feel is called shruti. Undoubtedly no fallible human-being can claim to preserve this Shabda Brahma who has been withstanding the all crushing storms of the crucial times and yet is available in its very shape hence the veda knowledge can evidently be called imperishable. "The sound of an accurate arrangement of certain definite passages of words uttered with proper antonation will remain in the world with its mysterious meanings, for the welfare of the mankind till the world remains it self" is the belief of one of the schools of veda scholars.

Under the above impression it will be irrelevant to question the relevance of the veda knowledge to the modern times. As the time itself is no separate component from all other components of the universe, it has also to amalgamate itself to the other components which run the universe harmoniously in order, irrespective of its being called past; present & future. So if there is the universe, the space, the time, the animate & the inanimate world of the beings, the knowledge of the veda is inevitable to exist. This knowledge has heen called in Indian scriptures the veda vakya which latter on has been expre-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ssed, the Truth, the Good and the Beautiful. This eternal knowledge is the root of all branches of learning just like the Brahma is the root cause of Jarh & Chetan. The more the phylological researches are proving one root of various languages flourishing in modern world the more the fact is also being recognised that there is a root knowledge which has inspired itself in manifold, multiplied branches of sciences of today and that knowledge can not be imagined other than the ved vigyan.

Since the vedic literature mainly deals with the shabda vidya, yajna vidya sristi vidya, yoga vidya and Brahma Vidya and since vedas depict the form, powers and influence of rudra, ushas, savitri earth, etc. and also imparts an impressive, augmentative it and moral instructions for all the beings of the universe, it may not be confined to a particular place and time, race and community but be regarded as a perenial source of an eternal and in-exhaustible knowledge for the wellbeing of the whole of the universe. Of course, the vedic culture establishes a supremacy of truth and synthesises between the material and spiritual life of the man. It developes a sense of social values, liberal views, equality, aquanimity, uuiversal consciousness, compassion and overall elevates and submlimeters the human life.

Apart from all these things as veda is called Shruti, it is a very powerful instrument to communicate the message from one's heart to another's heart by dint of the sound (shabda). A proper and powerful recitation from the mouth of an efficient vedpathi creates a very strange atmosphere and awakens the hearts of the audience. The effect of these waves of this

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

sound has been evinced by the analysts on the occasion of various events like bearing a child, marrying couples and even on funeral ceremonies. In the netshell this provides a marvellous peace to the human mind and heart under all circumstances irrespective of its meaning known to him. It has severally been witnessed that a man faithful to hear the veda–patha attains a marvellous state of mind irrespective of his being connected with any particular caste, creed, colour and political ideology. Taking all these aspects into consideration the whole of intelligentia, the world of politics pay their homage to this sacred sum of Knowledge even in the modern times.

Even in the age when people's demand Would restrict only to Roti, Kapra aur Makan, the veda knowledge shall be more relevant, otherwise they can not enjoy even their these physical facilities. The people can take up, put up and live up only when they have a sense of humanity which bases only on this eternal ved gyan. In this huge humanity building ved gyan is the foundation. veda knowledge will prove the only remedy and refuge to the society which suffers from tension, terror, ill wills, frustration and exploitation etc. It is only the Ved Gyan which bestows the highest and the sweetest bliss of the Nature to the world.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

The Value of Indian Philosophy in a Modern State

—Shri C. Rajagopalachari

ANTI RELIGION-A SULICIDAL PROGRAMME.

The prosperity that undoubtedly resulted in Europe from the economy of private enterprise and competition necessarily carried with it in equality of distribution. The very power of that economy was derived from difference as power is derived from a fall of water. Some people had to live in squalor, may be in the same country or may be elswhere the latter was easier whereever it was possible in order that prosperity might be built up at a visible point. But how squalor is considered disgraceful, whether it be among certain sections of people in the same country or elsewhere, and it is considered criminal to be found building up one's wealth on other people's poverty. It is now the accepted doctrine of economic conduct that wealth should be produced without producing unhappiness elsewhere. Inequality or unhappiness is no longer considered as inevitable or tolerable. Economic compe-tion, obvious or concealed, is now considered to be only another edition of the law of the jungle. It is not considered decent to leave the devil to take the hind-most. It is no longer considered right to look upon individual effort and individual life as a private and

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

sacred enclosure into which no trespass is to be allowed. In the interest of society as a whole these trespasses in to private affairs are now deemed not only permissible but obligatory.

Unfortunately, however, those who happened by the accidents of history to lead movements for the demolition of old economic ideas and for the establishment of the all prevailing dominance of the public weal and for the re-organisation of society on a non-competitive economy, were tempted by an immediate strategic advantage. They saw that discontent must be produced in order to help a violent revolution and religion fostered contentment. They worked, therefore, for the demolition of religion, treating it as an opiate and as a part of the old economy, The protaganists of equality thus decolished or sought to decolish. Let us hope unsuccessfully- the spiritual basis for human conduct, the very thing required to make conduct unselfish and derected towards the public weal rather than to one's own individual advantage. Religion acted as a consolation and helped men/women to bear misfortunes, it helped men particularly to tolerate inequality and since inequalities must go, they said we must remove everything that helps men to bear with it. They, therefore, concluded that religion must go, if not by other subtle pressures.

Thus what could support the new economy of unselfishness, indeed what alone could support and furnish power to the new idea of unselfish production of wealth, it was decided to destroy. This was suicidal and an unnecessary addition to the programme of economic revolution, and though for the moment its

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

advers effect was concealed by the prevailing spiritual power of a revolutionary upheaval, the substitute could not last for all time. It was not the intention, nor was it possible for men and women to live forever in a state of war and on the emotional ecstasy of antagonism. So, the new economy of production of wealth had in course of time to be supported by all sorts of make-shift compromises to give some sense of personal advantage. What obviously supported the old economy of work, viz, the profit-motive, came to the re-permitted in concealed ways. The law of selfishness can not altogether be substituted by force, not can unselfishness be maintained by the mere vigilance of the State The supervising power has a tendency to deteriorate and get less and lesspowerful, and compromises by way of concealed personal advantage have to be provided in place of the old frank acceptance of the rule of personal profit, But these makeshifts can not serve the purpose so well immediately, or be self-sustaining for long-term purposes.

NOT AN OPIATE BUT A DRIVING FORCE AND REGULATOR

The truth is that society, though the concept grammatically singular in number, is physically and psycologically plural in reality, It is not one living organism. It is made up of many individuals, who can never get rid of individuality and what flows from it, We may develop altruism by seveval means but we can never wholly do away with the individual. If this is accepted as correct, how then shall we keep the individual fully alive in spirit and in action, and yet make individual activity truly subservient to the general interest. The claim I put forward is that the Gita code of

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

conduct which is organically connected with the philosophy of the Upnishads gives the answer. The secret lies in the substitution of the compulsion and vigilance of the State by a religion that develops an inner law more vigilant than the eyes of spies and more effective than the arm of external law.

THE POSITIVE DOCTRINE OF ALL WAYS LEADING TO THE ONE

Now I come to a feature of Hinduism that is unique among all the religions of the world, ancient and modern viz, it is specific and positive doctrine of catholicity. The Hindu tradition prescribes that it is not open to any Hindu whatever the name and mental image of the Supreme Being he may use for his own devotional exercises, to deny the gods that other worship. He can praise the name and raise the image of his choice to the highest but he cannot deny the divinity or the trugh of the God of other denominations. This unshaken tradition of Hinduism makes it possible of rpious fervour to operate on conscience and spirit without disturbing the peace of community life, in a composite world. It makes Hindu religious thought as modern in suitability as it is ancient in conception and development. This unique and all important aspect of Hinduism is emphasized in several important and off quoted verses in Chapters 4, 7 and 9 of the Gita. Forms of worship may differ, but all lead to God. In what soever way men approach God, the Gita emphatically lays down that God blesses them. Whatever the path that man may take in worship, it assures us reaches God. The Gita teaching of course referred to the unit of goal of all forms of worship that were prevalent at the time. But the doctrine is stated in such

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

wide terme and so broadbased on essential principle as to be applicable to every variety of religion. When one contemplates how the Hindu seers so clearly and long ago saw the truth that justifies this catholicity, one cannot but be lost in wonderment and reverent admiration. This what I may call, the brightest jewel in our inheritance is a teaching of the highest value for peace and progress and for the world's happiness and spiritual advancement.

SANYAS

All this may be accepted, but the sceptic may ask, 'What about renuneiation ? What about Karma ? How can Hinduism which preaches and Sanyas Fatalism be suitable for an age where in hard work and the due performance of civic duties are so essential ?' I Shall seek to deal with these queries, First let me state definitely that it is not the teaching of Vedanta that men should renounce activities and become anchorites. Vedanta demands renunciation but the renunciation is different from what is referred to in the argument againest the suitability of Hinduism for the modern citizen. It is renunciation of false values. renunciation of attachment that the Vedanta wants in its votaires. What is preached in the Vedanta is enlightened and true evaluation of essntials and a spirit of detachment. And this is explained and reiterated in the Gita, quite as if this very query raised now had specifically been put to Shri Krishna. Buddhi and asanga are insisted on not sanyas. Indeed, the performance of task with detachment is the lesson that is dinned into the reader in every chapter of the

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Bhagwat Gita. It is not necessary to quote passages. There is no room what so ever for doubt on this diment to true social cooperation, viz; the desire for pleasure and pleasurable sensaitions. It is this desire that leads to error, anger, confusion of mind and pain and grief. The ideal citizen should perform his tasks and duties with detachment. His activities should be in the general interest, not for selfish gain. This is the great teahing of the Gita that has justly made it is famous in modern times as it is classic in the Vedantic tradition. Out of the Upnishad teaching and its doctrine of the ultimate reality, the modern citizen can derive a fearlessness of spirit which added to the detachment and rigorous execution of duties preached by the Gita, could make of every citizen a veritable giant in the service of society. The resolution and fearlessness that characterised Mahatma Gandhi's long strenous and dedicated life were inspired by this philosophy and this religion. This single illustration from recent history is perhaps more convincing than hours of argument.

KARMA

Comming to Karma, the doctrine that makes Hinduism what it is, it nothing but the great law of cause and effect in things spirtitual, You can not in the material or the psychological world get rid of the effects of what you do. And as the body is not the whole of the matter, but there is an immortal spirit dwelling in and making the human being what he is. Death does not end the chain of sequence. The working agent, the spirit in the body, does not and cannot die with the body. He shapes himself.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

moments by his activities, mental or physical. At death he does not disappear into nothing but enters a new tenement which he has built for himself by his life activities. This is Hinduism. You may accept it or reject it and search for other theories. But if accepted, the Hindu theory of Karma gives the highest sense of responsibility to the citizen. No explanation or theory in regard to the ultimate nature and cause of things can be made proof against all logical difficulties. Our knowledge is necessarily finite and we cannot discover and resolve the mysteries of infinity. On the assumption of the soul as the basis of personality, it can be claimed that no theory can be formulated more in harmony with new laws of nature than the Hindu doctrine of Karma, It is application in the moral sphere of the law of conservation of energy as both the physicist's law and the doctrine of Karma may be looked upon as parts of the same universal law.

(It is not essential that the Editor agrees with all the poins of the article......Editor)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.